संगीत कला
जनवरी
फरवरी
१९४१
वार्षिक
२॥)
मूल्य
कला भवन लश्कर (ग्वालियर)

"SANGIT-KALA"

The best and the only illustrated monthly musical magazine of Gwalior State.

Aided and patronized by the Maharajas and Sardars of Gwalior and other States.

SUBSCRIPTION VERY NOMINAL.

ANNUAL RS. 2/8/- SINGLE COPY AS. -/4/-

It imparts a taste of Instrumental, vocal and Light music, amusing notations Enthrolling tunes, Sounds, Rythms. Dances and Dialogues written by the most prominent and famous modern writers of the art.

It is one of the best of its kind and should be read by all interested in music and dance.

It enjoys the unique position of being the first musical magazine in the Gwalior State, which meets the requirements of all interested in this art.

It chiefly aims at pushing forward the taste of music lovers and masses with some thing quite new every month.

The Sangit Kala thus is a useful Companion to "Kavis and Classical Singers".

It has been enthusiastically recommended by most of newspapers in India and this is enough to prove its value among the well known lovers of art and culture.

Therefore we hope that it will suffice you all and you shall help us by giving us more subscribers.

Sangit Kala Bhawan,

Laskar-Gwalior.

Printed by B. Nathuram Gupta at the Gokul Press, Hathras.
Published by P. Nandlal Sharma Lashkar, Gwalior.

संगीत-कला के नियम ।

(१) इसका वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होता है (२) इसका वार्षिक चन्दा २॥) है (३) इसका प्रकाशन अंग्रेजी महीने के प्रथम सप्ताह में होता है । (४) वर्ष के आरम्भ में एक महत्वपूर्ण विशेषांक प्रकाशित होता है । (५) कोई बात समझ में न आने पर जवाबी पत्र द्वारा पूछ लेना चाहिये । (६) वार्षिक चन्दा मैनेजर सङ्गीत कला भवन, लश्कर के पते पर भेजना चाहिए । (७) पत्र यदि वी० पी० से मंगाना हो तो वी० पी० का खर्चा ग्राहक के जिम्मे होगा । (८) लेखक महाशय स्वरलिपिकार हमारे तरीके पर स्वच्छ लिखकर भेजने की कृपा किया करें । (९) अस्वीकृत लेख पोस्टेज आने पर लौटाये जाते हैं । (१०) नियत समय पर पत्र न पहुँचने की सूचना मैनेजर को भेजनी चाहिये । (११) जो सङ्गीत प्रेमी १० ग्राहक बनाकर हमारे इस कार्य में योग लेंगे उनके शुभ नाम किसी भी अङ्क में सहर्ष छाप दिये जायेंगे ।

संगीत-कला के उद्देश्य ।

(१) सङ्गीत संसार की अन्धप्रथा को मिटा कर वास्तविक सङ्गीत का प्रचार करना (२) उन भूले भटके नवसिखों को जो जो तड़क-भड़क देख कर सङ्गीत से अनभिज्ञ प्रचारकों के चंगुल में फँसे हुए हैं वास्तविक सङ्गीत का दिग्दर्शन कराना (३) स्वर ज्ञान कराना, राग ज्ञान कराना (४) ताल ज्ञान कराना (५) नृत्यकला का दिग्दर्शन कराना (६) नाना प्रकार की कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि द्वारा हिन्दी व सङ्गीत साहित्य का मनोविनोद कराना (७) अन्ध प्रवाह को रोककर सङ्गीत की रक्षा करना (८) सङ्गीत शास्त्र का पूरा २ परिचय कराना । ये सङ्गीत-कला के मुख्य उद्देश्य हैं ।

सभी संगीत प्रेमियों को—

यह शुभ सन्देश सुना दीजिये कि अबकी बार ग्वालियर के "सङ्गील-कला"
पत्र का २४० पृष्ठ का बृहद विशेषांक "बिलावल अङ्क"
बड़ी शान के साथ निकाला गया है । सैकड़ों रुपये के
नृत्य आदि के ब्लाक बडे २ जानकारों से
बनवाये गये हैं ।

सम्पादक—सङ्गीत कला

विषय सूची 'सँगीत-कला' (विलावल अंक)

जनवरी, फरवरी सन् १९४१

परिशिष्टांक (फरवरी)

—:(*):—

विषय सूची 'संगीत-कला' (विलावल अंक)

जनवरी, फरवरी सन् १९४१

परिशिष्टांक (फरवरी)

—:(*):—

विलावल अंक

नाहं तिष्ठामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च ।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

जनवरी, फरवरी सन् १९४१	सम्पादक-नन्दलाल शर्मा	वर्ष ३ संख्या १,२

* वासुदेव प्रार्थना *

ले०-श्री० पूर्णेन्दु मिश्र व्याकरण शास्त्री)

वि कचेन्दीवरश्यामं, राधाधरविचुम्बनम् ।
ला स्यं प्रकुर्वतीं राधां, लोकतेयो मुहुर्मुहुः ॥१॥
व क्तिस्मगीतकां गीतां, संसारोदधितारिणीम् ।
ल सन्तं वेणुना कृष्णं, तं नमामि जगद्गुरुम् ॥२॥
अं शुकं पीतकं यस्य यस्सुषिरस्य वादकः ।
क मितक्रान्तया कृष्णस्तं नमामि मुरारिकम् ॥३॥

शून्य-संज्ञा ध्यान-वीणा, वेदना वरदान मेरा ।
ज्वार के उच्छ्वास से नित बढ़ रहा यह ऋण्य मेरा॥

चिर निराशा-चातकी से
लौ लगाये प्राण-'पी' से
श्रमित, अङ्कित, त्रसित, कम्पित
सघन घन में तृषित जी से

नयन के गीले कणों से भर गया हिय-गगन मेरा ।
वेदना वरदान मेरा ॥

रिक्त प्यासी प्रेम-प्याली
अस्त आशा अंशुमाली
ध्वंस के संकेत-सी है-
कल्पना आकाश लाली

आज जीवन-क्षितिज में है छागया स्वप्निल अँधेरा
वेदना वरदान मेरा ॥

हृदय बड़वानल प्रबल है,
ज्वलित खलभल चल-विचल है,
विरह-उष्ण-समीर से अब,
प्राण-सफरी अति विकल है,

बन गया जल आह से यह रुदन वह मृदु हास मेरा ।
वेदना वरदान मेरा ॥

अङ्ग राग पराग--रञ्जित,
नेह गंग तरङ्ग सञ्चित,
स्वप्न निर्मित कुञ्चिका से,
प्यार का उद्गार सञ्चित,

विमल अन्तर्पटल पर व्यञ्जित किया निर्गुण चितेरा ।
वेदना वरदान मेरा ॥

लेखक-
श्री० रामइकबालसिंह
'राकेश'

राग बिलावल का विवरण ।

(ले०--श्री यमुनाशङ्कर जी)

——:(*):——

श्लोक--रागो वेलावलीति प्रथित इह सदा मान्यतीव्र स्वरेषु ।
षड्जन्यास ग्रहोऽयं प्रकृति सुरुचिरो धैवतांशोगमंत्री ॥
कल्याणांगं दधानो विलसति विगयोर्वक्रता चात्रनित्यं ।
प्रातर्गेयोऽभिगी तो रमयति हृदयं शृण्वतामेष पूर्णः ॥
(कल्पद्रुमांकुरे)

दोहा--मृदु मध्यम तीवर सबहि सुर सोहत जेहि मांहि ।
धगवादी संवादि है, कहत बिलावल ताहि ॥
(चन्द्रकासार)

अल्हैया बिलावल ।

श्लोक--वेलावली रागमवरुस्त्वल्हैया ।
पूर्णा धवादी सहचारिगान्वितः ॥
मृदुर्निषादोऽभिमतोऽत्र किंचि ।
दारोहणे मध्यम वर्जितोऽयम् ॥
(कल्प द्रुमांकुरे)

दोहा—मृदुमध्यम सबतीखसुर, मध्यम सेन चढैया ।
कहुँ निषाद कोमल लगत, धग संवाद अल्हैया ॥
(चन्द्रकासार)

'राग बिलावल' थाट बिलावल से उत्पन्न होता है । इसकी जाती सम्पूर्ण है । इस राग में सब स्वर शुद्ध लगते हैं । इसका वादी स्वर धैवत व संवादी गन्धार है । इसका समय प्रात काल का प्रथम प्रथम प्रहर है, यह राग कल्याण के सदृश्य दिखाई देता है । इस लिये इसे कभी-कभी प्रातःकाल का कल्याण भी कहते हैं । बिलावल के आरोह में जब मध्यम छोड़ देते हैं और अवरोह में थोड़ा कोमल निषाद लेते हैं, तब उसे अल्हैया बिलावल कहते हैं । प्रचार में अधिक अल्हैया बिलावल ही सुनाई देता है ।

स्वरूप बिलावल

(सा, रेग, म, प, धनिसां । सां निध. प, मग, रेसा ।

'स्वरूप अल्हैया बिलावल'

सा, रे, गरे, गप, ध, निध, निसां । सां निध, प, धनिधप, मग, मरे, सा ।

मुख्याङ्ग

(गरे, गप ध, निसां)

थाट बिलावल तथा उससे उत्पन्न होने वाले राग

स्वरूप थाट बिलावल,

सा रे ग म प ध नि सां
सां नि ध प म ग रे सा

उत्पन्न होने वाले राग

१--शुद्ध बिलावल
२--अल्हैया बिलावल
३--शुक्ल बिलावल
४--देवगिरी
५--नट बिलावल
६--कुकुभ
७--मलुहा केदार
८--गुणकली
९--पहाड़ी
१०-यामिनी बिलावल
११-देशकार
१२-माड
१३-बिहाग
१४-लच्छा साख
१५-शंकरा
१६-दुर्गा
१७-हंस ध्वनि
१८-हिम कल्याण
१९-सर्पर्दा
२०-जलधार किदारा

स्वर विस्तार राग बिलावल

सा रे सा ऽ	ग म रे ऽ	ग प म ग	म रे सा ऽ	सा रे ग प
म ग म रे	ग प ध ग	प म ग म	रे ऽ सा ऽ	म रे ग प
ऽ ऽ ध प	म ग म रे	ग प ध नि	सां ऽ ध प	म ग म रे
सा ऽ ऽ ऽ	सां नि ध नि	सां ऽ ऽ ऽ	सां रें सां नि	ध प म ग
म रे ग म	प म ग म	रे सा ऽ ऽ	सा रे सा ऽ	ग म प ऽ
म ग म रे	सा ऽ ऽ ऽ			
प प ध नि	सां ऽ ऽ ऽ	सां रें गं रें	सां ऽ ऽ ऽ	रें सां ऽ ऽ
सां रें सां नि	ध प म ग	म रे ग म	प म ग म	रे सा ऽ ऽ

बिलावल मेल

(धीर शंकरा भरण मेल)

ले० श्री० लल्लन जी मिश्र 'ललन'

मेल बिलावल से रागों की उत्पत्ति ।

चौपाई–मेल बिलावल दुर्गा, रागा । माँड, पहाड़ी, और बिहागा ॥१॥
यमनी, अल्हैया, शुक्ल बिलावल । देवगिरी, अरु नट्ट–बिलावल ॥२॥
देशकार, नट, हेम–कल्याना । लच्छासाख, अरु ककुभ, बखाना ॥३॥
शुद्ध–बिलावल, उत्तम रागा । राग शंकरा, सुन्दर लागा ॥४॥
सरपरदा, जलधार-किदारा । दीपक, अरु गुणकली, प्रचारा ॥५॥
छन्द सोरठा–प्रगटत एते राग, शुद्ध स्वरन के मेल सों ।
लावत अति अनुराग, 'लालन' गुनि गावत जबहिं ॥१॥

बिलावल राग १

चौ०–पूरण, पूरण, जाती मानौ । धग नृप मंत्री अहैं बखानौ ॥१॥
'गा' बक्रन अवरोह बखाना । गायन प्रातः काल लुभाना ॥२॥
सदी बीस के ग्रन्थहु मानहिं । ऐते लक्षण गुणि जन जानहिं ॥३॥
दोहा– राग बिलावल नाम है, स्वर लागत 'मुनि' जान ।
मेल बिलावल सों बनत, 'लालन' करत बखान ॥१॥
छन्द सोरठा–मेल बिलावल को नहीं, नाम 'वेलावलि' राग ।
ग्रन्थ पुराने भाषहीं, गुनि जन लेहु विचारि ॥१॥

अल्हैया बिलावल २

दोहा–जबहिं बिलावल राग के अवरोहन में पाय ।
'नी' कोमल ह्वै जात है अल्हैया बनि जाय ॥

राग शुक्ल बिलावल ३

चौ०–मेल बिलावल से यह बनई । एक प्रकार बिलावल अहई ॥१॥
मध्यम बादी राग सुहावन । 'सा' संवादी चित्त लुभावन ॥२॥
प्रातःकाल को राग कहावै । मनमें सुन्दर मोद बढ़ावै ॥३॥
कोइ–कोइ गुणी बखानत ऐसा । निम्न लिखित दोहा है जैसा ॥४॥
दोहा–राग बिलावल में जबहिं मिलै किदारा राग ।
'लालन' ह्वै के मिलत ही शुक्ल बिलावल राग ॥१॥

नट–बिलावल राग ४

चौ०–जबहिं बिलावल अरु नट मिलई। नट्ट–बिलावल ताकंह भनई ॥१॥
बादी स्वर मध्यम है याको । 'षडज' संवादी सुन्दर बांको ॥२॥
मध्य दिवस मँह गायन करई। मधुर मधुर स्वर सब उच्चरई ॥३॥

दोहा–मेल बिलावल सों बनैं लागै नटकी तान ।
नट्ट–बिलावल होयगो 'लालन' करैं बखान ॥१॥

यमिनी बिलावल राग ५

चौ०–द्वै मध्यम को होय प्रयोगा। यमन–बिलावल को संयोगा ॥१॥
'सा' बादी अति सुन्दर भावा। 'पा' संवादी उत्तम गावा ॥२॥

दोहा–प्रथम प्रहर दिन गान की 'लालन' करहिं बखान ।
यमन–बिलावल विषं, ऐते लक्षण जान ॥१॥

दुर्गा राग ६

चौ०–औडुव औडुव दुर्गा मानत। 'गनि' स्वर यामें बर्जित जानत ॥१॥
मध्यम बादी सबै बखाना। कछु जन बादी पंचम माना ॥२॥
संवादी स्वर षडज कहावै । 'लालन' मध्य निशा को गावै ॥३॥

दोहा–दुर्गा दोय प्रकार कर, प्रथम बिलावल मान ।
दूसर प्रगट खमाज सों, नीं मृद औडुव जान ॥१॥

माँड राग ७

चौ०–वक्र रूप है याको भाई। मालव देश को राग कहाई ॥१॥
'स म' नृप मंत्री यहि में लागै। 'लालन' गायन अति अनुरागै ॥२॥

पहाड़ी राग ८

चौ०–सा बादी अति सुन्दर सोहै । 'पा' संवादी मन को मोहै ॥१॥
'मानी' स्वर दुर्बल हैं यामें । 'मा' मृदु सब तीखे स्वर जामें ॥२॥

दोहा–थाट बिलावल सों, बनै, नाम पहाड़ी राग ।
'लालन' सुन्दर भाषही, क्षुद्र प्रकृति को राग ॥१॥

बिहाग राग ९

चौ०-मेल बिलावल राग बिहागा। 'रीधा' स्वर आरोह न लागा ॥१॥
औडुव-पूरण जाति कहाई। 'गनि' बादी संबादि सुहाई ॥२॥
'जुगुल' प्रहर रातिकर होवै। संग सितारा ढोलक होवै ॥३॥
'लालन' राग न में यह सुन्दर। सुनि के मोहै तुरत पुरन्दर ॥४॥

देवगिरी राग १०

चौ०-उतरत 'धग' स्वर दुर्वल लागत। 'सप' बादी संबादि बतावत।
'लालन' देवगिरी है नामा। मेल बिलावल सुन्दर जामा ॥२॥

देशिकार राग ११

चौ०-उपजत थाट बिलावल ते यह। मध्यम नी स्वर बर्जित कह।
बादी स्वर धैवत कहं जानौ। संवादी गंधार बखानौ।
औडुव-औडुव, गायन करई। एक बात यह ध्यान में धरई।
सावधान ह्वै गायन करई। नहीं भुपाली तुरतहि बनई।

नट राग १२

चौ०-देशिकार की उतपति है जस। नट हू की तुम जानहु है तस।
आवत 'धग' नहिं परै लखाई। जाते समय पूर्ण है जाई।
बादी स्वर मध्यम मन भावे। स्वर संबादी षडज कहावे।
कहुँ कहुँ 'नी' कोमल है लागै। 'लालन' रात्रिहिं गायन लागे।

हेम कल्यान राग १३

चौ०-मेल बिलावल हेम कल्याना। 'सप' बादो संबादि बखाना ॥१॥
'धानी' दुर्बल आरोहन में। 'लालन' गायन मध्य निशामें ॥२॥

लच्छासाख राग १४

चौ०-द्वै निषाद को होय प्रयोगा। कछुक झिंझोटी कर है योगा।
दोहा-'धग' बादी संबादि कर मेल बिलावल मीत।
सोहत लच्छासाख है 'लालन' प्रातः गीत ॥१॥

ककुभ राग १५

चौ०–राग ककुभ को मेल बिलावल। जयजयवंती कछुक मिलावल ।
मध्यम स्वर बादी को जानौ । षडज संवादी यामें मानौ ।
द्वै निषाद को करै प्रयोगा। 'लालन' 'सम' 'सप' स्वर को योगा ।।३।।

शंकरा राग १६ (प्रथम प्रकार)

दोहा–'रीमा' स्वर बर्जित करहु औडुव जाति कहाय ।
'धग' नृप मंत्री सोहि है गायन दिनहिं सुहाय ।।२।।

शंकरा राग (द्वितीय प्रकार)

चौ०–राग शंकरा सुन्दर मोहै । मध्यम बर्जित यामें सोहे ।।१।।
'गनि' बादी संबादी मानौ । 'लालन' गायन मध्य निश जानौ ।।२।।

सरपरदा राग १७

दोहा–स्वर शुध सुन्दर लांगहीं सरपरदा है नाम ।
'धग' नृप मंत्री बाजि है दिनके प्रथमहिं याम ।।१।।

जलधार किदारा राग १८

दोहा–मानी स्वर नहिं लागहीं यहि मल्हार संयोग ।
राति दूसरे प्रहर में 'लालन' गायन योग ।।१।।
चौ०–मा सा' स्वर नृप मंत्री मानौ। यह लचण जलधर के जानौ।
औडुव औडुव जाति कहाई । मेल बिलावल जानहु भाई ।।३।।

मलुहा किदारा राग १९

चौ०–मलुहा लच्छन सुनिये भाई । रात्रि दूसरे प्रहर में गाई ।
श्याम कमोद किदार संयोगा। चढ़त रिषभ धैवत नहिं होगा।
'मस' वादी संबादि कहावत । मेल बिलावल 'लालन' गावत ।

गुणकली राग २०

चौ०–राग गुणकली पूरण मानहु । सब स्वर शुद्धहिं यामें जानहु ।
'सापा' स्वर नृप मंत्री होई । ढ़ग बिलावल प्रगटत सोई ।
'लालन' सुन्दर राग सुहावन । मेल बिलावल चित्त लुभावन ।

—————

स्वरलिपियां

'राग अल्हैया बिलावल'

सरगम (स्वर-मालिका)

दो०-ताल बद्ध रचना रुचिर, राग-स्वरों की होय।
ताहि राग सरगम कहत, भनत गुणी सब कोय॥

किसी राग के रूप के अनुसार ही स्वरों की ताल सहित
सुन्दर रचना को उस राग की सरगम कहते हैं।
यह स्वरमालिका भिन्न २ तालों में होती हैं,
इससे विद्यार्थी राग का स्वरूप तथा
स्वर ज्ञान बड़ी आसानी से
प्राप्त कर सकते हैं।
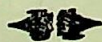
राग अल्हैया बिलावल !

स्वर नं० १ मालिका ताल त्रिताल मात्रा (१६)

कुमारीसुमन उमड़ेकर माधव सङ्गीत महाविद्यालय (लश्कर) ग्वालियर

स्थायी

					म						प				
ग	ऽ	ग	रे	ग	प	ध	नी̱	ध	प	ध	ग	प	म	ग	मरे
×				२				०				३			
म					नी					म					म
ग	प	ध	नी	सां	ध	नी̱	ध	प	ध	ग	प	मग	मरे	ग	प
×				२				०				३			

अन्तरा

	म					म									
ग	प	ग	म	रे	ग	प	ध	नी̱	ध	नी	सां	–	रें	सां	–
३				×				२				०			
गं	मं	पं	गं	मं	रें	सां	ध	नी̱	ध	प	ध	ग	प	म	(म)
३				×				२				०			
ग–	मरे	ग	प												
३															

राग बिलावल

❁ अल्हैया ❁

नं० २ स्वर मालिका ताल त्रिताल

कुमारी कमल केतकर शिष्या पं० बालाभाऊ उमड़ेकर जी

स्थायी

२	०	३	× ग रे
ग प ध नी	ध नी सां नी	ध प म ग	प ऽ म ग
म रे सा ऽ	नि़ ध़ ऽ नी़	सा ऽ ग रे	सा ऽ, ग रे

अन्तरा

ग प ध नी	सां ऽ सां रें	गं पं मं गं	मं रें सां ऽ
गं रें सां नी	ध नी सां ऽ	नि सां सां रें	सां नी ध प
ध नी ध प	म ग प ऽ	म ग म रे	सा ऽ, ग रे

—o—

लक्षण-गीत

लक्षण-गीत

दोहा—पूरा विवरण गीत में, किसी राग का होय।
ताहि कहत तिस राग का, लक्ष गीत सब कोय॥

जिस गीत में किसी का पूरा-पूरा विवरण (वादी-सम्वादी अमय आदि) होता है, वह उस राग का लक्षण गीत कहलाता है। जो आगे उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा। यह लक्षण गीत जिस राग का होता है, उसी राग में गाया जाता है, इस लक्षण गीत के द्वारा राग के स्वरूप के ज्ञान के साथ साथ उस राग का पूरा-पूरा हाल भी ज्ञात हो जाता है।

राग अल्हैया बिलावल

लक्षणगीत

(कुमारी कमलकेतकर, शिष्या पं० बालाभाऊ जी उमड़ेकर)

गीत त्रिताल

स्थायी—राग अल्हैया गुनिजन बरणत ।
शुद्ध स्वरन का मेल बनावत ॥
प्रथम प्रहर प्रातः समय गावत ।
अन्तरा—गा सहचर है वादी धैवत ।
षाड़व सम्पूरन मध्यम बरजत ।

स्थायी

×		सां		२				०				३		नी	
सां	–	ध	प	म	ग	म	रे	ग	प	नीध	नी	सां	सां	सां	सां
रा	ऽ	ग	अ	ल्है	ऽ	या	ऽ	गु	नि	जऽ	न	ब	र	न	त

×				२				०				३			
सां	रें	सां	सांनी	ध	प	मग	मरे	ग	म	प	मग	म	रे	सा	सा
शु	ऽ	द्ध	सुऽ	र	न	काऽ	ऽऽ	मे	ऽ	ल	बऽ	ना	ऽ	व	त

×				२				०				३			
सा	म	ग	प	प	प	नी	ध	नी	सां	सां	–	सांरें	सांनी	धप	गप
प्र	थ	म	प्र	ह	र	प्रा	ऽ	त	स	में	ऽ	गाऽ	ऽऽ	वऽ	तऽ

अन्तरा

×				२	नी	नी		०				३			
ग	प	नीध	नी	सां	सां	सां	–	सां	गंरें	गं	मं	रें	–	सां	सां
गा	ऽ	सऽ	ह	च	र	है	ऽ	वा	ऽऽ	दी	ऽ	धै	ऽ	व	त

×				२				०				३			
पं	–	मं	गं	मं	रें	सां	सां	धनी	सांरें	सांनी	धप	धनी	धप	मग	प
षा	ऽ	ड	व	सं	पू	र	न	मऽ	ऽऽ	ध्यऽ	मऽ	बऽ	रऽ	जऽ	त

——*——

राग बिलावल

लक्षणगीत (ताल त्रिताल)

(रचयिता-श्री० नन्दनदन जी 'झा')

स्थायी-राग बिलावल यहि विधि गावत।
शुद्ध स्वरन का मेल मिलावत ॥
अन्तरा-धैवत वादी गा सम्वादी ।
प्रातः समय अरु प्रथम प्रहर में।
अष्ट भेद अति मनहिं रिझावत।

स्थायी

०				३				×				२			
सां	-	ध	प	म	ग	म	रे	ग	म	प	मग	म	रे	सा	-
रा	ऽ	ग	बि	ला	ऽ	व	ल	य	ह	वि	धिऽ	गा	ऽ	व	त
०				३				×				२			
सा	-	ग	मरे	ग	प	नि	नि	सां	-	रें	सां	सांरें	सांनि	धप	मग
शु	ऽ	द्ध	स्वऽ	र	न	को	ऽ	मे	ऽ	ल	मि	लाऽ	ऽऽ	वऽ	तऽ

अन्तरा

०				३				×				२			
प	-	नि	नि	सां	-	सां	-	सां	गं	गं	मं	गं	रें	सां	-
धै	ऽ	व	त	बा	ऽ	दी	ऽ	गा	ऽ	स	म	वा	ऽ	दी	ऽ
०				३				×				२			
प	-	ध	नि	सां	-	सां	सां	सां	गं	गं	मं	गं	रें	सां	-
प्रा	ऽ	त	स	म	य	अ	रु	प्र	थ	म	प्र	ह	र	में	ऽ
०				३				×				२			
ग	-	म	रे	प	नि	नि	नि	सां	रें	सां	सां	सांरें	सांनि	धप	मग
अ	ऽ	ष्ट	भे	ऽ	द	अ	ति	म	न	हिं	रि	झाऽ	ऽऽ	वऽ	तऽ
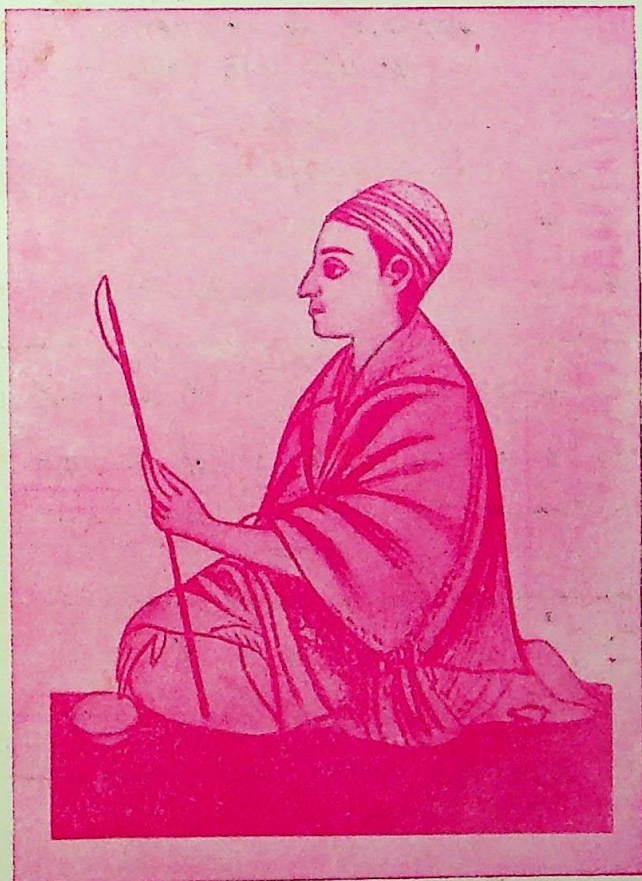
स्व० सङ्गीत सम्राट श्री० तानसेन जी

G. P. H

भारतीय सङ्गीत पद्धति के पुनरोद्धारक
स्व० पं० विष्णुनारायण भातखण्डे साहिब ।

G. P. H.
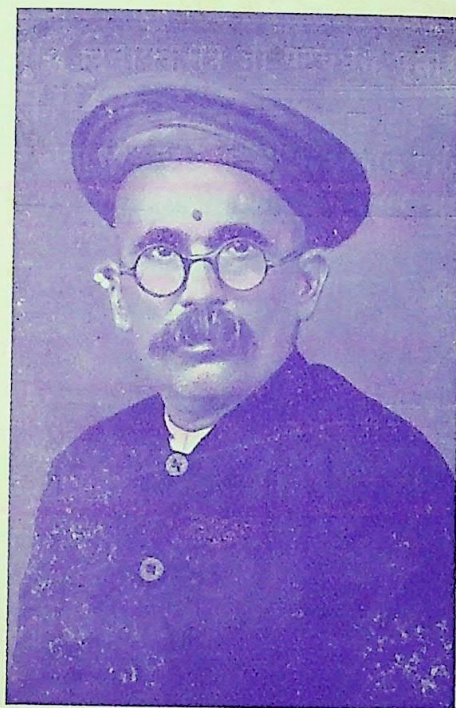
श्री० राजाभैया पूछवाले
प्रिंसिपल माधव म्यूज़िक कालेज,
ग्वालियर।

आपकी गिन्ती सङ्गीत के प्रकाण्ड विद्वानों में है। आपका एक तराना पृष्ठ १७६ पर देखिये। इस अङ्क का सम्पादन आपही के द्वारा हुआ है।

—o—

श्री० विनायकराव जी पटवर्धन पूना

आप सङ्गीत के माने हुये विद्वान हैं। आपने सङ्गीत की सेवा कर के जो ख्याति प्राप्ति की है वह सराहनीय है। हमारे पत्र पर आपकी विशेष कृपा है। आपकी एक स्वरलिपि जो आपने अपनी पद्धति के अनुसार दी है पृष्ठ २२० पर देखिये।

--o--

G. P. H.
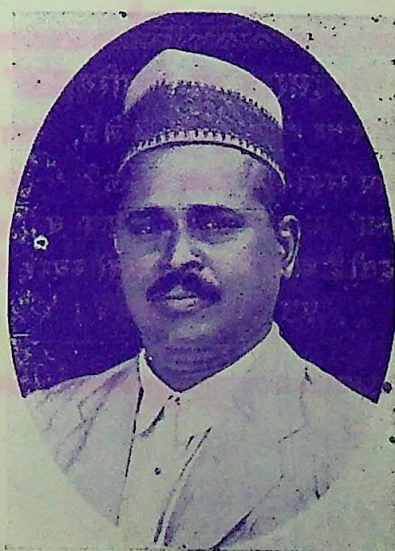
श्री० बा० जगनप्रसाद जी रईस व ठेकेदार, मुरार

आप एक उदीयमान व्यक्ति हैं आपने 'सङ्गीतकला' पत्र को सहायता देकर अपनी उदारता का परिचय दिया है।

श्री० हंसराज जी कटारिया

प्रिंसिपल हंस म्यूज़िक कालेज, मोगा।

आप सङ्गीत के योग्य व्यक्ति हैं। 'सङ्गीत-कला' के प्रति आपकी कृपा बनी ही रहती है आपकी एक पंजाबी स्वरलिपि पृष्ठ २३८ पर देखिये।

--०--

G. P. H.
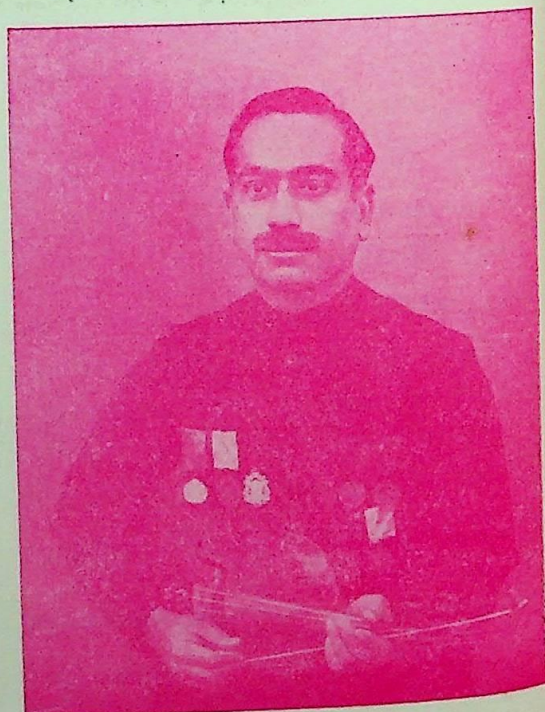
ख्याल

ख्याल

ख्याल यह एक प्रकार का गीत होता है। यह गीत करीब ४०० वर्ष पूर्व से प्रसिद्ध है। इसका प्रचार मुसलमानी ज़माने से मुसलमान गायक लोगों ने किया है। ख्याल का अर्थ विचार है।

आगे चल कर ख्याल के दो भेद किये गये, एक बिलम्बित दूसरा द्रुत। जो ख्याल बिलम्बित लय में एक ताल, तिलबाड़ा, झुमरा, आड़ा चौताल इत्यादि तालों में गाये जाने लगे वे बड़े ख्याल के नाम से प्रसिद्ध हुये, और जो द्रुत लय में त्रिताल इत्यादि ताल में गाये जाने लगे वे छोटे ख्याल के नाम से प्रसिद्ध हुए। छोटे ख्याल का विषय प्रायःश्रृंगारिक होता है और बड़े ख्याल का विषय विचारशील तथा ईश्वर भक्तिपूर्ण होताहै। छोटे ख्याल का प्रचार अमीर खुशरो ने किया था। इसकी उत्पत्ति कव्वाली से है, और इसका ढंग ठुमरी के समान कव्वाली से मिलता जुलता है। इसकी गति जल्द होती है और बड़े ख्याल की गति गम्भीर ढाँय होती है। आज कल ठुमरी तथा छोटे ख्याल को एक ही मानते हैं।

ठुमरी

यह एक अत्यन्त लोकप्रिय गीत होता है। इसकी रचना छोटी और श्रृंगारिक होती है। इसमें छोटी मुरकियां व खटके होते हैं। ठुमरी के बोलों को तरह तरह की छोटी छोटी तानों में, मुरकियां व खटके के साथ गाकर गीत के अर्थ को जतलाना यह ठुमरी गायन की विशेषता है। इसमें आवाज़ नाजुक कोमल व मधुर होनी चाहिये बहुत ज़ोर के साथ तानें लेना इसमें उचित नहीं हैं। ठुमरी और छोटे ख्याल को एक ही समान समझना चाहिये।
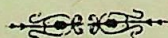
राग बिलावल

अल्हैया

शब्दकार--
श्री नारायण स्वामी

(त्रिताल)

स्वरलिपिकार--
के० पी० अग्रवाल 'सेवक'

गीत

करु मन नन्द नँदन को ध्यान ।

स्थायी–यह अवसर तोहे फिर न मिलैगो, मेरो कहो अब मान ॥

अन्तरा–घूँघर वाली अलकें मुखपे, कुंडल झलकत कान ।

"नारायण" अलसाने नैना, झूमत रूप निधान ॥

स्थायी–

०				३				×				२			
										सां	ध				
सं	सं	ध	प	म	ग	म	रे	ग	प	नि	नि	सं	–	–	स
क	रु	म	न	नं	ऽ	द	नं	द	न	को	ऽ	ध्या	ऽ	ऽ	न

०				३				×				२			
ग	म	प	मग	म	रे	स	स	सं	सं	गं	रें	सं	नि	ध	नप
य	ह	अ	वऽ	स	र	तो	हे	फि	र	न	मि	ले	ऽ	गो	ऽऽ

०				३				×				२			
सं	–	ध	प	मग	म	र	स	पप	धनि	संरं	गंरें	संनि	धप	मग	मर
मे	ऽ	रो	क	होऽ	ऽ	अ	ब	माऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	नऽ

अन्तरा–

०				३				×				२			
प	–	नि	नि	सं	–	सं	–	ध	नि	धनि	सं	सं	सं	ध	नप
घूं	ऽ	घ	र	वा	ऽ	ली	ऽ	अ	ले	केंऽ	ऽ	मु	ख	पे	ऽऽ

०				३				×				२			
सं	-	गं	मं	रें	रें	सं	सं	पप	धनि	संरं	गंरं	संनि	धप	मग	मरे
कुं	ऽ	ड	ल	झ	ल	क	त	काऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	नऽ
०				३				×				२			
ग	म	प	मग	म	रे	स	स	सं	सं	गं	रं	सं	नि	ध	प
ना	ऽ	रा	ऽऽ	य	ण	अ	ल	सा	ऽ	ने	ऽ	नै	ऽ	ना	ऽ
०				३				×				२			
सं	-	ध	प	मग	म	रे	स	पप	धनि	संरें	गंरें	संनि	धप	मग	मरे
भू	ऽ	म	त	रुऽ	ऽ	प	नि	धाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	नऽ

(*)
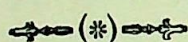
सङ्गीत शास्त्र विज्ञान।

सङ्गीतकला भवन ने निश्चय कर लिया है कि वह सङ्गीत प्रेमियों के सामने सङ्गीत की ऐसी सामिग्री उपस्थित करता रहे, जिसकी माँग व उत्कट इच्छा सङ्गीत प्रेमियों को दिन रात लगी रहती है। फल स्वरूप उपरोक्त पुस्तक का प्रथम भाग हाल ही में तैयार किया गया है इसके लेखक श्री सम्पादक "सङ्गीत कला" हैं,पुस्तक सङ्गीत प्रेमियों के बड़े कामकी चीज़ सिद्धिहोगी। इसमें सङ्गीत का आदि से लेकर अन्त तलक सविवरण पूरा २ हाल वर्णन किया गया है। बारीक से बारीक बात भी छुटने नहीं पाई है। सङ्गीन वर्णत स्वर वर्ण, थाट व्यवस्था, प्राचीन पद्धति, रागों का विकाश तथा रागों में परिवर्तन आदि बडे २ गहन विषय लेखक ने अपने निज अनुभव से लिखे हैं। पुस्तक कई भागों में प्रकाशित होगी। अभी इसका प्रथम भाग तैयार है। इस पुस्तक की जानकारी के बाद आप बड़े २ सङ्गीतज्ञों से बिना गाये बजाये ही बाज़ी ले सक्ते हैं। प्रथम भाग का मूल्य पृष्ठ संख्या १५० से अधिक होने पर भी सिर्फ १) रु० रक्खा है। आर्डर लौटती डाक से दीजिये। पुस्तक हाथों हाथ बिकने की सम्भावना है। देर करने पर दूसरे संस्करण तक ठहरना पड़ेगा।

पताः-सङ्गीत कला भवन लश्कर (ग्वालियर)

राग बिलावल

❀ अल्हैया ❀

स्वरकार–श्री० श्यामसुन्दरजी "सङ्गीत-भूषण"

गीत त्रिताल

स्थायी––लागी रे लगनियाँ मोहन सों ।
सुन्दर वदन कमल दल लोचन ॥
नन्द जू को छैल चिकनियां ।
अन्तरा–कछु टोना सो डाल गयोरी ।
कैसे भरन जाऊँ पनियाँ ॥
"कृष्णदास" की प्यास बुझे जब ।
निरखो गिरिकी धरनियां ॥

स्थायी–

०				३				×				२			
			ग	प	धनि	सां	नि	सां	नि	ध	प	ध	नि	ध	प
			ा	ऽ	गीऽ	ऽ	ल	ग	नि	याँ	ऽ	मो	ऽ	ह	न
म	ग	रे	ग	प	धनि	सां	नि	सां	नि	धनि	सांरें	सांनि	धप	मग	रेसा
सों	ऽ	ऽ	ला	ऽ	गीऽ	ऽ	ल	ग	नि	याँऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सा	–	ग	रे	सा	रे	सा	सा	ध	ध	ध	प	धनि	सां	नि	सां
सु	ऽ	न्द	र	ब	द	न	क	म	ल	द	ल	लोऽ	ऽ	च	न
सां	रें	गं	रें	सां	नि	ध	नि	धनि	सांरें	सांनि	धप	धनि	धप	मग	रेग
न	न्द	जू	को	छै	ऽ	ल	छि	कऽ	निऽ	यांऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

मप मग रेसा ग	प धनि सां नि	सां नि सांरें गरें	सांनि धप मग रेसा
ऽऽ ऽऽ ऽऽ ला	गी रेऽ ऽ ल	ग नि यांऽ ऽऽ	ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ

अन्तरा

०	३	×	२
ग ग ग –	प – ध प	धनि सां सां सां	सां रें सां –
क छु टो ऽ	ना ऽ सा ऽ	डाऽ ऽ ल ग	यो ऽ री ऽ
ध नि ध नि	सां सां सां –	सां रें सां नि	ध नि ध प
कै ऽ से भ	र न जा ऽ	ऊँ ऽ ऽ ऽ	प नि याँ ऽ
ग – ग रे	ग ध प –	म ग म रे	सा रे सा सा
कृ ऽ ष्ण दा	ऽ स की ऽ	प्या ऽ स बु	झे ऽ ज ब
ग ग ग –	प ध नि रें	सां सां सांसां गरें	सांनि धनि सांरें सांनि
नि र खों ऽ	गि रि के ध	र नि याँऽ ऽऽ	ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ
धप मग रेसा, ग	प धनि सां नि		
ऽऽ ऽऽ ऽऽ, ला	गी रेल ऽ ग		

——*——

राग बिलावल ।

(त्रिताल मात्रा १६)

(शब्दकार तथा स्वरकार—मास्टर मूलचन्द जी बारेठ, उनियारा)

स्थायी—अब चरनन तजि जाऊं कहां अब । आप दया मय स्वामी ॥
अन्तरा—जब जब भीर पड़ी भगतन पै । तुम हीं आये स्वामी ॥

स्थायी

३				×				२				०			
ग	म	प	ग	म	ग	रे	सा	नि ध	नी	सां	नी	ध	प	मग	मरे
अ	ब	च	र	न	न	त	जि	जा	ऽ	ऊ	क	हां	ऽ	अऽ	बऽ
ग	प	ध	नी	सां	–	सां	–	सांसां	गंरें	सांनी	धनी	सांनी	धप	मग	रेसा
आ	ऽ	प	द	या	ऽ	म	य	स्वा	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मीऽ	ऽऽ

अन्तरा

३				×				२				०			
प	प	ध	नी	सां	ऽ	सां	ऽ	सां	रें	गं	मं	गं	रें	सां	–
ज	ब	ज	ब	भी	ऽ	र	प	ड़ी	ऽ	भ	ग	त	न	पै	ऽ
सां	नी	ध	प	म	ग	रे	सा	सांसां	गंरं	गंरं	सांनी	धप	मग	रेस	नीसा
तु	म	ही	ऽ	धा	ऽ	ये	ऽ	स्वा	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	मीऽ	ऽऽ

—※—

राग बिलावल !

अल्हैया

स्वरकार व शब्दकार--यशवन्त राव खाँड़ेकर सङ्गीत विशारद
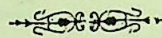
स्थायी--बनवारी रे, गिरवर धारी ।
कृष्ण मुरारी नटवर धारी ॥
अन्तरा--तुम दीनन के दीनानाथ,
कृपा करो तुम वारी ॥

स्थायी

ग
ब

३				×				२				०			
प	धनि	सां	नि	सां	–	–	–	सां	नि	ध	प	म	ग	रे	ग
न	वाऽ	ऽ	री	रे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	व
प	धनि	सां	नि	सां	–	–	–	सां	रें	सां	नि	ध	प	मग	मरे
न	वाऽ	ऽ	री	रे	ऽ	ऽ	ऽ	गि	र	व	र	धा	ऽ	रीऽ	ऽऽ
ग	म	प	मग	म	ग	म	रे	गप	पधनि	ध	प	म	ग	मरे	ग
कृ	ऽ	ष्ण	मुऽ	रा	ऽ	री	ऽ	नऽ	टऽऽ	व	र	धा	ऽ	रीऽ	व
प	पध	निसां	नि												
न	वाऽ	ऽऽ	री												

अन्तरा

३				×				२				०			
ग	प	नी	नी	सं	सं	सं	–	सं	गंरें	गं	मं	गं	रें	सं	–
तु	म	दी	ऽ	न	न	के	ऽ	दी	ऽऽ	ना	ऽ	ना	ऽ	थ	ऽ

३				×प			ध	२				०			
ग	म	रे	रे	ग	प	ध	नी	संरें	संनी	धप	मग	गप	मग	रेस	ग
कृ	पा	ऽ	क	रो	ऽ	तु	मऽ	बाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ब

तानें स्थायी

२				०					
सारे	गप	धनी	संनी	धप	मग	रेसा,	ब		

२				०					
गप	धनी	संरें	सांनी	धप	मग	रेस	ब		

×				२				०				
सरे	गप	धनी	संरें	मरें	संनी	धप	मग	रेग	पध	नीसं	ब	

तानें अन्तरा

२				०					
गप	धनी	संरें	संनी	धप	गप	धनी	सांऽ		

×				२				०				
संरें	गरें	सांनी	धप	धनी	संनी	धप	मग	रेस	गप	धनी	संऽ	

३				×				०				०			
संरें	गरें	संनी	संरें	संनी	धनी	संनी	धप	मप	धनी	धप	मग	रेग	पध	नीसां	धनि

३					
सांऽ	तुम	दी	ऽ		

---*---

राग अल्हैया बिलावल

रचियता–श्री० नीलकंठराव वोबड़े, माधव सङ्गीत विद्यालय लश्कर (ग्वालियर)

गीत–

स्थायी––आवो आवो सावलियाँ ।
अब क्यों मोहि सतावो ॥
अन्तरा–निस दिश तुमरा ध्यान लगावत ।
तुम बिन मोरा जिया घबरावत ॥

स्थायी–

०				३				×				२			
सांरें	सांसां	धनि	धप	मग	रेग	म	प	म	–	–	म	रे	रे	सा	–
आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	वो	आ	वो	ऽ	ऽ	साँ	व	लि	याँ	ऽ
मम	गरे	ग	–	प	–	ध	नि	सां	–	ध	प	धनि	धप	म	ग
अऽ	बऽ	क्यों	ऽ	मो	ऽ	हि	स	ता	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	वो	ऽ

अन्तरा–

०				३				×				२			
प	प	नि	(ध) नि	सां	सां	सां	–	सां	गंरें	गंरें	सां	गं	रें	सां	सां
नि	स	दि	न	तु	म	रे	ऽ	ध्या	ऽऽ	न	ल	गा	ऽ	व	त
गं	मं	पं	गं	मं	रें	सां	–	ध	नि	सां	रें	सांरें	सांसां	ध	प
तु	म	बि	न	मो	ऽ	रा	ऽ	जि	या	घ	व	राऽ	ऽऽ	व	त

राग बिलावल

(अल्हैया)

ताल त्रिताल (मध्य लय)

(रचियता व स्वरकार—श्री० बाल गणेश जी आठवले, सूरत)
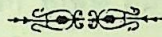
-गीत-

स्थायी-सुमना, नित भज साँब सदा शिव ।
पतीत पावन, पशु पति, त्री नयना ॥
अन्तरा-धन दौलत सब उनकी माया ।
मात पिता जगत झूट सपना ॥ १ ॥

स्थायी

०				३				×				२			
नी	ध	प	–	ग	रे	प	म	ग	रे	सा	सा	रेग	प	म	ग
सु	म	ना	ऽ	नि	त	भ	ज	साँ	ऽ	ब	स	दाऽ	ऽ	शि	व
ग	प	प	नी	ध	नी	सां	सां	ध	नी	सां	रें	सां	सां	धप	मग
प	ती	त	पा	व	न	प	शु	प	ति	भी	ऽ	न	य	नाऽ	ऽऽ

अन्तरा

०				३				×				२			
ग	ग	म	रे	ग	प	नी	ध	सां	सां	सां	–	नि	रें	सां	–
ध	न	दौ	ऽ	ल	त	स	ब	उ	न	की	ऽ	मा	ऽ	या	ऽ
निसां	रेंगं	रें	रें	सां	–	नि	रें	सां	नि	ध	प	नी	धप	गम	रेग
माऽ	ऽऽ	त	पि	ता	ऽ	ज	ग	त	झू	ऽ	ट	स	पऽ	नाऽ	ऽऽ

राग बिलावल

(अल्हैया)

रचयिता–श्री० ए०एम० कोठारी, माधव सङ्गीत विद्यालय, लश्कर (ग्वालियर)

–गीत–

स्थायी––प्रभु तुम हो एक विधाता।
सब दुनियाँ के दुख हरता ॥
अन्तरा––कोई पुकारत कृष्णमुरारी।
कोई पुकारत श्याम बिहारी ॥

स्थायी

प
ग
प्र

३				×				२				०			
प	धनि	सां	नि	सां	–	–	–	सां	रें	सां	सां	ध	धनि	प	नि
भु	तुऽ	ऽ	म	हीं	ऽ	ऽ	ऽ	ए	ऽ	क	वि	धा	ऽऽ	ता,	स

३				×				२				०			
	म						म								प
धप	ग	–	म	ग	–	–	रे	ग	म	प	म	ग	रे	सा	ग
बऽ	दु	ऽ	नि	याँ	ऽ	ऽ	ऽ	के	ऽ	दु	ख	ह	र	ता,	प्र

अन्तरा

३				×				२				०			
प	–	नि	नि	सां	–	सां	सां	सां	गं	गं	मं	गं	रें	सां	–
को	ऽ	ई	पु	का	ऽ	र	त	कृ	ऽ	ष्ण	मु	रा	ऽ	री	ऽ

३				×				२				०			
															प
गं	मं	पं	गं	मं	रें	सां	सां	धनि	सांरें	सांनि	धप	धनि	धप	मग,	ग
को	ऽ	ई	पु	का	ऽ	र	त	श्याऽ	ऽऽ	मऽ	बिऽ	हाऽ	ऽऽ	रीऽ,	प्र

––※––

राग बिलावल

(शब्दकार व स्वरकार–श्री० रणछोर नारायण 'व्यास')

गीत त्रिताल

स्थायी–जाय कहों अब नन्दबबा सों।
मानत नाहीं कुँवर कन्हैया ॥
अन्तरा–मैं जल जमुना भरन जात ही।
बीच डगर मोरी बैयां मरोरी।
ऐसो ढीट लँगरवा तेरो।

स्थायी

०	३	×	२
धनि सांरें सां नि	ध प मग मरे	ग म प ग	म रे सा –
जाऽ ऽऽ य क	हूं ऽ अऽ बऽ	नं ऽ द : ब	बा ऽ सों ऽ
० नि ग	३ ध	×	२
सा – ग रे	ग प नि नि	सां रें सां नी	ध प मग मरे
मा ऽ न त	ना ऽ हीं ऽ	कुँ व र क	न्है ऽ याऽ ऽऽ

अन्तरा

०	३	× नि सां रें	२
प – नि नि	सां सां सां –	सां गं गं मं	गं रें सां सां
मैं ऽ ज ल	ज मु ना ऽ	भ र न जा	ऽ ति ही ऽ
०	३	×	२
सां – ध प	म ग म रे	ग म प मग	म रे सा –
बी ऽ च ड	ग र मो री	बै ऽ यां मऽ	रो ऽ री ऽ
०	३	×	२
सं – गं मं	गं रें सां सां	सां रें सां –	सांरें सांनि धप मग
ऐ ऽ सौ ऽ	ढी ऽ ट लं	ग र वा ऽ	तेऽ ऽऽ रोऽ ऽऽ

जाऽ ऽऽ य क	हूं पप धनि सांऽ	पप धनि सांरें गंरें	सांनि धप मग रेस
जाऽ ऽऽ य क	३ हूं ऽ पप धनि	× सांरें गंमं पंमं गंरें	२ सांनि धप मग रेस

तानें स्थायी

० मैं ऽ ज ल	३ ज म ना ऽ	× भ र सांसां गंरें	२ सांनि धप मग रेस

तानें अन्तरा

,, ,, ,, ,,	,, ,, ,, ,,	× भ र गंगं रेंसां	२ निध पम गरे साऽ
,, ,, ,, ,,	,, ,, ,, ,,	× गंमं पंपं मंगं रेंसां	२ निध पम गरे सासा
मैं ऽ ज ल	३ सांसां गंरें सांनि धनि	× सांऽ, पंपं मंगं रेंसां	२ निध पम गरे साऽ

लेखमाला

नैसर्गिक गान और संगीत कला

(ले०-प्रोफेसर लल्लूलाल गन्धर्व म्यूज़िक रिसर्चस्कालर पटना सिटी)

वास्तव में गाना जीवधारियों की एक अवस्था का सूचक है। जो कि उल्लास के समय उत्पन्न होता है। जिसके प्रभाव से दुधमुहा बच्चा भी गूं ऽऽ गा ऽऽ इत्यादि शब्द करने और हाथ पैर फैंकने लगता है। चिड़ियें चहकने और परों को फर फराने लगती हैं। घोड़ा वगैरह भी हिनहिनाने वो थिरकने लगता है। आप लोगों ने प्रायः देखा होगा कि छोटे २ लड़के खेलते समय कभी नाचने, कभी गाने लगते हैं। इसी पर एक प्रसिद्ध कहावत है कि रोना और गाना किसे नहीं आता।

आत्मा को जब आनन्द प्राप्त होता है तो हर्षातिरेक से शरीर की सारी इन्द्रियां फड़क उठती हैं। इस स्फुरण की दो अवस्थाओं से सङ्गीत का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिससे एक तो अङ्गों का फड़कना है जिससे कि नृत्य की उत्पत्ति हुई है और दूसरा गुनगुनाना है जिससे गान का जन्म हुआ है।

मनुष्य की बुद्धि ने ज्यों २ विकास पाया त्यों २ इस हर्ष से उत्पन्न होने वाली ध्वनियों में यानी गुनगुनाहट में भी सजावट आने लगी। इस सजावट के सिलसिले में लोगों का ध्यान स्वर माधुर्य्य की ओर विशेष रूप से रहा। उन लोगों ने स्वर को मधुर बनाने के विचार से चिड़ियों के स्वरों की नक़ल की। क्योंकि सङ्गीत को जिन अलंकारों की आवश्यकता है वे सब चिड़ियों के स्वर में विद्यमान हैं। कोकिला आदि कई पक्षियों का कंठ स्वर तो बिलकुल तान जैसा ही है।

इस प्रकार की क्रिया द्वारा इस हर्ष ध्वनि से धीरे २ और भी विकास पाया मगर फिर भी यह केवल स्वर लहरी मात्र ही था। यानी इस नैसर्गिक गान के कोई अर्थदार शब्द नहीं जोड़ा गया था।

इसी स्वर लहरी ने कुछ काल के बाद अलप्ति, रूपकालाप तथा आलाप का रूप धारण किया।

इसी नैसर्गिक गान के तारतम्य में लोगोंको यह पता चला कि कुछ ऐसी ध्वनियां हैं जोनीचे की ध्वनियों से बहुत ऊंची होते हुए भी नीचे की ध्वनियों में प्रवेश कर जाती हैं। और कुछ ऐसी भी ध्वनियां हैं जो प्रवेश तो नहीं करतीं किंतु नीचे की ध्वनियों से टकराकर सुन्दर प्रतीत होती हैं। लोगों ने इन ध्वनियों को गले में क्रमानुसार बैठा लिया यानी सा प सां और इन तीनों ध्वनियों का नाम उदात्त अनुदात्त और स्वरित रक्खा।

इन्हीं स्वरों के आधार पर लोगों ने एक स्वर यन्त्र का आविष्कार किया जिसका नाम तम्बूरा या तानपूरा रक्खा।

चूंकि इन्हीं तीनों स्वरों से अन्य सभी स्वर बने और सभी स्वरों की ध्वनियाँ भी इन्हीं तीनों स्वरों में निहित हैं। इसी हेतु 'वेद' का गान भी इसी 'बीज-स्वर' यानी उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित में किया गया।

वेद गान से हमारे ऋषियों को यह अनुभव हुआ कि उस नैसर्गिक गान के स्वरों पर भी नियन्त्रण रक्खा जाय तो उस गान का सौन्दर्य और भी बढ़ सकता है। इस हेतु उन्होंने अनुदात्त से उदात्त तक के स्वरों को खण्ड २ किया यानी सा से सां तक को बांटकर ७ स्वर ५ उपस्वर और १० स्वरांशों की रचना की। और इस प्रकार बने हुये स्वरों को प्रयोग करने का भी कुछ नियम बनाया गया।

उपरोक्त स्वरों उपस्वरों के प्रयोग की क्रिया भेद से उन्होंने प्रथक २ कई प्रकार किये और उन प्रकारों को राग की संज्ञा दी। तथा उन रागों में कुछ उपासना के मन्त्रों का गान भी किया। ये वही प्राचीन आलाप मन्त्र ओ३म् अनन्त नारायण इत्यादि हैं जो इन दिनों कई कारणों से तोम तनोम तनत तनरी इत्यादि होगये हैं।

वही नैसर्गिक गान कुछ काल के बाद आलाप के रूप में समाज के सामने उपस्थित हुआ। बाद में जब छन्दों की रचना हुई तो उपरोक्त रागों में उन छन्दों को भी गाया जाने लगा। छन्दों की रचना मात्रा वद्ध होने के कारण उसके गान को भी मात्रा वद्ध करना पड़ा जिस प्रकार छन्दों को गण भेद से भिन्न २ रूप दिया गया है उसी प्रकार उसके गान को भी खाली भरी ताल के हेर फेर से ठीक उसी का अनुगामी बनाया गया। छन्दों के गान को ताल की सीमा में रखने के लिये उन्होंने "कठताल" का निर्माण किया। इसके पूर्व वे केवल करतल-ध्वनि से ही काम ले लिया करते थे।

फिर हमारे ऋषियों ने एक ताल यन्त्र का निर्माण किया। और उसका नाम मृदङ्ग रक्खा। उसपर आघात की भिन्न २ क्रियाओं से जो भिन्न शब्द सुन पड़े उन शब्दों के तदरूप ही उन बोलों का भी नाम कर्ण किया। यानी दोनों ओर एक साथही आघात करने पर 'धा' जैसा शब्द होने के कारण उसको 'धा' ही कहा गया। इस प्रकार से उत्पन्न बोलों को पखावज का बोल कहा गया और इन्हें ही हेर फेर कर के परन इत्यादि की रचना हुई।

जब तक हम लोगों की मात्र भाषा संस्कृत थी, तब तक छन्दों की रचना संस्कृत में ही हुई। बाद में जब हिन्दी का प्रचार हुआ तो छन्द की रचना भी हिन्दी में होने लगी। इस प्रकार की रचनाओं में श्री० सूरदास जी तथा हरिदास स्वामी आदि भक्तों के बने हुए पदों को सङ्गीत में बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है। और

उस समय की गायन शैली का नाम ध्रुवपद रक्खा गया। कहते हैं कि इसके स्वरों का प्रयोग बहुत ठहराव से होने के कारण ही इसको ध्रुवपद की संज्ञा दीगई है।

हमारे विचारानुसार तो ये नाम उनके पदों में वर्णित ध्रुव-वाक्यों का गुण प्रदर्शक भी हो सकता है। क्योंकि यही जब फाग के ऊधम का वर्णन करने लगा तो धम्मार बन बैठा है। यहीं से सङ्गीत का प्रयोग ईश्वरोपासना से प्रथक होने लगा। यद्यपि महात्माओं ने इसकी रचना भी सद्भावना से ही की थी । किन्तु भक्ति मार्ग से अनभिज्ञ मनुष्यों ने उनके मनोवत भावों को न समझने के कारण अपना दृष्टि कोण बदल डाला।

प्राचीन काल में आलाप का प्रयोग योगी जन समाधिस्त होने के हेतु किया करते थे और उस समय वे केवल स्वरों के सहारे ही इस जीवात्मा को परमात्मा का साक्षात्कार कराते थे किन्तु समयानुसार जब भक्ति मार्ग का प्रचार हुआ तो प्रार्थना के पद आदि गाने की प्रथा चली । श्री० हरिदास स्वामी के बाद से मानव प्रार्थना को भी स्थान मिलने लगा। श्री० तानसेन जी के बाद श्री० सदारङ्ग जी ने सङ्गीत में एक नया आविष्कार किया और उसका नाम ख्याल रक्खा। इसके बाद और भी कई आविष्कार हुए। जैसे तराना, टप्पा, ठुमरी आदि जिसमें शोरी व शर्की का श्रम सराहनीय है।

तानपूरे पर का तार देखने में तो पहला पञ्चम का ही है और उसके बाद जोड़ी का तार है जो कि ऊपर का सां सां बोलता है और सब से आख़ीर का तार नीचेके षड्ज का है। किन्तु बजाते समय जब ध्वनि चक्र चलताहै तो स प सां ही ध्वनित होता है। क्योंकि षड्ज के बाद पञ्चम पर ही आघात किया जाता है। और उसके बाद तार सप्तक के 'सं' पर। दूसरा 'सां' दूसरी आवृत्ति का विभाजक स्वरूप वहां एक मात्रा पहले 'सा' को ठहरा कर अपने को विराम होना सिद्ध करता है।

इस पर एक प्रश्न उठ सकता है कि यदि जोड़ी के दोनों तार न देकर एक ही सा दिया जाय और उसी को एक मात्रा ठहरा दिया जाय तो क्या हर्ज है? बल्कि इससे लाभ यह होगा कि एक व्यर्थाघात-श्रम के साथ-साथ एक तार का व्यय भी बचा रहेगा।

इसका उत्तर यही होगा कि इसमें दो भारी कठिनाइयां आपड़ेंगी।

एक तो यह कि तानपूरे के गूँज में बहुत कमी होजायगी। जिससे कि गान को वह सुन्दरता नहीं प्राप्त होगी जो चार तार के रहने से होती है।

दूसरी यह होगी कि गाते समय इस प्रकार से आघात करने में बहुत असुविधा होती है और यह असुविधा उस समय और भी बढ़ जाती है जब चौदह या पन्द्रह मात्रा में गाया जाता है।

बराबर आघात करने से उन आघातों को एक प्रकार से मात्रा का ही रूप मिलता है और मात्राओं को किसी भी ताल में रुकावट नहीं है। किन्तु इसके विपरीत तीन आघात के बाद एक आघात के समय तक रुक जाने से उसे त्रिताल का रूप मिलजाता है। इस त्रिताले को क़ायम रखते हुये चौदह या पन्द्रह मात्रा में गाना कुछ हँसी खेल नहीं है। इसी सब सोच विचार के साथ हमारे ऋषियों ने इसमें वैज्ञानिक ढङ्ग पर चार तार का ही अवलम्बन किया है।

अब मैं आपको बताता हूं कि तानपूरे द्वारा स्वरों की उत्पत्ति कैसे हुईः—

आपने हमारे लेख से तान पूरे का मिलाना तो जान ही लिया है। आप! अपने पास दो तानपूरों को रखलें और एकही स्वर में मिलालें।

इस समय आपका दोनों तानपूरा सा प सां यानी मध्य का सा और मध्य का ही प तथा तार सप्तक का सां बोल रहा है। अब आप नं० १ तानपूरे को ज्यों का त्यों रहने दें और दो नम्बर के तानपूरे को उसी के पंचम को सा मानकर मिलालें।

अब आपका नं० २ तानपूरा यद्यपि बोल रहा है स प सं ही किन्तु इसका प अब एक नम्बर के तानपूरे के ऋषभ बोलरहा है। यही आधुनिक शुद्ध 'रे' है, अब आप नं० २ तानपूरे के प को फिर सा मान कर मिलावें तो देखेंगे कि इस तानपूरे का 'प' नं० १ तानपूरे का शुद्ध 'ध' बनगया है। इसी प्रकार फिर 'प' को 'सा' मानकर मिलाइयेगा तो 'ग' बन जायगा और फिर 'नी' बनेगा। इस शुद्ध 'नी' को 'सा' मान कर नम्बर दो तानपूरे को मिलाने पर उसका 'प' नं० १ तानपूरे का तीव्र 'म॑' बन जायगा। इस तीव्र 'म॑' को 'सा' मान कर मिलाने पर उतरा 'रे॒' और उसे 'सा' मानने पर उतरा 'ध॒' बन जायगा। अब इस उतरे 'ध॒' को 'सा' मानने पर उतरा 'ग॒' और उतरे 'ग॒' को 'सा मानने पर उतरा 'नी॒' और उसे भी 'सा' मानने पर उतरा 'म' यानी आधुनिक शुद्ध 'म' बोलेगा। अब इस शुद्ध 'म' को 'सा' मानकर तानपूरा मिलाने पर वह नं० १ तानपूरे के स्वर में मिल जायगा।

इस प्रकार चढ़ी उतरी स्वरों के मार्ग से स्वर चक्र की यात्रा करता हुआ 'पंचम' पुनः अपने पूर्व स्थान पर आगया। इसे आप प्रारम्भिक बाजा हारमोनियम पर भी आसानी से देख सकते हैं।

अब आप अगर श्रुतियों को भी बनाना चाहें तो पहले इन बने हुए स्वरों के आपस की दूरी को नाप लीजिये और देखिये कि मध्य सप्तक के 'सा' से तार सप्तक के 'सां' तक को आपने कै खण्ड में किया है।

पहले 'सा' से 'सं' तक को एक बटा दो कीजिये। क्योंकि इसी क्रिया से आपने ऊपर कहे हुए बारह स्वरों की रचना की है।

पहले सां बटे सा = प $\left\{ \frac{\text{सं ४८०}}{\text{स २४०}} = \text{प ३६०} \right\}$ कीजिये। याने मध्य के सा से तार के सा तक को बीच से काटने पर शुद्ध 'प' बना । यह स्वर सर्वदा शुद्ध ही रहता है। अब प से सा तक को दो भाग कीजिये अर्थात् प बटे सा = ग $\left(\frac{\text{प ३६०}}{\text{स २४०}} = \text{ग ३००} \right)$ यह शुद्ध ग हुआ। अब ग से सा तक के दो भाग कीजिये। याने ग बटे सा = रे $\left(\frac{\text{ग ३००}}{\text{स २४०}} = \text{रे २७०} \right)$ यह शुद्ध रे बना अब रे से सा तक का दो भाग कीजिये याने रे बटे सा = उतरा रे $\left(\frac{\text{र २५०}}{\text{स २४०}} = \text{रे २५५} \right)$ यह कोमल रे हुआ और यहां तक आप तान पूरे द्वारा भाग कर चुके हैं अब इस उतरे ऋषभ से सा तक के दो भाग कीजिये। याने कोमल रे बटे सा = अति कोमल 'रे' $\left(\frac{\text{रे २५५}}{\text{स २४०}} = \text{रे} = \text{२४७॥} \right)$ इस अति कोमल रे को हिन्दुस्तानी ग्रंथकार आधुनिक श्रुतिस्वर व्यवस्था के अनुसार कुमुद्वति नामकी श्रुति बताते हैं। इस श्रुति का सम्वाद रक्ता नामकी श्रुति से है।

यदि आप श्रुति भी बनाना चाहें तो अब तान पूरे को कुमुद्वति में मिलाइये और उसके पंचम के तार को रक्ता में मिलाइये और उपरोक्त क्रिया से बनाते जाइये।

ऊपर की तरकीव से बने हुए इन सप्त स्वरों के नाम तो षड़ज ऋषभ, गन्धार मध्यम, पञ्चम, धैवत, तथा निषाद ही हैं, किन्तु गाते समय केवल इसके अगले अक्षरों काही प्रयोग किया जाता है। यथा ष, ऋ, ग, म, प, ध, नि, ।

षड़ज के इस 'ष' का उच्चारण स्थान मूर्धा होने के कारण इसके उच्चारण में कठिनाई होती है इससे इसको सुगम करने के लिये ष के स्थान पर दन्त्य 'स' का ही प्रयोग किया जाता है। गायक इस स को 'सा' कहते हैं। क्योंकि सरगम की आरोही अवरोही करने में इस स्वर पर ज़ोर देकर आगे बढ़ने में आसानी होती है, एसी अवस्था में इस जोरदार स्वर का उच्चारण भी स की अपेक्षा सा ही ठीक बैठता है। या गायक जब गाते समय अपने व्यस्त स्वरों को सुस्ताने के लिये इस स्वर पर विश्राम लेता है तो इसे दीर्घता प्राप्त होती है इस हेतु इस दीर्घ स्वर का व्यञ्जन भी स्वयम दीर्घ हो जाता है। वास्तव में इस स्वर को स्वभावतः दीर्घता प्राप्त है और इस हेतु इसका उच्चारण भी अपने आप दीर्घ होजाता है।

"ऋदुरषाणाम्मूर्धा" के अनुसार ऋषभ के इस ऋ का उच्चारण स्थान भी मूर्धा ही है इस हेतु इसके भी उच्चारण को सुगम करने के लिये ऋ के बजाय 'रि'

का ही प्रयोग किया जाता है। इस रि को भी गायकों ने अपनी आसानी के मुताविक 'रे' वना लिया है। क्योंकि सरगम की शीघ्र गामी किया में इस 'रि का उच्चारण भ्रम से रे के सदृश्य ही सुन पड़ता है। तथा स्वरों के दीर्घ उच्चारण के कारण भी इसको रे कहने में कुछ ठीक सा मालूम होता है। इसी प्रकार ग, म, प, ध, नि, के स्वरों को जब दीर्घ उच्चारण किया जाता है तो गा, मा, पा, धा, नी, के सदृश्य ही सुन पड़ता है। कभी २ तो ऐसा ही उच्चारण भी होजाता है।

आधुनिक लेखकों पर पाश्चात्य लेखन प्रणाली का असर पड़ने के कारण उन्होंने रि और नि के मात्रा को भो हठा दिया है। अब केवल स, र, ग, म, प, ध. न, ही लिखा जाता है।

इन सप्त स्वरों के समूह को सप्तक की संज्ञा दी गई है। ऐसे सप्तक बहुत से बन सकते हैं। जो आपस में एक दूसरे से दुगने-नीचे या ऊंचे होंगे। किन्तु पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार नीची से नीची आवाज १५ या १६ कम्पन मात्रा तक ही आपस की एक दूसरे से नीचाई या ऊंचाई को बताती है। और ऊंची से ऊंची आवाज ४०००० कम्पन मात्रा तक आपस के फर्क को बता सकती है। इसका अनुभव आप इस प्रकार कर सकते हैं, कि एक 'डफ़' में पानी लगाकर उसे उतरिये और बार बार इसी प्रकार उतारते वो बजाकर सुनते जाइए जबतक वह कुछ कुछ बढ़ा रहेगा तब तक तो वह अपने स्थान भेद (ऊंचाई नीचाई) को बताता रहेगा। किन्तु जब विलकुल उतर जायगा तब फिर आप यह नहीं जान सकेंगे कि अब ये उतर रहा है या चढ़ रहा है। इसी प्रकार उसे चढ़ाने पर जब वह अत्यन्त चढ़ जायगा तो भी स्थान भेद नहीं बता सकेगा। हमारे विचारानुसार कम्पन मात्रा १५ से कम और ४०००० से और अधिक होने पर एक स्थान ऐसा भी आवेगा जब कि स्थान भेद वताना तो दूर रहा, शब्द भी नहीं सुन पड़ेगा। जिस प्रकार हम पृथ्वी के छोटे से छोटे भाग प्रमांणु को भी नहीं देख सकते हैं और बड़े से बड़े भाग पृथ्वीकी गोलाई को भी नहीं देख सकते तथा जिस प्रकार हम एक चित्रको बहुत दूर से भी नहीं देख सकते और अत्यन्त निकट आँख से सटजाने पर भी नहीं देख सकते उसी प्रकार बहुत पतली आवाज़ को भी नहीं सुन सकेंगे और मोटी से मोटी आवाज़ को भी नहीं सुन सकेंगे।

हमारे ऋषियों ने इस में से मानव कंठ की दौड़ के अनुसार तीन ही सप्तकों का वर्णन सविस्तर किया है। हम लोग जहां से गाना बजाना आरम्भ करते हैं उसे मध्य सप्तक माना गया है। उससे ऊपर के सप्तक को तार सप्तक कहते हैं। जो कि मध्य सप्तक की अपेक्षा ऊंचाई में दुगना ऊंचा है और उसके स्थान भेद को जानने के लिये भातखण्डे जी ने इस चिन्ह ⸗ का प्रयोग किया है। मध्य सप्तक से नीचे के सप्तक को मध्य सप्तक कहा गया है जो कि मध्य सप्तक से नीचाई में ठीक दुगुना नीचा है, और उसके स्थानको जानने के लिये इस ⸗ चिन्ह का प्रयोग किया है।

मध्य सप्तक के स्थान भेद का चिन्ह केवल यही है कि वह नीचे या ऊपर के चिन्ह से रहित है।

जिस प्रकार अनेकों सप्तक होते हुए भी आवश्यकतानुसार केवल तीन ही सप्तक का वर्णन किया गया है उसी प्रकार स से सं का अनेकों खण्ड हो सकने पर भी साफ साफ सुने जाने योग्य केवल २२ खंड का ही प्रयोग किया गया है। किन्तु मींड में इन स्थानों के अतिरिक्त और भी सूक्ष्म २ स्थान मिलते हैं।

इस लेख में मैंने स्वरों की रचना का उल्लेख किया है। अब यह भी बता देना आवश्यक है कि स्वर की उत्पत्ति नाद से हुई है जिसको हम लोग ब्रह्म का रूप मानते हैं।

जर्मनी के शब्द विज्ञान के प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर हेल्महोल्ट जी के मतानुसार एक ही सप्तक के स्वरों में सम्पादित्व इस प्रकार है। समान वादी स सं। पूर्ण सम्वादी स प। न्यून सम्वादी स म। अनुवादी ग और विवादी रे है। लेख बढ़गया है। इसका सविस्तार वर्णन किसी आगामी लेख में दूंगा।

॥ इति ॥

वह गीत!

गायक! गा ऐसे मधुर गीत।

युग-युग की मधुर सुगाथायें,
तेरे मृदु मानस में ढलकर।
युग-युग की वह वीती बातें,
भावों के उर में लय होकर॥
घुल मिल जायें तन्मयता में,
भावुकता में लय हो अतीत-
गायक! गा ऐसे मधुर गीत॥
यौवन में, मधु अल्हडपन में। मस्ती में, मतवाले पन में॥
अब हृदय तंत्रि के तार छेड़। उन्माद भरी वह तान छेड़।
मधुरस पी, अन्तर दाह मिटा,
विक्रय करले सुखसार सखे।
स्वर लहरी में हो मादकता,
होजाये मधु संसार सखे॥
निर्झर से झर-झर झरते हों,
नैनों से मुक्ता कण पुनीत॥
गायक! गा ऐसे मधुर गीत॥

लेखक—
"उमेश" चतुर्वेदी
साहित्य भूषण
कविरत्न

—*—

काव्य और सङ्गीत

(ले०—श्री० भट्ट मुकुन्द चक्रवर्ती बी० ए०, साहित्यरत्न)
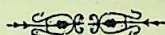
गायक गाता है। किन्तु सप्त-स्वरारोहावरोह ही नहीं और भी कुछ ! उसका यह और कुछ है 'गीत' ! गीत को ही वह अपने इन सप्त स्वरों के उतार और चढ़ाव में गाता है। ये सप्त-स्वर तो उसकी कला के मूर्त्त-आधार हैं। बिना मूर्त्त रूप के सौन्दर्य की अनुभूति असम्भव सी होजाती है। तभी तो भक्तवरों ने उस सौन्दर्य राशि "कोटि मनोज लजावन हारे" पर ब्रह्म को सगुण ही माना है। जब चित्रकार अपनी सौन्दर्य विधायिनी कल्पना को कागज वा मिट्टी पर विविध रङ्ग एवं तूलिका से मूर्त्त-रूप देदेता है तभी हम उसकी कला के सौन्दर्य एवं उसकी कला की कोमलता का अनुभव करते हैं। मूर्त्त-आधार ही कला की कल्पना को व्यक्त करता है। कला की श्रेष्ठता इसी मूर्त्त-आधार पर निर्भर है। जिस कला का मूर्त्त-आधार जितना ही सूक्ष्म होगा उतनी ही वह श्रेष्ठ गण्य होगी। यही कारण है कि साहित्य संसार ने 'काव्य-कला'को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। उसके मूर्त्त-आधार रसात्मक शब्द हैं। जब काव्य शब्द चमत्कार के परे अर्थ-चमत्कार में चला जाता है, तब उसका यह मूर्त्त-आधार नहीं सा होजाता है। किन्तु प्रत्येक कला अपना-अपना मूर्त्त-आधार रखती है। यह बात अलग है कि उसके रूप में प्रथकत्व हो ! इसी प्रकार गायक भी सप्त-स्वरों सा, रे, ग, म, प, ध, नी, के द्वारा ही अपनी कल्पना को एवं अपनी भावना को सङ्गीत का रूप देकर अभिव्यक्त करता है। गायक गीत में, वादक वाद्य में, एवं नर्त्तक नृत्य में अपनी-अपनी भावनाओं की अभिव्यञ्जना करते हैं। किन्तु गीत, वाद्य और नृत्य ये तो व्यक्तीकरण के भिन्न-भिन्न पथ हैं, इनके मूल में तो एकही सत्ता का आधिपत्य रहता है। इनकी यह अधिष्ठात्री सत्ता 'कविता' है, काव्य है। काव्य रहित सङ्गीत असम्भव है। रसात्मक कल्पना एवं भावना ही काव्य कहलाता है। बिना कल्पना एवं भावना का पद्य केवल 'पद्य' ही कहलायेगा 'कविता' नहीं। कविता के लिए पद्य का कल्पनात्मक एवं भावनात्मक होना अत्यावश्यक है। यह कल्पना एवं भावना गद्य में भी रह सकती है, तभी तो आचार्यों ने काव्य को 'गद्यं पद्यं च' गद्य और पद्य दोनों में माना है। पद्य और गद्य तो 'कविता' के बाह्य शरीर मात्र हैं। इसी प्रकार सङ्गीत के विषय में भी हम कह सते हैं कि, गायक का गीत, वादक का वाद्य एवं नर्तक का नृत्य ये तो उनकी कल्पनात्मक एवं भावनात्मक सरस कविता के वाहर शरीर मात्र हैं, इनकी अन्तरात्मा तो वही मूल सत्ता 'कविता' है जो इनमें आकुलता के साथ व्यक्त होती रहती है वा जिसके प्रकाश से ये सब-गीत, वाद्य

और नृत्य प्रकाशमान होते हैं। गायक अपनी भावना को गीत गाकर, वादक वाद्य बजाकर एवं नर्तक नृत्य कर, अपने प्रत्यङ्गों का परिचालन कर व्यक्त करता है। कल्पनात्मक एवं भावात्मक रस-पूर्ण कविता (काव्य) सङ्गीत में सर्वदा निवास करती है।

कविता की वृत्तमयता उसकी सङ्गीतमयता की ही परिचायिका है। छन्द के उतार-चढ़ाव की लय एक मधुर ध्वनि को जन्म देदेती है, जिससे सङ्गीत में काव्य की रसात्मकता और भी तीव्र होकर हृदय-स्पर्शी बनजाती है। प्राच्य शिक्षा से प्रभावित आचार्य यद्यपि कविता को वृत्त की बेड़ियों से मुक्त करना चाहते हैं, किन्तु सङ्गीत को मनोहारिता से नहीं। मुक्त छन्द (Free verse) में भी लय रहती है, सङ्गीत रहता है। इसी प्रकार गायक गीत के द्वारा, वादक वाद्य के द्वारा और नर्तक नृत्य के द्वारा अपनी २ कविताओं में सङ्गीत का सन्निवेश करते हैं। अतः हम देखते हैं कि सङ्गीत और कविता का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। सङ्गीत में काव्य रहता है और काव्य में सङ्गीत!

परन्तु कविता और सङ्गीत के अन्योन्याश्रम सम्बन्ध से यह न समझना चाहिये कि जो कवि होगा वह अवश्य गायक होगा, एवं जो गायक होगा वह अवश्य कवि होगा! कविता अलग कला है और सङ्गीत अलग। काव्य में भावात्मक शब्दों की ध्वनि है अतएव उसमें सङ्गीत को गौण स्थान दिया जाता है। अर्थ-व्यञ्जना को प्रमुख। सङ्गीत में अर्थ-व्यञ्जना कम स्वर, ताल और लय को मुख्य। हां, यह अवश्य है कि दोनों न्यूनाधिक मात्रा में हिले-मिले अवश्य रहते हैं। वैसे तो साहित्य-संसार में हमको ऐसे अनेकों उदाहरण मिलेंगे कि जो सर्वोत्कृष्ट कवि है, वह सर्वोत्तम सङ्गीताचार्य भी। किन्तु ये अपवाद के रूप में ही हैं। सूरदास, तुलसीदास, कबीर और मीरा आदि अनेकों महापुरुष होगये हैं, जिन्हें हम सम-स्वर में कवि भी कहते हैं और सुगायक भी! मीरा और सूर तो सङ्गीत-सिद्ध थे। ये सङ्गीत की उस कोमलता तक पहुँच गए थे जहां पर कोमल सच्चिदानन्द भगवान् श्री कृष्ण विराजमान हैं।

सूर तुलसी आदि अनेकों कवियों ने काव्य-रचना के साथ ऐसी भी रचना की है जो सङ्गीत की अद्वितीय विधि है। इस प्रकार की काव्य-रचना को साहित्य-संसार में 'गीति-काव्य' के नाम से पुकारते हैं। सारांश में गीति-काव्य वह काव्य रचना है जो गायी जा सके। किन्तु इस बात का अवश्य ध्यान रहे कि इसमें काव्य के सभी गुण-रस, माधुर्य, ओज, प्रसाद, ध्वनि, अलंकारादि वर्तमान रहते हैं। सूर, तुलसी, और मीरा आदि के गीति-काव्य में उत्कृष्ट काव्य भी मिलता है और उत्कृष्ट संगीत भी। गोकुल के प्रसिद्ध ठाकुर 'श्री गोकुलनाथ जी' के प्रसिद्ध कीर्तन-कार भक्त प्रवर श्री सूरदास जी ही थे।

अन्त में हमको संगीत-साहित्य की अतुल-निधि इस गीति-काव्य की आदि परम्परा पर भी संक्षेप में विचार करलेना चाहिये। भारतीय साहित्य का उद्गम वेदों से ही होता है। ऋग्वेद, सामवेद आदि की ऋचाऐं एवं अर्चिक गाये ही जाते थे। वैदिक ऋचाओं के स्वर इसी बात के पूर्ण द्योतक हैं। वैदिककालोपरांत पौराणिक युग में भी आदि कवि ने अपने आदि वीर-काव्य श्री राम चरित्र का गुण-गान किया है।

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्।
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोलिम्॥

इसी रामायण का श्री सीता रानी के जोड़ले सुकुमार श्री लव और कुशने अपनी वीणा पर कोकिल कण्ठ से गायन कर अपने गुरुदेव श्री वाल्मीकि के आश्रम एवं बन-खण्ड को मुखरित करदिया, यह वही रामायण है जो कि आज तक भी इस भारत के घर घर में गुञ्जायमान है। इस राम-गान की कीर्ति की भारत के गौरव श्री रामचन्द्र की कीर्ति के साथ ही सर्वदा अविनाशिनी तथा अमर रहेगी।

यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितष्ठा महीतले।
तावद् रामायण कथा लोकेषु प्रछरिष्यति॥'

पौराणिक काल के बाद काव्य और नाटकों के युग में भी कालीदास भवभूति, भर्तृहरि एवं जयदेव ने अपनी अलौकिक प्रणों से संगीत साहित्य को गीति-काव्य की अतुल एवं अलौकिक सम्पति प्रदान की कालिदास के मेघदूत, विक्रमोर्वशी शाकुन्तल में गीति-काव्य के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं, संस्कृत-साहित्य के अन्त में कोकिल कवि श्री० जयदेव ने भी अपनी कोमलकान्त पदावली से इसे खूब वृद्धिगत किया:--

'ललितल वंग लता परिशीलन कोमल मलय समीरे
मधुकर निकर कराम्बित कोकिल कूजित कुंज कुटीरे।
विहरति हरिरिह सरस वसन्ते नृत्यति-
युवति जनेन समं सखि विरहि जनस्य दुरन्ते॥

इसी प्रकार हिन्दी में भी हम वीर गाथा काल से लेकर, भक्ति रीति और आधुनिक काल में अटूट गीति-काव्य की परम्परा देखते हैं। हिन्दी के भक्ति काल ने सङ्गीत को खूब ही भरा खूब ही बढ़ाया। महा कवि सूरदास ने सवा लक्ष्य पद रच कर अपने "सूर-सागर" से सङ्गीत साहित्य को अथाह बना दिया। और भी नन्ददास, कुम्भनदास, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी, हितहरिवंश, मीरा, एवं गदाधर

भट्ट, आदि वृज भाषा के कवियों ने इसे खूब बढ़ाया। और इधर श्री रामाश्रयी शाखा में कवि सम्राट श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी अनेकों गीति-ग्रंथ-गीतावली, विनयपत्रिका, कृष्ण-गीतावली आदि रचकर संगीत को उत्कृष्ट कोटि के गीति-काव्य की अमूल्य सम्पत्ति प्रदान की ! और आज भी प्रसाद, पंत, निराला एवं विश्व कवि कवीन्द्र, रवीन्द्र आदि इसे दिनों दिन भर ही रहे हैं, बढ़ा ही रहे हैं--

निर्दय उंगली ! अरी ठहर जा,
पल-भर अनुकम्पा से भरजा,
यह मूर्छित मूर्छना आह सी,
निकलेगी 'निस्सार।

छेड़-छेड़ कर मूक तन्त्र को,
विचलित कर मधु मौन मन्त्र को,
विखरादे मत, शून्य पवन में,
लय हो स्वर संसार।

मसल उठेगी सकरुण व्रीड़ा,
किसी हृदय को होगी पीड़ा,
नृत्य करेगी नग्न विकलता,
परदे के उस पार।'

---*---

घनश्याम तुझे ढूंढ़ने जायें कहां कहां ?

अपने विरह की याद दिलायें कहां कहां ?
तेरी नज़र में जुल्फ में मुसक्यान मधुर में।
उलझा है सब में दिल तो छुड़ायें कहां कहां ?
चरणों की खाकसारी में खुद खाक बनगये।
अब ख़ाक पै हम ख़ाक रमायें कहां कहां ?
जिनको तबीब देख के खुद बन गये मरीज़।
ऐसे मरीज़ मर्ज़ दिखायें कहां कहां ?
दिन रात 'बिन्दु' बरसते तो हैं मगर।
सब तन में लगी आग बुझायें कहां कहां ?

---*---

संगीत और साधना !

(श्री कुमारी पद्मा खोसला)
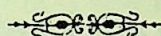
क्या "साधना" ही मुक्ति का मार्ग है ?

अगर है तो मनुष्य उसे करता क्यों नहीं ? नहीं जानता तो करना चाहिये, या करने का ही प्रयत्न करे।

जब द्वार ही मालुम है, तो उस पथ पर क्यों नहीं चलता ?

शायद, वह अत्यन्त कठिन है। वहां तक पहुँचना हर एक की सामर्थ्य में नहीं है।

परन्तु, जहां तक हो सके उस पथ पर जाना चाहिये, क्योंकि वह शान्त, नीरव, शून्य और एकान्त है। जब वह इतना उत्कृष्ट स्थान है तो अवश्य चलना चाहिये। पर कैसे ? केवल साधना के द्वारा ही।

बड़े बड़े ऋषी, ज्ञानी और महान् पुरुषों ने भी वह स्थान केवल साधना से ही पाया। क्योंकि उनके मनमें दृढ़ संकल्प, दृढ़ विचार और दृढ़ धारणा पूर्ण रूप से थी। इसीलिये उन्हें यह मार्ग सफलता पूर्वक मिल चुका है।

परन्तु क्या हम सब भी उस मार्ग तक पहुँच सकते हैं ?

क्यों, नहीं अवश्य, पर उसमें अन्य बातों की भी तो आवश्यकता है। जो उस द्वार तक पहुँचा सके। अगर वह संयम नहीं तो साधन भी नहीं।

इसलिये साधना का पथ सबसे उच्च है। वही उन्नति का भी मार्ग है। परन्तु जब हृदय से साधना ही नहीं तो संयम क्या, और मार्ग भी क्या, यह सब कल्पना तक करना व्यर्थ है।

अब, हर एक कार्य में साधना होनी चाहिये। बिना साधना के वह कभी पूरा न होगा। हरएक मनुष्य साधना से ही सफलता पाता है।

जन्मते ही मनुष्य को अपना उद्देश्य विचारना पड़ता है, कि वह क्या है, किसलिये आया है और क्या करना चाहिये परन्तु उसके लिये साधना भी तो चाहिये, तभी तो यह सब प्रश्न हल हो सकेंगे नहीं तो अधूरे ही रह जायंगे और अपना सारा जीवन नष्ट प्रायः कर लेंगे।

अब साधना चाहे किसी भी रूप में हो। चाहे ईश्वर के प्रति हो, किसी सांसारिक जीव के प्रति हो, साहित्य पर हो या सङ्गीत पर हो, सब में साधना होनी चाहिये। तभी उस तक पहुँच सकते हैं।

परन्तु सङ्गीत साधना का स्थान सबसे उच्च है। स्वर चाहे किसी मनुष्य जानवर, परिन्द के मुख से, या किसी निर्जीव वस्तु के आपस में टकरा जाने से पैदा होकर निकले वही 'सङ्गीत' है। सङ्गीत के सुनते ही मनुष्य क्या, पत्ती क्या सभी आनन्द से हंसने और नाचने लगते हैं। सङ्गीत रोते को हँसा देता है, और हँसते को रुला देता है। सङ्गीत के वशीभूत होकर एक वीर योद्धा भी युद्ध में हँसते हँसते अपने प्राणों को बलिदान कर देता है। मनुष्य क्या, जानवर उसमें लीन होकर अपना आपा भूल जाते हैं।

इन्हीं कारणों से सङ्गीत को संसार में एक महत्व पूर्ण स्थान मिला है। जब सङ्गीत में इतनी शक्ति है, तो क्या 'उसको' पाने की कोई इच्छा नहीं कर सकता है ?

करता है पर उसके लिए साधना भी तो चाहिए क्योंकि वह महान् शक्ति साधना पर ही निर्भर है।

अब सङ्गीत कई रूप में हैं। किसी भी रूप में नाद को सङ्गीत कह सकते हैं। परन्तु यहां पर हमें केवल सङ्गीत शास्त्र का वर्णन करना है। जिसकी धूम सर्वत्र छाई हुई है। जिस शक्ति के लिए महान् पुरुषों ने अपना सारा जीवन ही उसे प्राप्त करने में बिता दिया है और अब भी बिताते चले जा रहे हैं। क्या यह वही सङ्गीत है जो इतना महत्वपूर्ण है।

हमारा सङ्गीत साहित्य अति प्राचीन है। हिन्दू इसकी उत्पत्ति अपने देवताओं से मानते हैं। इसके विषय में एक किवदन्ती भी है।

काकेश पर्वत पर एक दीपकलाट नाम का पत्ती रहता था। उसकी चोंच में सात छिद्र थे। उनमें से भिन्न-भिन्न रूप में स्वर निकला करते थे। कभी कभी वन इन स्वरों का सम्मेलन करके ऋतु और काल के अनुसार गीत भी गाया करता था। आजकल के राग रागनियों की उत्पत्ति इसी से मानी गई है। जब वह एक हजार साल तक जीवित रहा और उसका मृत्युकाल निकट आया, तो उसने सूखी टहनियों को जमा करके एक चिता बनाई। और उसके ऊपर नृत्य करते करते दीपक राग गा कर अपने को भस्म कर दिया। उस भस्म से एक अण्डा बना और फिर एक दीपकलाट पत्ती उत्पन्न हुआ।

भारतवर्ष में सङ्गीत का बड़ा महत्व है। सङ्गीत का इतिहास भी बड़ा मनोरंजक है उसमें पूरे देश का इतिहास प्रतिबिम्बत है।

प्राचीन काल में गायन का सर्वत्र प्रचार था। कोई भी धार्मिक कार्य इसके बिना पूर्ण नहीं होता था। देवालयों में भक्ति पूर्वक गीत गाये जाते थे। बच्चों की शित्ता का आरम्भ ही सङ्गीत से होता था। ज्ञानी लोग जगह जगह भक्ति के गीतों का प्रचार करते थे। सामवेद में विशेष रूप से सङ्गीत प्राप्त हुआ, और उत्तरोत्तर वृद्धि ही होती गई।

आधुनिक काल में भी सङ्गीत का प्रचार बड़े जोर शोर से हो रहा है। और शायद बढ़ते बढ़ते उन्नति के शिखर तक पहुँच जाय।

कहा जाता है कि जो मनुष्य सङ्गीत से अनभिज्ञ रहे और उसके स्वरों पर मोहित न हो उसको एक आत्मद्रोही, विश्वासघाती, और अन्धकार-पूर्ण रात्रि से भी भयंकर हृदय रखने वाले पुरुष से भी अविश्वसनीय एवं भयंकर समझना चाहिये।

क्या यह सत्य है ? कि इन सब कष्टों को दूर करने वाला शास्त्र "सङ्गीत" ही है ? इस विचार से सङ्गीत अवश्य सीखना चाहिये।

सङ्गीत हर एक मनुष्य को आता है पर किसी के पास कम है तो किसी के पास अधिक है।

प्रथम ही हम देखते हैं कि अगर कोई वाद्य किसी बालक के सामने बजाया जाता है, तो वह शीघ्र ही आकर्षित होकर उस तरफ आ जाता है। बालक क्या साँप तक बीन की धुन सुनते ही मस्त हो जाता है और अपना मार्ग तक भूल जाता है।

अगर उस बालक या साँप के सामने कोई कथा बाँचने लगे तो क्या वह चुपचाप बैठकर सुन सकेगा ? नहीं। कभी नहीं, क्यों कि वह तो उसका अर्थ ही नहीं समझेगा कि यह कौन सी बला है।

इसी से सङ्गीत, साहित्य से उच्चतर स्थान रखता है।

प्रायः देखा जाता है कि सभा सोसाइटियों में सङ्गीत या नृत्य के आरम्भ करते ही सन्नाटा छा जाता है और सभी लोग आनन्द से झूमने लगते हैं। पर जहां किसी साहित्य के बारे में कहना शुरू किया वही शोर गुल शुरू हो जाता है।

इन्हीं सब कारणों से सङ्गीत उत्तम है। सङ्गीत की उपासना अति प्राचीन काल से मानी गई है। तथा बड़े बड़े सङ्गीतज्ञ अब तक हो चुके हैं।

परन्तु मध्यकाल में सङ्गीत की स्थिति बहुत बिगड़ गई और पतन की ओर अग्रसर होने लगी। किन्तु कुछ बड़े बड़े विद्वानों ने मिल कर इसको पवित्र करके फिर से इसका प्रचार किया, जो प्रणाली अब तक जारी है।

किन्तु यह सब कैसे हुआ ? केवल साधना के द्वारा ही।

दासी मीरा ने भी सङ्गीत के द्वारा ही गिरिधर गोपाल की आराधना करके ही मुक्तिमार्ग पाया। सूरदास का भी यही महत्व रहा। और भी अन्य ऋषि महात्माओं ने भी अपनी आत्माओं को इसी रूप से पवित्र किया। तो क्या हम लोग भी सङ्गीत साधना से मुक्तिमार्ग नहीं पा सकते ?

पा सकते हैं। पर उतना साधन, संयम और लग्न भी तो चाहिए तभी यह शान्तिमार्ग मिलेगा। उन विद्वानों तक पहुँच होगी जिन्होंने अपनी सङ्गीत लहरी

से मेघों में वर्षा तक करदी, अग्नि तक उत्पन्न करदी, मुर्दों को जीवन तक प्रदान करने की शक्ति धारण करली थी।

आख़िर वह भी तो मनुष्य थे जिन्होंने इतना साधन किया और एकान्त पथ खोज निकाला।

एक समय की बात है कि हम लोगों के मकान के सामने एक सङ्गीताचार्य निवास करते थे। वह भी काफ़ी साधना करते थे। एक दिन हम लोगों ने उनको निमंत्रण सङ्गीत सभा के लिये दिया। वह भी आये। जब उनकी बारी आई तो वह भी बड़े उत्साह से उस कला को दिखाने के लिए अग्रसर हुए। उन्होंने कमरे के सब दरवाजे बन्द करवा लिए और उस कुसमय में ही मल्हार राग गाना शुरू किया। थोड़ी देर पश्चात् हम सबको अँधेरा मालूम होने लगा और ऐसा जान पड़ा कि घनघोर घटा छारही है। किसी को भी सुध बुध न रही और वर्षा का अनुभव करने लगे। करीब घण्टा डेढ़ घण्टा बाद उन्होंने अपनी सङ्गीत लहरी कम की और फिर वही उज्ज्वल प्रकाश हो गया यह देख कर हम सबको बड़ा आश्चर्य्य हुआ।

उसी दिन से मुझे सङ्गीत ने अपनी ओर आकर्षित किया, कि जिस सङ्गीत में इतनी शक्ति है क्या वह ग्रहण न की जाय। प्रयत्न अवश्य किया है पर उतनी साधना नहीं हो रही है।

दूसरे रूप में हम यह कह सकते हैं कि जैसे भक्त भगवान की आराधना से मुक्ति पा सकता है तो वह सङ्गीत साधना से भी अवश्य पा सकता है। परन्तु वह साधना बड़ी उच्च होनी चाहिये। तभी तो सफलता मिलेगी। यह तब होगा जब हमारा ध्यान सङ्गीत की ओर आकर्षित होगा।

सङ्गीत के लिए तीन दशाएँ मानी गई हैं। प्रथम सङ्गीत से प्रेम, द्वितीय सङ्गीत से रुचि तृतीय सङ्गीत का योग। यह तृतीय दशा सङ्गीत साधना का अन्तिम मार्ग है। जब मनुष्य इस नशे से पागल हो जाता है तभी यह साधना उत्पन्न होकर सफल होती है।

यह योग बिरले ही पाते हैं क्योंकि यही साधना उस महान शक्ति का धारण करना है।

जिस शक्ति के द्वारा तानसेन ने दीपकराग गा कर अपने को भस्म किया और मल्हार राग द्वारा शांत हुआ। उस महान पुरुष के हृदय में साधना थी तो प्राप्त कर सका नहीं तो अब तक उसका कोई नाम भी नहीं जानता।

इसी प्रकार और भी संगीताचार्यों ने साधना ही से सफलता पाई और संसार में अपने को अमर कर दिया।

साधना शान्ति, प्रेम और शुद्ध हृदय से एकान्त स्थान पर होती है। उसके

लिए संसार के हर एक कार्य को छोड़कर तन, मन और धन लगाना पड़ता है। तभी वह पूर्ण होती है।

यह साधना नहीं आराधना है। भक्त की भगवान के प्रति आराधना है तो सङ्गीताचार्य की सङ्गीत के प्रति साधना है। साधना और आराधना ही मनुष्य की उन्नति का मार्ग है।

हमारे पूज्य श्री० भातखण्डे जी ने भी इस महान शक्ति को साधना से ही प्राप्त किया था। और उससे उन्नति के पथ पर पहुँचे। उन्होंने ही सङ्गीत की विगड़ती हुई दशा को फिर से सम्हाला और उसका प्रचार किया। जिसकी उन्नति अब घर घर में हो रही है।

उनके इस उत्कट परिश्रम के लिये हम लोग सब अत्यन्त कृतज्ञ हैं और सदा उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करने की प्रार्थना करते रहेंगे।

श्री० उदयशंकर जी भट्ट !

(ले० कृष्णचन्द्र निगम P. A. Mus. (जलंधर) नृत्याचार्य)
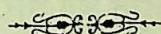
Men of courage men of sense and men of letters are frequent but, a true Gentlemen is what one seldom sees.........कहते हुए महात्मा स्टिल, जिस मानव रत्न की व्याख्या करते हैं, सन्देह नहीं श्री० उदयशंकर जी भट्ट को भी वही स्थान प्राप्त है। सङ्गीत एवं नृत्यकला के भारतीय उद्धारकों की चर्चा जब कभी होती है, तब आपकी याद आए बिना नहीं रहती। आपका अवतार जिन कश-मकश के दिनों में हुआ था, भारतीय नृत्य की ओर उनका ध्यान जिन पतन की घड़ियों में गया था:—आज की परिस्थिति में उनकी तुलना नहीं की जा सकती।

जिस मेवाड़ को, राणा प्रताप, राना सांगा जैसे वीर पुत्र को पैदा करने का गौरव प्राप्त है, उसी मेवाड़ को श्री० उदयशंकर जी भट्ट के समान कलाविद प्रकट करने का भी श्रेय है।

श्री० उदयशंकर जी का जन्म उदयपुर (मेवाड़) में एक उच्च ब्राह्मण कुल में हुआ था। आप श्री श्यामशंकर चौधरी, के सुपुत्र हैं। आपके पिता झालागढ़ नामक

स्टेट के मिनिस्टर हैं। आपके पिता जी को तथा आपको चित्रकला Painting का बहुत शौक था। सन् १९१७ में, आपने बम्बई आर्ट स्कूल में पेंटिंग की शिक्षा पाई। सन् १९२० ई० में आपके पिता ने आपको पेंटिंग की उच्च शिक्षा के लिये लण्डन रायल कालेज ऑफ आर्ट्स में पहुँचा दिया। लंडन में Sir William Rotlen stein की अध्यक्षता में उक्त कालेज का कोर्स पास किया और आपको पेंटिंग में डिस्टिंक्शन Distinction मिला। आपने वहां पर Spencer & George Glausen नामक इनाम पाये।

सन् १९१४ से १८ तक जर्मन युद्ध के समय लंडन में आप अपने नृत्यकला के प्रोग्राम अपने मित्रों के साथ मनोरञ्जनार्थ रखा करते थे। उन प्रोग्राम में जो आमदनी होती उससे भारतीय सैनिक जो यूरुप में गये हुए थे, उनको मदद दी जाती थी। आपको नृत्यकला का बचपन से ही शौक था और लंडन में कई संस्थाओं के सहायतार्थ आपके प्राइवेट प्रोग्राम हुआ करते थे। इसी समय के बीच याने सन् १९२३ में श्री० अन्ना पावलोआ Anna pavloa नामक रशियन लेडी ने आपको भारतीय नृत्य की शिक्षा प्राप्त करने के लिये अपनी पार्टी में रख लिया। उक्त महिला ने दो हिन्दू नृत्य की पार्टी बनाई, उन पार्टियों में आप भी पांतिदार ShareHolder बन गये।

कई मुसीबतों व कठिनाइयों का सामना करते हुए उदयशंकर जी ने यूरुप की यात्रा की और नृत्य में कई अनुभव प्राप्त किये। पहिले आप प्राइवेट ढङ्ग से इधर उधर नृत्य किया करते थे, परन्तु अब धीरे २ प्रोफ़ेशनल नर्तक शुरू किया और सन् १९२९ में आप भारत में लौट आए। सर्व प्रथम कलकत्ता नामक स्थान में आपके सफल प्रोग्राम्स हुए। डाक्टर अवनीन्द्रनाथ टैगोर ने भी आपकी कला की बहुत प्रशंसा की।

इन्हीं वर्षों Miss Alice Borner नामक Swiss कलाकार (जो भारतीय नृत्य से बहुत श्रद्धा रखता था) वह आपकी पार्टी को पुनः युरुप लेगया। इस समय आपकी दिनो दिन ख्याति बढ़गई। युरोप यात्रा के पश्चात् आप अपनी पार्टी के साथ अमेरिका गये। और आपकी पार्टी ने U. S. A. और कनाडा में कई भारतीय नृत्य के प्रोग्राम किये।

कला के सच्चे उपासक श्री० उदयशंकर जी भट्ट अपनी कला से अमेरिका वासियों की आत्माओं को शरीरसे खींचलेते थे। थियेटर्स में दर्शक समुदाय उत्कंठित रहता था, अपार धन राशि में डूबने वाले धनिक दर्शकों पर नृत्य की मोहनी डाल कर उनके हृदयों को आकर्षित करलेते थे। न्यूयार्क, लंडन पेरिस जैसे कलापूर्ण शहरों का दर्शक समुदाय आपकी कला को बड़े उत्साह से देखता था। इसके अतिरिक्त आपके सङ्गीत नियोजक मि० तिमिर वरन की पृष्ठ सङ्गीत कला भी अति उत्कृष्ट सिद्ध

होती थी। उसी संगीत योजना की उत्कृष्टता का प्रयोग आज तक न्यू थियेटर्स आदि प्रसिद्ध कम्पनियों में होता है।

इतना होने पर भी आपको सन्तोष न हुआ। आपने अजंता, बाग, एलोरा अदि गुफाओं से कई नृत्यकला सम्बन्धी बातों की खोज आरम्भ की। सन् १६३७-३८ में श्रीमान् व श्रीमती Lenard Elmhirst of Dartington Hall England & Miss Beatrice Straight of New york आपको इस काम की उन्नति के लिये आर्थिक सहायता दी तभी से आपसे हृदय में India culture centre स्थापित करने की इच्छा पैदा हुई और उसकी शुरूयात करने में तन, मन, और धन से लग गये। भारत में वापिस आते ही आपने उक्त केन्द्र स्थापित करने के लिये योग्य स्थान ढूढ़ना आरम्भ किया। अन्त में अलमोरा में ही उक्त केन्द्र बनाना आरम्भ करदिया। अलमोरा निवासियों ने इस बात को सुन कर आपका खूब सत्कार किया और यू० पी० गवर्नमेन्ट ने भी आपको ६४ बीघा ज़मीन, सिमतोला नामक जंगल में इसके लिये प्रदान करदी।

फिलहाल टेम्परेरी काम करने के लिये कुछ मकान किराए पर ले लिए गये, जिनमें एक बड़ा भारी स्टूडियो ड्रेसिंग रूम, प्रैक्टिस रूम और पेंटिंग रूम के साथ २ बनाया गया। दो स्टूडियो संगीत और नृत्य क्लासेज़ के लिए भी बनचुके हैं।

गुरू शङ्कर व नंबूदिरी ऑफ ट्रावनकोर, उस्ताद अलाउद्दीन खां ऑफ मेंहारा और गुरु कंदप्पा पिलाई आफ मद्रास, भारत नृत्य के लिए शिक्षक नियत किए गए। सरदकाल में उक्तकेन्द्र की नृत्य यात्रा भी भारत के प्रमुख नगरों में होती रहेगी। ३ तार्च १६४० से अभीतक आपको २१ विद्यार्थी मिलगए हैं। गर्मी की छुट्टियों में आपने विद्यार्थियों के यिये Short Summer Course भी क़ायम किया है। आपने नृत्य एवम् संगीत के लिये कई प्रयत्न किए हैं और कर रहे हैं। परमात्मा आपको और आपकी कला को खूब ख्याति प्रदान करे।

—x—

संगीत कला और उसका महत्व ।

(श्री० जगदीशप्रसाद गौड़)
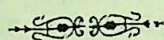
सङ्गीत एक कला है। जिस गुण या कौशलके कारण किसी वस्तु में उपयोगिता और सुन्दरता आती है उसकी "कला" संज्ञा है। कला के दो भेद हैं। एक उपयोगी कला और दूसरी ललितकला। उपयोगी कला में सुनार, बढ़ई, राज आदि के व्यवसाय सम्मिलित हैं, और ललित कलाके अन्तर्गत, वास्तु कला, मूर्त्तिकला, चित्रकला, सङ्गीत कला और काव्यकला-ये पांच कला भेद हैं। उपयोगी कलाओं द्वारा मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और ललित कलाओं से उसके अलौकिक आनन्द की प्राप्ति होती है। दोनों ही उसकी उन्नति और विकाश के द्योतक हैं। भेद केवल इतना ही है कि एक का सम्बन्ध मनुष्य की शारीरिक और आर्थिक उन्नति से है और दूसरी का उसके मानसिक विकास से।

ललित कलाओं में काव्य कला ही सर्वोत्कृष्ट समझी जाती है। क्योंकि वही कला सर्व श्रेष्ठ समझी जाती है जिसमें सबसे कम मूर्त्ति आधार होता है, और इसी नियम के अनुसार ललित कलाओं की श्रेणियां उत्तम और मध्यम स्थिर की गई हैं। और यही कारण है कि काव्य कला को ही सर्व श्रेष्ठ माना गया है, क्योंकि उसमें मूर्ति आधार का एक प्रकार से पूर्ण अभाव होता है। काव्य कला के बाद सङ्गीत कला का नम्बर है। सङ्गीत में नाद का परिमाण अर्थात् स्वरों का आरोह या अवरोह (उतार-चढ़ाव) ही उसका मूर्ति आधार है। उसे सुचारु रूपसे व्यवस्थित करने में भिन्न रसों और भावों का आर्विभाव होता है। काव्य और सङ्गीत में बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमें अन्योन्याश्रम भाव है। परन्तु एकाकी होने से दोनों का प्रभाव बहुत कुछ कम हो जाता है। सङ्गीत का आधार नाद है जिसे या तो मनुष्य अपने कण्ठ से या अनेक प्रकार के यंत्रों द्वारा उत्पन्न करता है। इस नाद का नियम कुछ निश्चित सिद्धान्तों के द्वारा किया गया है। इन सिद्धान्तों के स्थिरीकरण में मानव समाज को बहुत समय लगा है। सङ्गीत के सप्त स्वर सा, रे, ग, म, प, ध, नि इन सिद्धान्तों के आधार हैं। ये ही सङ्गीत कला के प्राण रूप हैं। इससे स्पष्ट है कि सङ्गीत कला का आधार या संवाहक नाद है। इसी नाद के द्वारा हम अपने मनके भावों को प्रकट करते हैं। सङ्गीत कला में विशेषता यह है कि इसका प्रभाव बड़ा विस्तृत और स्थायी होता है जो अनादि काल से मनुष्य मात्र की आत्मा पर पड़ता चला आरहा है। जंगली से जङ्गली मनुष्य से लेकर सभ्यातिसभ्य मनुष्य तक इसके प्रभाव के वशीभूत होजाते हैं। मनुष्यों को जाने

दीजिये पशुपक्षी तक इसका अनुशासन मानते हैं। सङ्गीत द्वारा भिन्न २ भावों या दृश्यों का अनुभव कानों की मध्यस्थ द्वारा मनको कराया जा सकता है । यह शांति रस का प्रवाह बहाकर हमारे हृदय में शांति की धारा बहा सकता है ।

जिस सङ्गीत में उतनी शक्ति है उसकी यह अवनति देखकर हृदय में एक प्रकार की ठेससी पहुँचती है। प्राचीन ग्रन्थों ने भी सङ्गीत की बहुत प्रशंसा की है। और उनसे यह प्रतीत होता है कि अनादि ब्रह्म ने इस विश्व की सृष्टि आनन्द के लिये ही की। प्रथम ओंकार ध्वनि (सङ्गीत) की उत्पत्ति हुई और तत्पचात् यह पार्थिव जगत बना ! स्वयं भगवान कृष्ण ने सङ्गीत को प्रधानता देते हुए कहा है कि 'वेदों' में सामवेद (जो सङ्गीत प्रधान है) मैं ही हूं ।

सङ्गीत का जीवन से भी अटूट सम्बन्ध है। और यह सम्बन्ध विच्छेद कभी नही हो सकता। ईश्वर ने सङ्गीत को उत्पति मानव कल्याण के लिये ही की है। इसकी स्थित आनन्द मय है । और परिसमाप्ति भी आनन्दमय में ही होती है । और यही कारण है कि सङ्गीत की महिमा अपार है ।

विश्व के कण-कण में सङ्गीत परमात्मा के अंश की तरह सारे संसार में व्याप्त है। कहीं पर अव्यक्त कौर कहीं पर प्रकट। मेघों की मन्द्र गम्भीर ध्वनि, सागर की लहरों का गर्जन, पहाड़ी झरनों का कल-कल नाद और बनों, उपवनों में विहंगों का कलरव-ये सब शाश्वत सङ्गीत के ही विविध स्वरूप हैं।

संगीत का प्रभाव जड़, चेतन दोनों पर ही पड़ सकता है । सङ्गीत पाषाण तक को पिघला सकता है। और अनेक किंवदन्तियां आपने सुनी होंगी जैसे दीप राग द्वारा दीपों का स्वयं जल उठना, मेघराज द्वारा पानी का बरसना आदि। ये किंवदन्तिया वास्तव में ठीक हैं और संस्कृत संगीत में ऐसी ही शक्ति है। परन्तु यहां तो व्यक्तिगत प्रतिभा की विषाद पूर्ण अवनति के साथ साथ आजकल संगीत के माधुर्य्य का भी क्षय हो रहा है। आज कल लोग संगीत को माधुर्य्य मय बनाने के लिये वाद्य यंत्रों के प्रयोग में लाते हैं। स्वर-क्षति को बाजों से पूर्ण करने का प्रयत्न करते हैं। आजकल के संगीत में शीघ्रता का भी समावेश किया गया है, जिसके फल स्वरूप संकेतों कोछोड़ देना पड़ता है । संकेत द्वारा ही तो गीत पूर्णता को पहुँचाया जाता है और उसेही छोड़ दिया जाता है तो फिर बतलाइये संगीत की उन्नति कहां से हो। दूसरी बात यह है कि Classical Music को तो लोग बिल्कुल भूल से गये हैं और न इसकी तरफ किसी का ध्यान ही है । वास्तव में संगीत की उन्नति का द्योतक Classical Music ही है। परन्तु आज कल तो लोगों का ध्यान फिल्मी व रिकार्डों के गानों की ओर खिंचा हुआ है । जिससे Classical Music को बड़ी धक्का पहुँच रहा है। Classical Music

सङ्गीत से मनोरंजन तो होता ही है परन्तु इसके द्वारा अनेक रोगों का उपचार भी हो सकता है। अकेक वैज्ञानिकों ने इस बात के बहुत से अनुसन्धान किये हैं कि सङ्गीत द्वारा अनेक रोग बड़ी आसानी से अच्छे किये जा सकते हैं। सङ्गीत द्वारा आंखों का इलाज किया जा सकता है, पागलों को सुधारा जा सकता है।

पागलों और केदियों पर भी सङ्गीत विना प्रभाव डाले नहीं रह सकता। इस बातको William Wall एक Holland के सङ्गीतज्ञ ने प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दिखाया था। घटना इस प्रकार है—एक दिन William अपना बाजा लिये हुये एक पागल खाने में घुस गया। उसमें कई पागल जबरदस्त समझे जाते थे। William को देखकर एक पागल उसकी ओर आगे बढ़ा पागल को अपनी ओर आते देखकर William ने अपना बाजा संभाला और उसको बजाना शुरू कर दिया। बाजे की मधुर आवाज ने पागल के ऊपर जादू का काम किया और वह भी मंत्र मुग्ध की भांति स्वर में स्वर मिलाकर गाने लगा। और कई बार ऐसा करने से उसका पागल पन जाता रहा। और वह बिल्कुल ठीक होगया। आपने देखा सङ्गीत में कितनी महान् शक्ति है।

सङ्गीत का प्रभाव केवल मनुष्यों पर ही पड़ता है यह बात नहीं। पशु-पक्षी उसके प्रभाव से वंचित नहीं रह सकते। स्वडिन के कुछ Dairy Farms में इस बात का प्रयोग करके देखा गया था कि यदि गायों के दुहते समय सङ्गीत होता रहे तो गायें अधिक दूध देती हैं। अतः यह निर्विवाद है कि यदि हम सङ्गीत को अपना जीवन साथी बनालें तो उसकी मधुर स्वर लहरियों से हम अपने शरीर के अधिकांश रोग, सन्ताप और शोक दूर करने में समर्थ हो सक्ते हैं। किसी ने कहा भी है कि:—

साहित्य संगीत कला विहीनः।
साक्षात पशु पुच्छ विषाण हीनः॥

भावार्थ यह है कि जो मनुष्य साहित्य, सङ्गीत की शिक्षा से अनभिज्ञ है। अथवा जिसका मस्तिष्क सङ्गीत रूपी कुमुद साहित्य रूपी चांरु चन्द्रिका से चमत्कृति एवं विकसित नहीं हुआ है, जिसकी हृततंत्री के तार सङ्गीत की स्वर लहरियों से झंकृति नहीं हुए हैं, वह अभागा नर पशुसदृश्य है। अब पाठकों को मालूम होगया होगा कि वास्तव में सङ्गीत का कितना महत्व है। अतः इस विद्या की ओर भी हमें सर्वदा अग्रसर होने की चेष्टा करनी चाहिये।

श्री० एस० ए० म्हाड़कर

सङ्गीत विशारद

आपने छोटी सी अवस्था ही में सङ्गीत का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करलिया है। आपकी एक मधुर स्वर-लिपि पृष्ठ २०१ पर देखिये

—o—

श्री० के० जी० इङ्गले

आप इचलकरंजी स्टेट के दरबार गायक तथा सङ्गीत के माने हुये विद्वान हैं। आपके दो-एक महत्वपूर्ण लेख 'सङ्गीत कला' के पिछ में प्रकाशित हुए हैं।

G. P. H.
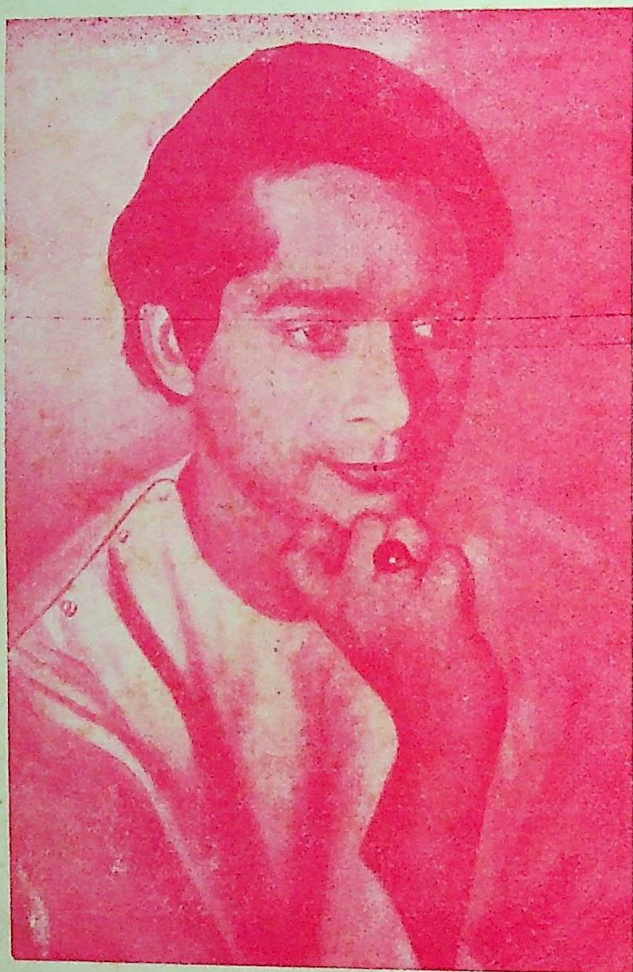
अमर कलाकार
श्री० उदयशंकर जी भट्ट
भारतीय नृत्यकला को पुनर्जीवित करने का श्रेय आपही को है।

श्री० उदयशंकर जी के विद्यालय के विद्यार्थी गण

कहानी
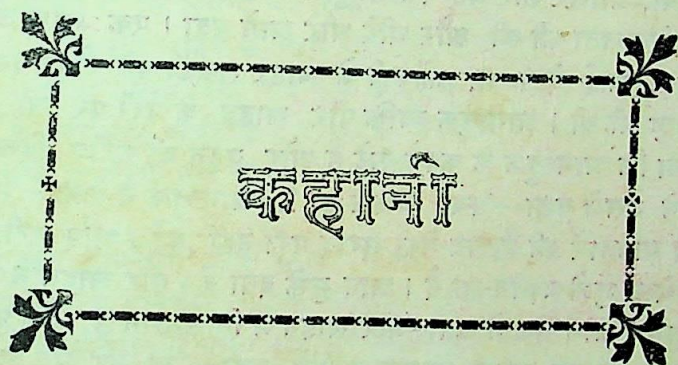
कहानी—

अमर कलाकार तानसेन

(लेखक—श्री० गंगासिंह 'भ्रमर')
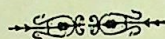
आंधी जोरों से चल रही थी। रिमझिम-रिमझिम पानी भी बरस रहा था। एक व्यक्ति वेग पूर्वक चला जा रहा था। उसे जाने में काफी परिश्रम हो रहा था, पर वह चलता ही जारहा था जैसे कि आज ही उसे अपने निश्चित स्थान पर पहुँचना हो। देर होने से काम नहीं चलेगा। वह चलता ही गया, आखिर-कार वह एक साधुओं की टोली के पास पहुँचा। उसने एक साँस निश्चिन्तता की ली और धीरे धीरे आगे बढ़ा। एक साधू जो वेश-भूषा से मुसल्मान दिखाई देता था, झोंपड़ी के बाहर लकड़ी की चौकी पर बैठा था। पास भीड़-भाड़ भी थी। आगन्तुक व्यक्ति पीर साहब के पैरों पर जा गिरा। पीर साहब ने देखा कि आगन्तुक के कपड़े फटे हैं और बहुत ही गरीब दिखाई देता है। पीर साहब ने उससे पूछा—'क्या चाहते हो ?, आगन्तुक ने कहा—'मैंने कई देवी-देवताओं की मानताएँ की हैं, पर मेरी मुराद पूरी नहीं हुई। आप मेरी मुराद पूरी कर सकेंगे, ऐसा मुझे यक़ीन-सा है। आप मुझे दवा दें। पीर साहब ने कहा—क्या चाहते हो तुम ? आगन्तुक ने कहा—'पीर साहब मैं निःसन्तान हूं, मुझे पुत्र चाहिए।, पीर साहब को इस पर तरस आगया उन्होंने कहा—'जा, तेरे घर पुत्र होगा और ऐसा पुत्र होगा जिसका नाम इस दुनियाँ में अमर हो जायेगा। आगन्तुक प्रेम में मस्त होगया उसने पीर साहब के पैर छुए और मन-ही-मन प्रसन्न हो लौटचला। तरह-तरह की उमँगें और कल्पनाएँ उसके मन में उठ रहीं थीं।

पीर साहब ग्वालियर के सुप्रसिद्ध पीर मुहम्मद गोस हज़रत थे और आगन्तुक मकरन्द पाण्डे।

पीर साहब की दुआ से मकरन्द पाण्डे के घर पर एक वर्ष बाद पुत्र हुआ। बेहट गाँव में बड़ी धूम-धाम हुई। मकरन्द पाण्डे खुशी से फूले न समाते थे।

बच्चा बड़ाहुआ पर वह बोल न सकता था। बच्चे का नाम तन्नू रक्खा गया था। मकरन्द पाण्डे को अगर रह-रह कर कुछ दुःख होता था तो तन्नू के गूँगे होने का। तन्नू बढ़ते-बढ़ते ८ वर्ष का हुआ, पर वह फिर भी गूँगाही रहा। मकरन्द पाण्डे दिनों-दिन फिक्र में सुलगते जाते थे। एक दिन कुछ साधुओं की टोली गाँव में आई। मकरन्द पाण्डे तन्नू को लेकर साधु-मण्डली में गए। वहां जाकर पाण्डे ने विनती की। साधु महाराज ने आज्ञा दी। 'पास ही में जो शिवजी का मन्दिर है उसमें जाकर प्रति-दिन ताजा दूध उस मूर्ति पर चढ़ाया करो।' साधु का आश्वासन

पाकर पाण्डे ने साधना शुरू की। कई माह गुजर गये, पर उसकी इच्छा पूर्ण न हुई एक दिन बरसात होरही थी, आंधी चल रही थी। दूध मिलने का ठिकाना न था पर पड़ोस से बड़ी मुश्किल से दूध मिला और उस वर्षा में मन्दिर में पिता और पुत्र दोनों पहुँचे। दैवयोग से बिजली कड़की, मन्दिर कांप उठा। तन्नू डर से कांप उठा उसकी चीख निकल गई। पाण्डे की साधना पूरी होगई। अब तन्नू बोलने लगा।

एक बार पीर साहब बेहट ग्राम में आए। तन्नू को लेकर पाण्डे पीर साहब के कदमों पर जा गिरे, पीर साहब ने तन्नू को अपनी निगरानी में शिक्षा देने की राय दी। पाण्डे ने उसे मन्जूर कर लिया, करता भी क्यों न? उन्हीं पीर साहब की कृपा से ही तो तन्नू पैदा हुआ था।

पीर साहब ने उसे संगीत की शिक्षा दी, तन्नू का स्वर दिनों-दिन मधुर होता गया। तन्नू पीर साहब के साथ रहने पर मुसलमान होगया और तन्नू से "तानसेन" बनगया। कुछ दिनों बाद पीर साहब ने 'तानसेन' को मथुरा भेज दिया उस समय के सर्वश्रेष्ठ सङ्गीतज्ञ हरिदास से तानसेन ने सङ्गीत शिक्षा पाई और उनकी कृपा से 'तानसेन' एक कलाकार बनगया।

–२–

एक दिन 'तानसेन' रीवां पहुँचा। उस समय जब कि वह दुर्ग के पास पहुँचा, रीवाँ-नरेश रामचन्द्र बघेला सरस्वती पूजा में मग्न थे। रीवां-नरेश का यह नियम था कि पूजा के समय कोई मुसलमान दुर्ग के आस-पास न रहने पाए। इसी लिए ज्योंही 'तानसेन' फाटक पर पहुँचे सिपाही ने रोक दिया और पूछा— 'तुम कौन हो?' मैं ख़ुदा का बन्दा हूं और उसी की याद में गाता फिरता हूं।' बड़ी लापरवाही से 'तानसेन' ने कहा। ख़ुदा का नाम सुनकर सिपाही ने कहा— क्यों जान खोता है, तुझे मालूम नहीं, महाराज इस वक्त पूजा करते हैं और क़िले के पास यवनों का आना सख्त मना है।' 'तानसेन' यह सुनकर दूर हट गया और पास के एक वृक्ष के नीचे बैठकर गाने लगा। आवज़ चारों ओर गूँज उठी। पक्षी मन्त्रमुग्ध की तरह इकट्ठे होगए। प्रकृति घूमने सी लगी, महाराज जिस मूर्ति की पूजा कर रहे थे, वह हिल गई और उसका मुँह स्वर-लहरी की तरफ मुढ़ गया। महाराज नंगे पांव दौड़े हुए दुर्ग के बाहर आये, उन्होंने देखा कि एक युवक मस्त बैठा गारहा है। महाराज युवक की कला पर मुग्ध होगए। उन्होंने उसे दरबार में रख लिया। दिनों-दिन तानसेन की कला चमकती गई।

अकबर बादशाह उस समय भारत का सम्राट था। उसका दरबार अद्भुत कलाकारों से युक्त था। जीन खां सम्राट का दरबारी गवैया था। एक दिन की बात है कि जब जीनखां अपनी कला से सम्राट को प्रसन्न कर चुका था, तो अकबर

सम्राट ने कहा —'इससे बढ़कर भी भला कोई कलाकार हो सकता है ?' अबुलफ़ज़ल ने निहायत अदब से झुककर कहा--'सम्राट बेअदबी माफ़ हो, रीवां नरेश का दरबारी गवैया 'तानसेन' एक अपूर्व गवैया है, उसके जोड़ का भारत में कोई गायक नहीं है।' सम्राट ने कहा--उसको यहां हाज़िर किया जाय।' उसी वक्त अबुलफ़ज़ल ने कहा—'सम्राट रीवाँ-नरेश के पास 'तानसेन' के अतिरिक्त और दो चीज़ें हैं। वह हैं, उसकी अनुपम सौन्दर्यमयी रानी और एक बहुत बड़ा हीरा।' सम्राट ने बेताब होकर कहा—'दो हफ्ते में तीनों चीज़ें मेरे पेश हों।'

अबुलफ़ज़ल ने सेना-सहित रीवां की ओर क़दम उठाया। रीवाँ-नरेश को ख़बर मिली। रीवाँ-नरेश बड़े चिन्तित हुए। 'तानसेन' से उनकी वह दशा न देखी गई, बोले—'महाराज मेरे होते मेरे महाराज की रानी की तरफ़ कोई आंख उठाकर नहीं देख सकता, आप मुझे विदा करें। मैं हीरे और महारानी की कमी सम्राट के सामने पूरी कर दूंगा।' महाराज ने दिल पर पत्थर रखकर तानसेन को विदा किया। तानसेन की पालकी शाही सेना के साथ आगरे रवाना हुई। तानसेन ने रास्ते में देखा कि रामचन्द्र महाराज उसकी पालकी उठाये हुए हैं। तानसेन पालकी में से कूद पड़ा और बड़े नम्र-स्वर में बोला— 'महाराज यह क्या ?' महाराज ने आंसू भरकर कहा--'तानसेन ! मैं आज समझता हूं, मेरा तानसेन मरगया और उसे कन्धा देना मेरा धर्म है।' तानसेन मौन था। उसको आज एक कलाकार की कला का सच्चा मूल्य मालूम होगया। तानसेन ने रुँधे गले से कहा-- 'महाराज ! आपने मुझे सीधे कन्धा दिया है,मेरा यह सीधा हाथ किसी को सलाम न करेगा।' तानसेन ने महाराज के पैर छुए और आगरे की ओर बढ़ा।

कलाकार तानसेन ने सम्राट को अपनी कला से मुग्ध कर लिया और हीरे और रानी के न लाने के कारण पूछने पर उसने उत्तर दिया--'सम्राट हीरा मैंने इस लिए नहीं लिया कि आप जैसा सम्राट जो मामूली बातों पर प्रसन्न हो बड़े-बड़े दान दे डालता है, वह एक ममूली राजा से एक हीरा कब लेना स्वीकार करेगा और रानी, जिसको आपका एक अदना राजा कई बार भोग की चीज़ बना चुका, वह कैसे आपके काम आ सकती है ? इस लिए दोनों को वहीं छोड़ दिया है, मैं आपकी सेवाओं के योग्य था और चला आया।' सम्राट प्रसन्न हो तीन लाख पुरस्कार तानसेन को दिया।

वैसे तो कलाकार तानसेन को आगरे में कोई दुःख न था, पर रीवाँ-नरेश का साथ छूटना उन्हें बहुत बुरा लगा करता था और वे हमेशा उदास ही बने रहते थे, गाने में जी नहीं लगता था।

एक दिन संध्या के समय तानसेन उदासीन होकर निरुद्देश्य दृष्टि से आसमान,

की ओर ताक रहा था। सहसा उसके कानों में सङ्गीत का स्वर सुनाई पड़ा। तानसेन ने सुना कोई बागेश्वरी गा रहा है। तानसेन का ध्यान बट गया। गाते २ स्वर बिगड़ गया। ग़लती को तानसेन सह न सका और जिधर से स्वर आरहा था, चल पड़ा। वहां पहुँच कर उसने देखा, एक अत्यन्त सुन्दर बाला बागेश्वरी गारही है। तानसेन के पहुँचने पर उसने एक अपरिचित को सामने देख सङ्गीत बन्द किया और तानसेन से पूछा--'तुम कौन हो ? और वह सकुचाती हुई सिमटने सी लगी। तानसेन उसके रूप को देख रहा था, वह भूल गया कि वह ग़लत राग सुनकर उसका सुधार करने वहां तक आया है। उसने बाला का प्रश्न भी न सुना। वह देखता ही रहा। उसने अपने प्रश्न को दुबारा कहा। तानसेन का ध्यान टूटा, उसके उत्तर में उसके मुँह से सरलता से निकल गया--'तानसेन'! उस युवती ने यह जानकर सीधे खड़े होकर मुस्कराते हुए तानसेन की तरफ़ देखा। तानसेन ने कहा--'क्या मैं आपका परिचय प्राप्त कर सकता हूं।' युवती ने सरलता से कहा-'मेरा नाम मेहरुन्निसा है।' तानसेन ने कहा--'क्या आप सम्राट की पुत्री हैं ?' मेहरुन्निसा ने कहा--'हां'! कुछ देर दोनों में से कोई कुछ न बोला' दोनों एक दूसरे को देख रहे थे।

तानसेन ने सहसा आपे में आते हुए कहा-'हां ! आप बागेश्वरी गा रहीं थीं न ? मेहरुन्निसा ने कहा-'हां, पर मैं ठीक तौर पर नहीं गा सकती, उसमें गलती थी न ?' तानसेन ने कहा-'थी तो सही··· ।'मेहरुन्निसा ने फिर मुस्कराकर कहा-'आप गाइये न ? जिस तानसेन ने सम्राट अकबर के कई मरतबा कहने पर भी न गाया था, उसी तानसेन ने मेहरुन्निसा के एक बार कहने पर ही गाना शुरू किया। स्वर लहरी बाग़ में गूंज उठी। शाहजादी मन्त्र मुग्ध-सी देख रही थी। धीरे-धीरे स्वर मन्द पड़ा और गाना समाप्त हुआ। अकबर सम्राट जो न जाने कब से गाना सुन रहे थे, पास के कुञ्ज से बाहर निकले और तानसेनऔर मेहरू के बीच में आ खड़े हुए। सम्राट ने तानसेन से कहा-'तानसेन मुझे तुम पर गर्व है तुम अद्वितीय कलाकार हो। मेहरून्निसा को संगीत का बड़ा शौक है तुम जैसा योग्य शिक्षक उसे और कहां मिल सकता है। तुम इसे संगीत की शिक्षा देना शुरू करदो।' तानसेन ने मेहरुन्निसा की ओर देखा उसकी आंखों के भाव तानसेन ने समझ लिए। वह सम्राट की आज्ञा का विरोध न कर सका।

अब तानसेन मेहरुन्निसा का शिक्षक था। मेहरुन्निसा उस पर सब कुछ न्योछावर कर चुकी थो। एक दिन शाही बाग़ में दोनों आँख मिचौनी खेल रहे थे। तानसेन ज़रा दूर निकल गया था। शाहज़ादी को कुछ ऐसा प्रतीत हुआ जैसे कोई पास खड़ा है। उसने आगे बढ़कर उसे पकड़ना चाहा। आगन्तुक ने उसे अपनी बाहों में कस लिया। शाहजादी को यह निर्णय करने में, जरा भी देर न लगी कि

वह तानसेन नहीं है। उसने छूटने की कोशिश की पर मज़बूत बाहों ने न छोड़ा। उसने ज़ोर से झटका दिया और अलग हो गई। आंखों पर बँधी पट्टी उसने खोल दी और आगन्तुक को देखकर कहा--'जीनखां, पापी नीच तू यहां क्यों आया।' जीनखाँ ने हँसते हुए कहा--'मैं अपने मन मन्दिर की रानी को देखने आया हूं। मेहरुन्निसा, क्या मैं तानसेन से कुछ कम हूं ?' शाहजादी ने तड़फते हुए कहा--'नीच ! निकल जा यहां से।' सहसा तानसेन वहां आगया। जीनखां अपने प्रतिद्वन्द्वी को सामने पाकर उबल पड़ा और बदला लेने की नीयत से उस पर टूट पड़ा। थोड़ी देर में उस बाग़ में दो तलवारें चमकने लगी। जीनखां गवैये के साथ साथ योद्धा भी था। तानसेन को उसने उठा देने में कोई कसर उठा न रखी। इतने में मेहरुन्निसा की माँ वहाँ आ पहुँची उसने गरजकर कहा-'जीनखाँ।' युद्ध बन्द हो गया, जीनखां को वहां से निकल जाने को मल्का ने कहा। जीनखां दांत पीसकर वहां से चला गया।

सम्राट अकबर ने यह घोषित किया कि भारत के सभी प्रमुख सङ्गीतज्ञ बुलवाए जाकर एक जल्सा किया जायगा, जो उसमें जीत जायगा, उसके साथ मेहरुन्निसा का ब्याह कर दिया जायगा। भारत भर के कलाकार बुलाए गए, जल्सा हुआ। सम्राट ने जीनखां से गाने को कहा, तो जीनखां ने कहा-'सम्राट तानसेन को आज्ञा दी जाय कि वह पहले गायें, मैं बाद में गाऊँगा। मैं आजतक दरबारी गवैया था, मैं तानसेन के बाद ही गाऊँगा। तानसेन किसी भी शर्त पर मेरे पहिले गाए।' सम्राट ने तानसेन की ओर देखा। तानसेन ने कहा-'सम्राट मैं मल्हार राग गाकर ताजे बरसे हुए जल का एक कटोरा आपको पिलाऊँगा। जीनखाँ यदि यह कर सकता हो तो करदे।' यह शर्त सुन जीनखां विचलित हो उठा। तानसेन ने मल्हार गाकर सम्राट को एक कटोरा ताज़े जल का पेश किया। जीनखाँ ने फिर न गाया। तानसेन का विवाह मेहरुन्निसा के साथ होगया। जीनखाँ ने तानसेन को मारने का उपक्रम भोजन में विष देकर किया, लेकिन तक़दीर जीनखां के विरुद्ध थी, पता लग लया, और जोनखां को देश निकाला दे दिया गया।

× × ×

तानसेन अकबर के नव-रत्नों में से एक होगया था। तानसेन ने अपने वैवाहिक जीवन को बड़े आनन्द से काटना शुरू किया। सम्राट से कहकर तानसेन ने आगरा शहर में इस बात की डुग्गी पिटवादी कि-'जो शख्स शहर में से गाता हुआ निकलेगा, उसे तानसेन से मुकाबिला करना पड़ेगा।' एक बार एक साधुओं की टोली गाती हुई उधर से निकली। प्यादों ने नियमानुसार उन्हें पकड़ कर

तानसेन के सामने पेश कर दिया। बेचारे साधु तानसेन के सामने क्या गा सकते थे। तानसेन के कहने से उनको मौत के घाट उतार दिया गया। तानसेन ने उस टोली में एक लड़के को अबोध जान छुड़वा दिया। वह लड़का अपने पिता की मृत्यु से व्याकुल होकर रोने लगा। वह लड़का आगरे से चल दिया और वृन्दावन मथुरा पहुँचा। वहां हरिदास जो तानसेन के सङ्गीत-शिक्षक ने लड़के को रोते पाया, उससे रोने का कारण पूछा, उसने सारा विवरण कहा। हरिदास ने उसे शान्ति दी और सङ्गीत की शिक्षा देना शुरू किया। धीरे-धीरे उसने सङ्गीत में खूब उन्नति करली और एक कलाकार बन गया। एकही साध पूरी करने के लिए उसने सङ्गीत से जी जान लड़ाकर शिक्षा पाई थी। उसकी वह साध थी तानसेन का मान-मर्दन करना।

एक दिन वह आगरे जा पहुँचा, उसका नाम बैजू था। वह गाते हुए शहर में निकला-'बड़ी है ओट हरिचरनन की।' नियमानुसार प्यादों ने उसे पकड़कर दरबार में तानसेन के सामने पेश किया। सम्राट अकबर सिंहासन पर बैठे हुए थे। तानसेन एक तरफ खड़ा मुस्करा रहा था। सामने बन्दी युवक 'बैजू' खड़ा था। तानसेन ने हमेशा की तरह टोड़ी राग गाया। मृगों का एक झुण्ड जङ्गल से आया। एक के गले में तानसेन ने रुद्राक्ष माला डालदी। राग बन्द हुआ। मृग भाग गए। सम्राट ने बैजू से कहा--'उस मृग को वापिस बुलाकर माला निकालकर तानसेन के हवाले करदो।' बैजू ने सितार उठाई। गाना आरम्भ किया। दरबारी कलाकार की कला पर मुग्ध हो झूमने लगे। सामने मृगों की टोली आई। बैजू ने मृग के गले से माला निकाल ली। उसके बाद सम्राट ने कहा-'युवक अब तुम्हारी बारी है।' तानसेन हमेशा मुस्कराने वाला अबकी बार चुपचाप खड़ा था। बैजू ने गाना आरम्भ किया। सामने एक शिला पड़ी थी। सम्राट ने देखा, सङ्गीत के प्रभाव से वह शिला पिघल रही है। शिला पिघल जाने पर बैजू ने अपने मँजीरे उसमें रख दिए। शिला पहिले की तरह फिर से कठोर हो गई। बैजू ने गाना बन्द किया। और सम्राट! तानसेन की अब तभी जीत है, जब वह मेरे मजीरे इस शिला से बाहर निकाल कर मेरे हवाले करदे ?' सम्राट का इशारा पा तानसेन ने गाना शुरू किया। दरबारियोंके हृदय पिघल गए पर शिला न पिघली! न पिघली!! तानसेन हार गया। सम्राट अकबर सिंहासन से उतर आए और बैजू से कहा--नियमानुसार जल्लाद तानसेन के प्राण तुम्हारा इशारा पाकर ले सकता है।' बैजू मुस्कराया और बोला--'सम्राट! मैं शत्रु को मुआफ करना ज्यादा पसन्द करता हूं। आज वही 'तानसेन' जिसने ८-९ साल पहिले मेरे पिता को एक साधुओं की टोली के साथ मौत के घाट उतारा था, और मुझे अबोध समझ छोड़ दिया था। मेरे सामने पराजित होकर पड़ा हुआ है। तानसेन मेरा

गुरु भाई है।' सम्राट ने फिर कहा--'आखिर तुम चाहते क्या हो ?' बैजू बोला--'सम्राट ! तानसेन ने जो गाने की मनादी की आज्ञा जारी कर रखी है, वह हटा दी जाय।' और वह वहां से बिना किसी प्रकार का उत्तर पा चल पड़ा। बैजू गाता जारहा था-'बड़ी है ओट हरि चरनन की।' 'तानसेन' ने बैजू की पग-धूलि को माथे से लगाया। सभी की आंखें बैजू की तरफ थीं। तानसेन गुनगुना उठा, बड़ी है ओट हरि चरनन की।'

'तानसेन' को यह हार बहुत बुरी लगी। वह अब उदास रहने लगा और अक्सर दुख के समय वह यही गुनगुनाया करता था, 'बड़ी है ओट हरिचरनन की।' और उसी से उसे शान्ति मिलती थी।

एक दिन सम्राट अकबर ने दरबार में यह प्रश्न किया कि सब रागों में बड़ा राग कौनसा है ? सभी ने कहा--'दीपक राग' तभी सम्राट ने कहा--'उसे कौन गायेगा ?' सभी ने कहा-तानसेन सम्राट ने कहा-'तानसेन दीपक राग गाओ।'

तानसेन ने कहा--'सम्राट ! दीपक राग के गुणों को मैं मानता हूं, इसके गाने से अन्धेरे में दिए आप-से आप जलने लगते हैं, पर इसके प्रभाव से गाने वाला भी नहीं बच पाता। लेकिन सम्राट ने एक न सुनी। तानसेन को हार कर गाना ही पड़ा। तानसेन ने अन्धेरी रात में बन्द दियों के गाना शुरू किया। हर एक तान से ऐसा प्रतीत होता था कि मानो चिनगारियां निकल रही हों। तानसेन के साथ-साथ उसकी पुत्री मल्हार राग तानसेन के आदेश देने से गारही थी। दीपक राग के प्रभाव से दिए जलने लगे। लेकिन तानसेन का सारा शरीर झुलस गया था। सम्राट को अपनी ग़लती तब मालूम हुई।

तानसेन के लिए भारत के बड़े-बड़े वैद्य बुलाए गए, पर वह ठीक न हो सके। उन्होंने भ्रमण करने का निश्चय किया। एक बार वे अहमदाबाद पहुँचे। साबरमती नदी के किनारे डेरा डाला गया। एक दिन दोपहर को दो स्त्रियां घाट पर पानी भरने को आईं उनमें से एक ने मेघराग गाया। तानसेन ने राग सुना। धीरे-धीरे पानी बरसने लगा। तानसेन डेरे से बाहर आया और पानी में नहाने लगा। उसके शरीर को ठण्डक मिली और उसका शरीर अच्छा होगया। तानसेन स्त्रियों के पास गया। तानसेन ने परिचय दिया और उनका परिचय पूछा। उन्होंने कहा--'मेरा नाम 'तोम' है और दूसरी का नाम 'ताना' है। तानसेन ने उनसे आगरे चलने का आग्रह किया। वे अगले दिन चलने को तैयार हुईं। लेकिन अगले दिन उन दोनों की किसी ने हत्या करदी। तानसेन को इसका बड़ा सदमा पहुँचा। लेकिन क्या कर सकता था।

आखिरकार एक दिन वह सङ्गीत कला का साक्षात् अवतार इस दुनियाँ से उठ ही गया। तानसेन की अन्तिम इच्छा यही थी कि उनकी समाधि ग्वालियर में पीर साहब की समाधि के पास ही बनाई जाय। तानसेन की समाधि हज़रत मुहम्मद गोस की समाधि के पास ही छोटीसी है। उस छोटी-सी समाधि के नीचे भारत का वह अमर कलाकार तानसेन एक घोर निद्रा में चिरकाल से सो रहा है।

हम ऊपर तानसेन के जीवन पर प्रकाश डाल आए हैं। यद्यपि हम संक्षेप रूप में ही लिखने की चेष्टा करते रहे फिर भी लेख लम्बा होगया है। हमने जीवनी लिखने के साथ-साथ इस बात की अवश्य चेष्टा की है कि वह कहानी-सी लगे और पाठकों का मनोरञ्जन भी हो।

(चित्रपट)

छोड़दे माँ वीणा की तान

(श्री शरदकुमार मिश्र 'शरद' वैद्य भूषण)

हृदय तन्त्री के टूटे तार कर उठे दिव्य मधुर झङ्कार।
निराशा के जीवन में पुनः हो उठे आशा का संचार॥
मुझे भी हो स्वर की पहचान।
छोड़ दे माँ वीणा की तान॥
ध्वनित हो ऐसा अंतर्नाद सुनाई दें फिर ऐसे गीत,
लिए हो जो जागृति-सन्देश शत्रु भी बनें हमारे मीत,
दूर हो सदियों का अज्ञान।
छोड़ दे! माँ वीणा की तान॥
देख स्वाधीन सूर्य का उदय करे भारत उसका सत्कार,
जगत में जननी फिर से गूंजे उठे तेरी ही जयजय कार,
विश्व में हो तेरा सन्मान।
छोड़ दे माँ वीणा की तान॥

—:(*):—

हिन्दी कहानी

(ले०—श्री० कुमारी स्वर्ण "स्याल")

वह लेटी थी, अपने कमरे में। आराम कुर्सी उसके शिथिल शरीर का भार संभाल रही थी सामने एक छोटी सी मेज पर कुछ पत्र पत्रिकायें बिखरी हुई थीं। यह कौन कह सकता है कि उसे किस विचार ने आ घेरा है। केवल इतना ही अनुभव किया जा सकता है कि उस कमरे में यदि कुछ है तो केवल उसका शरीर। उसकी विचारधारा किस ओर प्रवाहित है, यह एक कठिन प्रश्न है।

"अरी पगली" !………।

उत्तर मिले तो कैसे. वह तो किसी दूसरे ही संसार में विचर रही थी। उसको क्या पता कि कोई उसके पीछे खड़ा होकर उसके इस 'पागलपन' पर हँस-रहा है। कुछ क्षण बाद उसे अपनी अवस्था का ज्ञान हुआ। उसने अलसाई हुई आँखों से चारों ओर देखा, कुछ झिझकते हुए तथा मनोभावों को छिपाते हुये।

"अरे ! निली ? तू कब की खड़ी है ?"

निली-(उसके हाथ पर चुटकी लेते हुए) "इसीलिये तो हम लोग तुझे 'पगली' कह कर पुकारते हैं। कुछ दिनों के बाद सुनने में आयेगा कि नौमी सन्या-सिनी बनगई है"।

"हूं-तुझे हो क्या गया है ? तू यहां आई किस लिये है ? यह तुझे बतलाना होगा" ?

"ओह ! समझी (रुककर) अच्छा यह तो बता कि प्रमोदशंकर का नाच किस समय शुरू होगा।" (निली दोनों होंट दबाकर हँसती है) "उनका प्रोग्राम तो आज है ही नहीं"।

"तुझे मसखरेपन के सिवा और भी कुछ आता है" ?

"मसखरापन नहीं—तू तो जानती है कि वह कानफ्रेंस इत्यादि में जाना नहीं पसन्द करते। कल तो जबरदस्ती पकड़ लाए गए थे पता नहीं आज के प्रोग्राम में उनका नाम क्यों कटा हुआ है"।

"तो आज नाच होगा ही नहीं" ?

"उसमें भी अभी कोई शंका है" ?

(कुछ अनमनी होकर) "खैर! मेरे भाग्य में यही लिखा हुआ है कि जितना इस कला को अपनाऊं उतना ही वह मुझसे दूर भागे। यदि सन्तोष है तो केवल इतना ही कि मेरे भाई ने इस बारे में मुझे पूर्ण स्वतन्त्रता दे रक्खी है नहीं तो कोई भी यह नहीं चाहता कि मैं नृत्यकला सीखूं। मैंने तो अपना जीवन ही इसे समर्पित कर दिया है निली"।

"मेरी समझ में ही नहीं आता कि उसके लिए इतनी परेशान क्यों रहती है। न मालूम तू अपने नृत्य में कौनसी विशेषता लाना चाहती है"। मुझे तेरा नाच तो औरों से कहीं अधिक पसन्द है"।

"निली" यह बातें समझ में तभी आयेंगी जब तू हरएक नर्तक के एक-एक भाव पर भली भांति विचार करेगी। कल यदि तू ध्यान से देखती तो मालूम होता कि प्रमोदशंकर के एक-एक भाव में कितनी गहराई थी। तूने देखा होगा कि लोग यह प्रदर्शन करते हैं कि कृष्ण जी ने मुरली उठाई, अधरों पर रक्खी और बजाई। परन्तु कल के पहले मैंने मुरली ग्रहण करने की सही क्रिया नहीं देखी थी। लोग दोनों हाथों में मुरली उठाते हैं और अधरों पर रखकर पोज़ बनाकर खड़े होजाते हैं। प्रमोदशंकर ने उसके उठाने में केवल थोड़ा सा ही अन्तर किया था। यानी मुरली उठाकर अधरों पर रखने से पहले दाहिना हाथ उस पर से उठाकर नीचे की तरफ से लेगए थे। और फिर बाहर की ओर से उंगलियाँ मुरली पर रक्खी थीं। इस बात से ही कितनी सुन्दरता बढ़गई थी यह बात शायद तू नहीं समझ सकी। उन्हों ने कितना अभ्यास किया है यह समझ के बाहर है"।

"ओह-अब तुझे किस तरह समझाऊँ? देख मुरली बजाते समय बांया हाथ ऊपर की ओर रहता है दाहिना हाथ नीचे की ओर। (कोई २ उसके बिपरीत दाहिना ऊपर तथा बांया हाथ नीचे की ओर रखते हैं) परन्तु जब मुरली उठाते हैं तो दोनों हाथ ऊपर की ही ओर रहते हैं। अब यदि दाहिना हाथ मुरली पर से हटा कर बाहर की ओर से घुमाकर उस पर न रक्खा जाये तो ऐसा भास होने लगेगा कि मुरली तोड़दी गई है।"

नोमी-ठीक कहती है देख मैं तो नृत्यकला बिलकुल नहीं जानती परन्तु देखती हूं कि इन बातों का प्रभाव मेरे ऊपर काफी पड़ता है। कोई कितना ही अच्छा गाना क्यों न गाए परन्तु उसके विचार पूर्ण रूप से उसमें प्रकट नहीं होते हैं। नृत्य एक ऐसी कला है जिसके द्वारा एक नर्तक अपने विचारों का यथार्थ रूप में चित्रण कर सकता है, यह मैं अपने अनुभव की बात कहरही हूं"।

"नहीं तूही क्या यह मेरा भी अनुभव है कि जो विशेषतायें नृत्य कला द्वारा दिखाई जा सकती हैं वह गाने में नहीं आसकतीं हैं। जैसे एक गोपी का कृष्ण जी के विरह में दुःखी होना उनके दर्शन को प्रार्थना करना फिर न मिलने पर निराश होना। यह सब बातें नृत्य में सविस्तार दिखाई जा सकती हैं। वह किस चाव से एक-एक फूल को तोड़ती हैं और प्रेम से माला गूँथती है, उस समय कृष्ण जी के न रहने पर किस प्रकार दुःखी होती हैं, प्रार्थना करती हैं तो किस प्रकार, यह बातें तरह २ के पौज़ों के द्वारा दिखाई जा सकती हैं। गानों में केवल रसों का प्रदर्शन किया जा सकता है वह भी तब, जब कि गायक बहुत ही कुशल हो। भाव उसमें भी आते हैं परन्तु वह कविता की सहायता से और वह कविता भी काफी बड़ी होगी। परन्तु उसमें श्रेय गाने को नहीं मिलेगा"।

"एक बात मैं अवश्य कहूँगी कि इतनी सब बातें मान लेने पर भी यह कहना ही होगा कि गाने का प्रभाव मनुष्य पर अधिक समय तक रहता है। परन्तु नृत्य के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं है।"

"यह बात मैं मानती हूं, परन्तु नव-रस जितनी सफलता से नृत्यकला द्वारा प्रदर्शित किए जा सकते हैं उतनी सफलता के साथ गाने में नहीं। जन-साधारण के ऊपर प्रभाव डालने के लिये नृत्य ही एक कला है, उसी के द्वारा ऐसे मनुष्य पर जो कि इस कला को नहीं समझता है प्रभाव डाला जा सकता है। मैं तो चाहती हूं कि उस कला की पराकाष्ठा तक पहुँच जाऊँ। निली मैं तो वास्तव में बिलकुल पागल हूं। मैं इसकी तह में जाना चाहती हूं। परन्तु इसके लिये तपश्चर्या की आवश्यकता है। मैं जब देखती हूं कि एक नर्तक (पुरुष) उन बातों को अधिक सफलता से दिखाता है जो कि स्त्रियों के करने की है, तो दिल में एक हूकसी उठती है। यद्यपि मैं अपना घर बार छोड़ कर यह कला सीखने आई हूं, परन्तु यह तपश्चर्या नहीं है अभी तो और अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा"।

"मेरी समझ में नहीं आता आखिर तू चाहती क्या है। जब तू इन विशेषताओं को समझती है तो उनको अपने नृत्य में लाती क्यों नहीं? यदि और स्त्रियाँ नहीं कर सकतीं तू करती क्यों नहीं? तुझे रोकता कौन है?

"देख 'निली' यह बातें समझ में आती हैं केवल देखने से। कितने दिनों बाद कल एक सुअवसर मिला था उससे जो कुछ समझ सकी उसे सीखने की कोशिश की। मैं सोचती थी आज फिर कोई नई बात मिलेगी, परन्तु दुर्भाग्य से आज नाच का कोई प्रोग्राम ही न होगा। क्या करूँ जो नवीनता मैं चाहती हूं वह स्वतः तो नहीं आती वह केवल देखने से ही ध्यान में आ सकती है। इसके अतिरिक्त मैं इतनी योग्य नहीं कि उन सब बातों को एक बार ही देख कर समझ जाऊँ, फिर सीखना और करना तो बाद की बात है। क्या करूँ? मैं तो समझती हूं मेरा

जीवन तो ऐसे ही नष्ट हो जायगा। मैं जिस आदर्श को स्थापित किया चाहती हूं वह न हो सकेगा। जिन विशेषताओं पर मेरा लक्ष्य है उसमें से कुछ मुझे प्रमोदशंकर के नृत्य में मिल सकीं। इसके अतिरिक्त और किसी के नृत्य में मेरी चाही हुई बातें देखने को न मिली। आह! कितनी सुन्दर मुद्रायें थी तथा कितने अच्छे पोज़! ऐसा भास होता था मानों उन्होंने वर्षों धनुर्विद्या सीखी है। एकबार जब उन्होंने धनुष पर तीर चढ़ाकर खींचा और छोड़ा (ओह याद करते ही शरीर में कंपन होता है) मैं तो डर गई मानो वास्तव में किसी ने तीर चलाया है। उनके घूँघटके भाव (कहते हुए लज्जा आती है) शायद स्त्रियां वास्तव में इस प्रकार नहीं करतीं जैसा कलापूर्ण प्रदर्शन प्रमोदशङ्कर ने किया"।

"नोमी! तुझे क्या होगया है जो इतना बकती है"।

"ना···· 'निली' ऐसा मत कह, मैं तो पगली हूं पगली। मैं तन मन धन से उसके पीछे पड़ी हूं यदि मुझे किसी बात की निराशा होती है तो मेरा मन स्थिर नहीं रहता और रहे भी कैसे मैं तो चाहती हूं कि इसके तत्व को जानूं परन्तु वह हो नहीं पाता कोई न कोई बाधा उपस्थित हो जाती है। कह नहीं सकती कि सफलता मिलेगी भी या नहीं"।

"तू अकारण ही इतनी निराश क्यों होती है? इसके लिए कुछ प्रयत्न कर"।

"देख 'नोमी' प्रयत्न और क्या करूँ ढेरों तो पत्रिकायें मँगाती हूं परन्तु उनमें भी सब इधर उधर की बातों के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलेगा। कितने लोगों का नृत्य देखा उसमें भी मेरे आदर्श को किसी ने न पाया नहीं तो उसी से सीखने का प्रयत्न करती। तू नहीं जानती यह बातें सोचकर मुझे कितना दुःख होता है। अपनी बेचैनी को मिटाने के लिए सिनेमा देखने जाती हूं परन्तु उससे भी कुछ लाभ नहीं। वहां भी ऐसी चीजें देखने को मिलती हैं जिनसे कोई लाभ नहीं। कह नहीं सकती कि उन लोगों को कुशल नर्तक मिलते ही नहीं या वह पैसा कमाने के लिए ही जन साधारण की प्रवृत्ति के अनुकूल नृत्य दिखाते हैं। कुछ भी हो यह तो मानना ही पड़ेगा कि यह कला दिन पर दिन नष्ट होती जा रही है। क्योंकि इसमें भी विदेशी नृत्य की झलक आने लगी है। अब इसे कला कहना तो व्यर्थ है अब तो यह केवल एक मन बहलाव की चीज रह गई है। कहरवा और त्रिताल के सिवाय और कोई ताल तो सुनने में आते ही नहीं हैं। कह नहीं सकती कि दूसरे ताल किसलिए बनाये गये हैं। क्या प्राचीन काल में लोग इन तालों पर नहीं नाचते थे?"

"अरी ! पगली क्या तू समझती कि जितना स्नेह तुझे इसके प्रति है उतना सबको होता है ? अधिकांश लोग तो इसीलिए सीखते हैं कि थोड़ा सीख जाएँ और पैसा कमाने लगें। उनको कला और लय साधन से क्या प्रयोजन । दूसरे तालों पर नाचने के लिए भी तपश्चर्य्या करनी पड़ेगी ।

"हां 'निली' तू ठीक कहती है। यदि लोग उसको कला की ही दृष्टि से सीखें तो इसकी उन्नति ही न हो जाये।

आजकल तो लोग नवीनता के ऊपर दौड़ पड़ते हैं उनको यह सोचने की आवश्यकता ही कहां है कि अपनी प्रचीन विद्या में क्या २ विशेषतायें लाई जा सकती हैं। जो परिश्रम नई चीज तैयार करने में करते हैं यदि उसका आधा ही अपनी प्राचीन कला के प्रति करें तो उसकी कितनी उन्नति हो सकती है एक ही चीज़ में कितनी ही सुन्दर तथा नई बातें पैदा की जा सकती हैं । प्राचीन नर्तकों के नृत्य की झलक तो अब स्वप्न में भी देखने को नहीं मिलती अब तो उनके चिरपरिश्रम द्वारा एकत्रित की हुई चीज़ों का नाम मात्र ही बाकी रह गया हैं। आजकल के लोग टुकड़े परन तो नाचते ही कम हैं परन्तु 'गतभाव' भी पूर्ण रूप से नहीं दिखाते हैं।"

"क्यों आखिर गतों में क्या कोई कमी रह जाती है ? या वह अधूरी रहती हैं ?"

"नहीं नहीं मेरा कहने का मतलब यह नहीं है । वह गतें एक प्रकार से संपूर्ण हैं परन्तु अन्तर केवल उतना ही है जितना कि आजकल के लोगों के तानपूरा मिलाने में तथा पुराने ज़माने के लोगों के मिलाने में होता था । आजकल भी लोगों की समझ में वह ठीक ही होता है, और ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं कि जब तान पूरे के जोड़े के दो तार बिलकुल सही मिल गये हैं तो वह टूट गये हैं।"

"तेरी प्रत्येक बात विचित्रता से भरी होती है और मेरी समझ में आती नहीं है। मैं करूं क्या यदि मैं कुछ कहती हूं तो तू दुखी होती है।"

"मेरा तेरा इतने दिनों का साथ है परन्तु दुःख है कि तू मुझे पहचान न सकी। तू क्या मुझे तो शायद कोई भी नहीं पहचान पायेगा और मेरा जीवन ही दुःखमय रहेगा। तू मुझे पागल समझती है, दनिया मुझे बेवकूफ, खैर, तू कुछ भी समझे मुझे इससे क्या"......।

"नोमी तू मुझे माफ कर दे मैं तुझे जान बूझ कर दुःखी नहीं करती बल्कि मैं वास्तव में तुझे समझ नहीं पाई। तू मेरी बातों से दुःखी न हुआ कर । तू

जानते हुये भी नहीं जानती इस हृदय में क्या वेदना है। मैं केवल तेरी बातों को समझना चाहती हूं शायद मेरा भी कुछ लाभ हो जाये। उसे समझा दे ना......।

"क्या समझाऊं–तू उसे भी पागलपन समझेगी।"

"नहीं नोमी मैं कहती हूं कि अब मैं कुछ न बोलूंगी।"

"अच्छा सुन–आजकल लोग जो 'गत भाव' दिखाते हैं उनमें से एक यह भी है कि एक सखी पनघट पर जल भरने जाती है। उसका घड़ा उठाना, सर पर रखना, और चलना, फिर नदी के किनारे घड़ा उतार कर रखना और भरना उसके बाद फिर उठा कर सर पर रखना और चलना, इतनी बातें तो मामूली से मामूली नृत्यकार भी अपने नृत्य प्रदर्शन में सफलता पूर्वक दिखाते हैं।

परन्तु अब तक किसी के ध्यान में यह बात नहीं आई कि अपने मकान से पनघट तक जाने से पगडंडी पर काँटे भी तो मिलेंगे। और वह कांटे उस सुकुमार सखी के कोमल पैरों में भी चुभेंगे। वह उसके चुभ जाने पर किस प्रकार व्याकुल हो जायेगी तथा झुककर किस प्रकार उसे निकालेगी इसके अतिरिक्त जब वह सखी घड़ा भर कर सर पर रखने लगेगी तो क्या उसे उठाने में तकलीफ न होगी ? संभव है कि वह कोमल हाथ जो कि कृष्ण जी के लिये सदा माला गूँथते थे, इस भरे हुये घड़े का भार न सह सकें और उस सखी की सुकुमार कलाइयां ही मुरक जायें। वह घड़े को छोड़कर एक क्षण के लिये व्याकुल हो जाए और फिर उसे उठाये ....आह यह बातें पुरुषों के ध्यान में कब आ सकती हैं। वह सुकुमारता का अनुभव करें तो कैसे, वह तो नौकरों के आधीन रहते हैं। उनको यह अनुभव कैसे हो कि एक व्यथिता जब जल भरने जायेगी वह तो उस रास्ते के कांटों पर निगाह डाल ही नहीं सकती। उसके नेनों में तो घनश्याम की मनोहर मूर्ति बसी है। वह तो उसे एक क्षण भी दूर नहीं करना चाहती है। उसको उतना अवकाश कहां कि रास्ते की ऐसी सूक्ष्म चीज को देख सके फिर एक क्या न जाने कितने कांटे चुभ सकते हैं। मेरे ख्याल से यह बातें अगर उस गत में दिखाई जायें तो उसकी सुन्दरता कहीं अधिक बढ़ जायगी। इसके विपरीत गतों में कोई ऐसी रोक नहीं रहती है कि वह दो या चार ही आवरतन में समाप्त हो जाये कांटे का लगना और उसका निकालना और फिर चलना एक आवतरन में हो सकता है जैसे घड़ा उठा कर चलने पर 'ता थेई थेई' कहने के बाद 'तत' पर उसके कांटा लगता है। बाकी हिस्से में (यानी 'आ थेई थेई 'तत' तक) वह कांटा निकाल चुकेगी और फिर सम से चाल चलने लगेगी। इसी प्रकार उससे घड़ा न उठना तथा उसकी कलाई मुरक जाना भी बड़ी सरलता के साथ दिखाया जासकता है। जैसे समय पर वह घड़ा उठाना शुरू करती है और 'तत' पर उसे

छोड़ देती है उसके बाद हम तक उसके मुख पर उस समय क्या भाव होगा यह भी दिखाया जा सकता है फिर सम से घड़ा उठा कर तत् पर घूम कर बाकी गत पूरी की जा सकती है। क्या इससे उस गत की सुन्दरता दस गुनी अधिक नहीं बढ़ जायगी ?"

"नोमी यह तो बता क्या यह आवश्यक है कि जो बातें संभव हो वह सब दिखाई ही जायें ?"

"हां, यदि सखी के घड़ा उठाने तथा चलने मैं लचक और सुकुमारता दिखाई जाती है तो फिर ऐसी बातें क्यों न दिखाई जायें जहां कि उन बातों की पराकाष्ठा हो जाती है नहीं तो फिर सुकुमारता का नाम ही न लाया जाये। उसके स्थान पर एक बुन्देलखण्ड की स्त्री को दिखाया जाये तो बिचारी दो २ घड़े सर पर, एक बगल में और दूसरी बगल में अपने बच्चे को लेकर चलती है जिसके पैर के तलुवों में कांटा असर ही न करेगा। उन बिचारियों को क्या पता कि कांटा लगने पर एक सुकुमार सखी की क्या अवस्था होगी तथा जब वह मुँह बनाकर अपने सुकुमार हाथों से उसे निकालेगी तो उसकी सुन्दरता भी कई गुनी अधिक बढ़ जायेगी। तथा उससे घड़ा न उठने पर हताश होकर, और कुछ चिढ़कर हाथ झिटकने पर उसकी सुकुमारता भी टपक पड़ेगी। 'निली यह बातें तो मैं अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार कह रही हूं परन्तु जिन लोगों ने नृत्य कला के पीछे अपना जीवन व्यतीत कर दिया है वह तो इससे कहीं अधिक नवीनताएँ ला सकते हैं परन्तु दुःख तो यह है कि वह लोग उस ओर ध्यान नहीं देते।"

'नोमी-अच्छा यह तो बतला कि यदि आज प्रमोदशंकर का नृत्य होता ता तू क्या करती ?"

'मैं क्या करती ?......मैं जाती और उसके एक एक भावों को घोल कर पी जाने की कोशिश करती 'निली' मैं तो प्यासी हूं उस कला की। प्यासे को यदि पानी मिल जाये तो उसको अपनी सुध ही कहां रहती है।"

"तो शायद तू वहां से लौटती भी नहीं।"

नहीं .....लौटती तो......किन्तु एक 'दिवानी बन कर 'निली'।

कविता कुञ्ज

आवाहन

(ले०--श्री० चन्द्रशेखर पाण्डेय "चन्द्रमणि")

प्रभो ! अबतो भारत में आना पड़ेगा ।
किया प्रण जो उसको निभाना पड़ेगा ॥

अनेकों दुखी देवकी जैसी नारी,
पड़े जेल वसुदेव से धर्मचारी,
अनेकों बढ़े कंस से पापकारी,
मगर कोई देखा नहीं कष्ट हारी,
कुटिल नीति को अब मिटाना पड़ेगा ।
किया प्रण जो उसको निभाना पड़ेगा ॥

निराशा में छोटा हुआ है गोवर्धन,
न यमुना की लहरों में पहले सी थिरकन,
न ब्रजवासियों में है वह शान्त जीवन,
विलखती हैं गायें बीराना हैं वन-वन,
तुम्हें फिरसे ब्रजको बसाना पड़ेगा ।
किया प्रण जो उसको निभाना पड़ेगा ॥

बुलाता तुम्हें वृन्दावन बन बीराना,
दुखी बंशीवट का लुटा है खज़ाना,
सदा खोजता है पपीहा दीवाना,
सुनाती है कोयल भी करुणा का गाना,
तुम्हें फिरसे मुरली बजाना पड़ेगा ।
किया प्रण जो उसको निभाना पड़ेगा ।

कभी प्रेम की रागिनी थी सुनाई,
मगर आज तो आपसी फूट आई,
ये भारत पै दुखकी घटा घोर छाई,
नहीं देखते क्या बताओ कन्हाई ?
कृपा का गोबर्धन उठाना पड़ेगा ।
किया प्रण जो उसको निभाना पड़ेगा ।

उसी भांति भारत ने फिर युद्ध ठाना,
किया शंख का नाद ले वीर बाना,
मगर है अकर्मण्यता का जमाना,
करे 'चन्द्रमणि' शोच अर्जुन अमाना,
तुम्हें फिरसे गीता सुनाना पड़ेगा ।
किया प्रण जो उसको निभाना पड़ेगा ॥

--:(*):—

तड़फना ही !

पूँछते क्या मेरा इतिहास ?

सदा 'रोदन' का ही श्रृङ्गार,
किया करती हूं, हे भगवान।
बनाती नित आहों का हार,
समझती हूं, ठोकर सन्मान ॥

टीस में देखा करती प्यार,
वेदना में जग-मग जीवन।
'भूल' में इस जीवन का सार,
शून्य में प्यारा परिवर्तन ॥

तड़फना ही मेरा परिहास,
पूछते क्या मेरा इतिहास ?

–'रमेश'

---o---

मां के प्रति !

तुम्हीं से ही मां पाया है, यह जीवन यह सुन्दर देह।
और तुम्हारे ही चरणों में, लय कर दूंगा निस्सन्देह ॥
क्षण भंगुर जीवन-सुख में, बिसरेगा मुझको न अपान।
इन्द्रिय जन्य वासनाओं पर, बनता नहीं मुझे है श्वान ॥
इस विस्तृत जीवन प्रांगणमें, क्या सुख है और दुःखही क्या?
केवल सन्तोष चाहिये मन का, क्या कुटिया प्रासाद है क्या ?
हूं विरत हुआ जग माया से, तब सेवा करने को मां !
अपना तो है मोक्ष यही, यदि काम तम्हारे आऊँ मां !!
कुछ ममत्व अवशेष रहा यदि, दो मुझको बस यह आशीष।
तब स्वतन्त्रता-वेदी पर हँसते-हँसते चढ़ा सकूं मैं शीश ॥

–'चातक'

---o---

यमुना तट !

सुन्दर निशि औ चन्द्र-छटाकी, समावेश ये कैसी !
कौमुदी के सुन्दर राशी से, धौत धरातल जैसी ॥
मृदु समीरन से होकर के, पुष्प-मधु हैं बहते ।
तरङ्ग-युक्त-जल थरिक-थरिक कर कल-कल रव हैं करते ॥
निशाकाल के शीतलता में, पल्लव कुसुम लतायें ।
मन को प्रफुल्लित करती है, कैसे उसे बतायें ॥
मग जोगनी के पांतू सोभते, जैसे सुन्दर तारे ।
झिंगुर अविरल रव करते हैं, सुप्त जगत है सारे ॥
ऐसे सुन्दर दृष्य मनोहर, हृदय-ताप को हरते ।
जल में शशी प्रतिबिम्बित हो, झिल-मिल २ करते ॥
प्रकृति के प्राञ्जलमूर्ति, बैठ निशीथ में देखो ।
पवन-गती के मधुर ध्वनी को, शान्ति हृदय में लेखो ॥
यमुना-तट पर बैठ खुशी से, देखूं जब नभपट के ओर ।
क्षण-क्षण में कितने ही चिन्ता, मनको करती हैं बिभोर ॥

–श्री० शिवप्रसाद 'कुमार'

प्यार को ठुकराना है प्यार !

मिलन की मादकता का सार,
पीर की हूकों से भरपूर ।
बनाता, पल-पल में संसार,
मेंटता करता चकनाचूर ।
देखकर अपमें प्रियतम दूर ॥
विधुर, क्रन्दन के कर्कष गान,
व्यथित आंखों में भरकर टेक,
गूंथते हैं आंसू का हार–
आह से करते हैं अभिषेक ।
चाहते हैं 'वो' होना 'एक' ॥
दूर की बातों से था सुना–
कि 'जीवन' ठुकराते हैं प्यार,
अरे ··· मेरी तो इच्छा यही–
चूमलूँ ठुकराना इक बार ।
प्यार को ठुकराना है 'प्यार'॥

(रामनारायण सक्सेना 'रमेश')

	पप मग मम गम	मम गरे गग रेग	गग संनि धप	मग रेस
झाला ३-	संनि धप सग मप	धनि संरें संऽ संसं	ऽसं संसं गम	पध पध
	निसं संऽ संसं ऽसं	संसं पम गरें संनि	संरें संऽ संसं	ऽसं संसं
	पंगं गंरें मंगं रेंसं	संऽ संसं ऽसं संसं	पम धप निध	संनि संऽ
	संसं ऽसं संसं मप	गंमं रेंगं संरें संऽ	संसं ऽसं संसं	मसं संसं
	पसं संसं धसं संसं	निसं संसं संपं पंपं	संमं मंमं संगं	गंगं संरें
	रेंरें मसं संप संसं	संसं धसं संनि संसं	संसं संपं पंसं	मंमं मंमं
	संगं गंसं रेरे रेरे	मसं संप संसं संसं	धसं संनि संसं	संसं संपं
	पंसं मम मम संगं	गंसं रेंरें रेंरें गंमं	गंरें गंरें संरें	निसं निध
	निध पध मप मग	मग मरे सरे गप	धऽ धऽ धऽ	गप धऽ
	सरे गप धऽ धऽ	धऽ गप धऽ सरे	गप धऽ धऽ	धऽ गप

ताल—त्रिताल

मात्रा १६

ले०—विश्वनाथ मुकुन्द तबला एन्ड मृदंग मास्टर मा० सं० वि० लश्कर (ग्वालियर)

ना	धीं	धीं	ना	ना	धीं	धीं	ना	ना	तीं	तीं	ना	ना	धीं	धीं	ना
×				२				०				३			

(लय विलंवित)

प्रकार १

धा	धीं	धीं	धा	धाधा	धीं	धागे	तीरकीट
×				२			
धा	तीं	तीं	ता	धाधा	धीं	धागे	तीरकिट
०				३			

प्रकार २

धागे	नधा	तीरकिट	धा	धाऽ	धागे	नधा	तीरकिट
×				२			
तागे	नता	तीरकीट	ता	धाऽ	धागे	नधा	तीरकिट
०				३			

प्रकार ३

धा	तीरकिट	धागे	तीरकीट	धाऽ	धागे	तीरकिट	धीन
×				२			
ता	तीरकिट	तागे	तीरकिट	धाऽ	धागे	तीरकिट	धीन
०				३			

प्रकार ४

तीरकिट	धीं	धीं	धा	धाऽ	धागे	तीरकिट	धीन	तीरकिट	तीं	तीं	ता	धाऽ	धागे	तीरकिट	धीन
×				२				०				३			

नृत्य का एक भाव

साधना बोस का एक पोज़
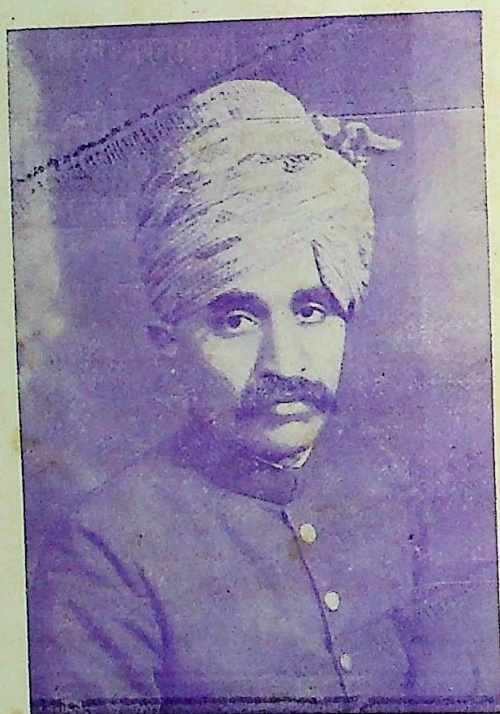
प्रसिद्धि कलाकार

श्री० मास्टर मोहनलालजी कत्थक

जैपुर

आप प्राचीन गायकी के लिये प्रसिद्ध हैं कुमारी आशा ओझा की नृत्यशिक्षा का प्रारम्भ आपही के द्वारा हुआ था। आपकी कुछ मधुर स्वरलिपियां इस अङ्क में छपी हैं। नृत्य सम्बन्धी लेख आदि का निरीक्षण भी आपही ने किया है।

श्री० विश्वम्भरनाथजी भट्ट

आप सङ्गीत के साथ २ साहित्य के भी प्रकाण्ड पंडित हैं। आप 'सङ्गीतकला' की बराबर सेवा करते चले आरहे हैं। आपका एक लेख पृष्ठ १२१ पर पढ़िये।

G. P. H.

नृत्य के लिये सारंगी और बेलाके लहरे

(लेखक—नृत्याचार्य श्री० कृष्णचन्द्र 'निगम')

राग झिन्झोटी, तीन ताल (बिलम्बित लय)

×	२	०	३
र - - -	ग - - -	म - - -	ग रे स रे
प ऽ मप मप	रे ग म प	म ग रे म	ग रे नि़ स

अन्तरा—

सं - - -	न - - -	सं - - -	नि ध प ध
सं - - नि	ध प सं नि	ध प ग म़	ग र ऩ स

झिंझोटी त्रिताल नं० २

प़ म़ प़ -	नि़ ध नि़ -	स - - नि़	स ग म प
ग स ग रे	ग - रे स	सग र स नि़स	नि ध प म

अन्तरा

प म प म	प - म ग	म - प रे	ग रेस नि़ स
प - म ग	म - प रे	ग रेस नि़ स	नि ध प म

राग ज़िला (तीन ताल)

नि - - -	ध - - -	पध नि - धप	ध धप मग म
म - गरे स	रे म प धप	म गरे सरे म	ग रेस नि़ स

अन्तरा

सां - - ध	सां - - रें	· - - रें	सां नीध प ध
सां - - नी	ध म प धप	म गरे सारे म	ग रेसा नी सां

नृत्य और व्यायाम

(श्री० डाक्टर अयोध्यानाथ भट्ट एम० बी० बी० एस० आगरा)

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से नृत्य को मनुष्य जाति के समान ही प्राचीनता का गौरव प्राप्त है। मानव हृदय से नवरसों की अभिव्यञ्जना का नृत्य आदि काल से सुबोध एवम् स्वाभाविक साधन रहा है। आनन्दातिरेक से मनुष्य नृत्य कर उठता है। अबोध बालक भी अपनी इच्छित वस्तु को प्राप्त कर के प्रफुल्लित हो उठता है, और उसके हृदय का यह उल्लास ही उसे अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त करने के पश्चात् नाचने कूदने की प्रेरणा करता है।

नृत्य का यह आदिम स्वरूप ही धीरे–धीरे परिष्कृत होताहुआ कला के रूप में आना आरम्भ हुआ। लोक नृत्य (Folk Dance) इसकी दूसरी सीढ़ी है। गुजरात का गर्बा नृत्य इस रूप का एक अच्छा उदाहरण है। परन्तु मानव हृदय के कोमलतम भावों से ओत प्रोत अभिव्यञ्जना का यह माध्यम अभी उन्नति की चरम सीमा पर न पहुँच सका था। मनुष्य ने इसे और भी परिष्कृत किया, और परिणाम स्वरूप शिष्ट नृत्य का प्रादुर्भाव हुआ।

कला की इस पूजा में मनुष्य जाति को एक और भी लाभ हुआ वह लाभ था 'स्वाभाविक व्यायाम', और यही कारण है कि अनेक शिक्षा सुधारक नृत्य का शिक्षण भी आवश्यक तथा महत्व पूर्ण मानते हैं। नृत्य और व्यायाम का इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि किसी सीमा तक यह कहा जा सकता है कि नृत्य बिना व्यायाम की सहायता के हो ही नहीं सकता। वस्तुतःनृत्य तथा व्यायाम में अन्योन्याश्रित संबन्ध है। इसी कारण कुछ विद्वानों का कथन है कि आधुनिक व्यायाम भी एक प्रकार का नृत्य ही है। 'जिमनास्टिक' का व्यायाम कष्ट साध्य होने के कारण अरुचिकर प्रतीत हुआ। फलतः कठिन व्यायाम का शनैः शनैः लोप होने लगा, तथा उसके स्थान पर सरल व्यायाम की योजना निर्धारित हुई। इस व्यवस्था में पाश्चात्य व्यायाम विशेषज्ञों की इस खोज का भी प्रभाव पड़ा था कि नृत्य तथा नृत्य सदृष्य, शरीर के अवयवों का संचालन अवश्य ही एक प्रकार का सरल तथा लाभप्रद व्यायाम है।

नृत्य में व्यायाम का यह तत्व प्राचीन काल में भी थोड़े बहुत रूप में कुछ जातियों को अवश्य ज्ञात था। युद्ध को कला का रूप देने वाली प्राचीन रोमन जाति को युद्ध नृत्य इसी कारण विशेष प्रिय था, भारतवर्ष में अब भी भील जाति में इस प्रकार का युद्ध नृत्य प्रचलित है। परन्तु व्यायाम की ही दृष्टि से नृत्य का विशेष अध्ययन आधुनिक काल की विशेषता है। स्कूल तथा कालेजों में Physical Drill इसी तत्व के अनुसन्धान का परिणाम है। Physical Drill तथा नृत्य में केवल थोड़ा सा ही भेद है। आंतरिक भावनाओं की अभिव्यञ्जना के लिए शरीर का

ताल बद्ध संचालन ही नृत्य है। Physical Drill में, ताल का अभाव है। परन्तु शरीर सञ्चालन का तत्व अवश्य विद्यमान है। दूसरा अन्तर यह भी है कि नृत्य में शरीर सञ्चालन भाव व्यक्त करने के लिए है, परन्तु Physical Drill में स्वास्थ्य प्राप्ति का उद्देश विदित होता है। फिर भी यदि Physical Drill में ताल और लय का समावेश कर दिया जाय तो हम नृत्य के निकट ही पहुँच जाते हैं।

तांडव नृत्य के सात प्रकारों में जो Rythmic movement of the Body है उसी के अनुकरण से Muscle Control नामक व्यायाम का आविष्कार हुआ है। तांडव नृत्य Muscle Control दोनों ही में गरदन, कन्धा, दोनों बाहु, पीठ, कमर, जंघा और पिंडलियों की मांस पेशियां शक्तिशाली बनती हैं। यदि खुली हवा में यह नृत्य तथा व्यायाम किया जाय तो फुस-फुस भी शक्ति शाली बन सकते हैं। साथ ही मांस पेशियों की वृद्धिके साथ उनकी Wine of Demarcation भी स्पष्ट प्रतीत होने लगती है।

नृत्य में एक विशेषता यह भी है कि, हम बिना जाने हुए ही व्यायाम करते रहते हैं। साथ ही ताल और लय के समावेश के कारण व्यायाम अरोचक नहीं हो पाता। चित्त प्रसन्न रहने से थकावट भी प्रतीत नहीं होती। साधारणतया व्यायाम में इच्छा शक्ति (Will power) जो मस्तिष्क का एक कार्य है, Stimulus का कार्य करती है, और यह Stimulus शिरा (Nerves) द्वारा चलकर मांसपेशियों को संकुचित करता है, परन्तु नृत्य में यह Stimulus नूपुर, ताल, अन्यान्य वाद्य-यन्त्र तथा आंख और कान द्वारा मस्तिष्क में उत्पन्न होकर शिराओं (Nerves) द्वारा होता हुआ मांस पेशियों को संकुचित करता है। इसमें व्यायाम के लिये इच्छा शक्ति की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी से नृत्य द्वारा जो व्यायाम होता है, उसमें इच्छा शक्ति पर कोई जोर नहीं पड़ता और थकावट प्रतीत नहीं होती। तात्पर्य यह है कि व्यायाम किसी भी प्रकार से अरोचक नहीं बन पाता।

ताण्डव नृत्य की अपेक्षा लास्य नृत्य में शारीरिक व्यायाम कम होता है। वस्तुतः ताण्डव नृत्य पुरुषों के लिये और लास्य नृत्य स्त्रियों के लिये है। इस दृष्टि से यदि विचार किया जाय तो स्त्रियों के लिये जितने व्यायाम की आवश्यकता है उतना व्यायाम लास्य नृत्य में अवश्य है। इस नृत्य में Rythmic movements की अपेक्षा Slow and Delicate movements का निरूपण किया जाता है। जिस से भिन्न-भिन्न अङ्गस्थित Poses बनते हैं, और भिन्न-भिन्न भाव प्रकट होते हैं। भाव प्रदर्शन के लिए हाथ, मुंह और नेत्र तथा पैर और शरीर का सञ्चालन व्यायाम की दृष्टि से भी विशेष महत्व रखता है।

——o——

लहरा (नाच) 'राग दुर्गा'

ताल नरेन्द्रश्वर मात्रा ९

(रचयिता तथा स्वरकारः-प्रो० जगदीशसहाय कुलश्रेष्ठ, झांसी)

नोट—यह लहरा ९ मात्रा में होने के कारण कठिन अवश्य है परन्तु पाठकों को विदित हो कि इसी भारतवर्ष में ऐसे २ नृत्यकार हुए हैं और इने गिने अब भी हैं जो इस नीचे दी हुई ताल में नाचते थे। कालका बिन्दा को इस ताल में नृत्य करने का अच्छा अभ्यास था।

	×				२			०	
मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९
ताल	धा	किटतक	तेटे	तेटे	धा	तेटे	कत्त	किटतक	तेटे
स्थायी	प	प	धम	पध	सं	ध	म	रे	धस
अन्तरा	म	प	ध	ध	सं	सं	रें	ध	सं
	मं	रें	सं	ध	म	रे	रेम	सरे	धस
तानें१-	सरे	मप	धसं	रेंमं	पंमं	रेंसं	धप	मरे	सरे
२-	संध	पध	संरें	मंपं	मंरें	संध	पम	रेस	धस
३-	सरे	मप	धसं	धप	मप	धप	मप	मरे	सरे
४-	धसं	रेंसं	धप	धसं	धप	मप	धप	मरे	सरे

५-	प	प	धम	पध	पमं	रेंसं	धप	मरे	सरे
६-	रेंमं	पमं	रेंसं	धसं	रेंसं	धप,	रेम	पम	रेस
७-	प	प	धम	पध	धस़	रेम	पम	रेस	धस़
८-	सरे	मप	धसं	रेंमं	पमं	रेंसं	धप	धसं	रेंमं
	रेंसं	धप	धसं	रेंसं	धप	धसं	धंपं	मरे	सध़
९-	सरे	मप	रेम	पध	मप	धसं	धप	मरे	सध़
१०-	सम	रेप	मध	पसं	धरें	संमं	रेंपं	मंधं	पंधं
	मंपं	रेंमं	संरें	धसं	पध	मप	रेम	सरे	धसं
११-	रेंमं	रेंपं	मंपं	रेंमं	संरें	संमं	रेंमं	संरें	धस
	धरें	संरें	धसं	पध	पसं	धसं	पध	मप	मध
	पध	मप,	रेम	रेप	मप	रेम	सम	रेप	मध
	पसं	धरें	संरें	धसं	पध	मप	रेम	सरे	धस़
१२-	सध़	पध़	रेस	धस़	मरे	सरे	पम	रेम	धप

	मप	संध	पध	रेंसं	धसं	रेम	पम	रेस	ध़स
१३-	मंपं	मंपं	रेंमं	रेंम	संरें	संरें	धसं	धसं	पध
	पध	मप	मप	रेमं	रेम	सरे	सरे	ध़स	ध़स
१४-	ध़स	रेम	पध	संसं	संसं	संसं	धप	मरे	सरे
१५-	ध़स	रेम	पध	संरें	मंमं	मंमं	रेंसं	धप	मप
	धऽ	संसं	संसं	धप	मरे	सरे	मम	मम	रेस
झाला १—	ध़स	सध़	पप	पप	ध़स	सध़	मम	मम	रेम
	मरे	सस	सस	रेम	मरे	संसं	संसं	धसं	संध
	पप	पप	धसं	संध	मंमं	मंमं	रेंमं	मंरें	संसं
	संसं	धसं	संध	पप	पप	रेम	मरे	सस	सस
२-	सस	ध़स	सस	पध	रेरे	ध़रे	रेध	पध	मम
	रेम	मरे	सरे	पप	रेप	परे	सरे	संसं	धसं
	संध	पध	मंमं	रेंमं	मंरें	संरें	पंपं	रेंपं	पंरें

	संरें	रेंम	मरे	सस	धसं	संध	पप	रेम	मरे
३-	पंपं	मंपं	पंपं	मंरें	मंमं	रेंमं	मंमं	रेंसं	रेंरें
	संरें	रेंरें	संध	संसं	धसं	संसं	धप	धध	पध
	धध	पम	पप	मप	पप	मरे	मम	रेम	मम
	रेंस	रेरे	सरे	रेरे	सध़	सस	ध़स	सस	ध़स
४-	संध	संध	संध	संसं	संप	संप	संप	संसं	संम
	संम	संम	संसं	संस	संस	संस	संसं	संध	संध
	संध	संसं	संप	संप	संप	संसं	संम	संम	संम
	संसं	सांसां	सांसां	संसं	संसं	संध	संध	सांसं	संप
	सप	संसं	संम	संम	संसं	संसं	संसं	संसं	संध
	संध	संसं	संप	संप	संसं	संम	संम	संसं	संसं
	संसं	संस	संध	संसं	संप	संसं	संम	संसं	संसं
	संसं	संध	संसं	संप	संसं	संम	संसं	संसं	संसं

५-	धसं	धसं	धसं	संसं	रेंसं	रेंसं	रेंस	संसं	धसं
	धसं	धसं	संसं	रेंसं	रेंसं	रेंसं	संसं	धसं	धसं
	संसं	रेंसं	रेंसं	संसं	धसं	धसं	संसं	रेंसं	रेंस
	संसं	धसं	संसं	रेंसं	संसं	धसं	संसं	रेंसं	संसं
	रेंमं	मंमं	पंमं	मंमं	संरें	रेंरें	मंरें	रेंरें	धसं
	संसं	रेंसं	संसं	पध	धध	संध	धध	मप	पप
	धप	पप	रेम	मम	पम	मम	सरे	रेरे	मरे
	रेरे	धुस	सस	रेस	सस	संसं	धप	मरे	सरे

—※—

नृत्य और नवरस !

(ले०-श्री० विश्वम्भर नाथ भट्ट, बी० ए०, एल० एल० बी० आगरा)
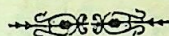
नृत्य मनुष्य जाति के समान ही प्रचीन है। आदि काल से मनुष्य नृत्य-कला का उपासक रहा है। इसका एकमात्र कारण यही है कि मानव हृदय से इस कला का निकटतम सम्बन्ध है। आनन्द की अनुभूति से मनुष्य स्वभावतः ही नृत्य कर उठता है। यों तो गीत वाद्य तथा नृत्य तीनों ही का समावेश नृत्य शब्द के अन्तर्गत होजाता है, परन्तु हृदय के भावों को व्यक्त करने का नृत्य जितना अधिक व्यापक तथा सुसज्जित साधन है, उतना वाद्य अथवा गीत नहीं। हृदय को स्पर्श करने वाले तत्व की उपस्थिति के कारण ही नृत्य आदि-काल से मनुष्य का साथी रहा है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, नृत्य भाव-व्यक्तीकरण का एक सरल तथा सुबोध साधन है। आनन्द प्रेम, क्रोध, उत्साह इत्यादि हृदय की वृत्तियाँ है। इन्हीं वृत्तियों को भाव (स्थायी भाव) के नाम से सम्बोधित किया जाता है। भाव हृदय की सम्पत्ति है जो हृदय में ही छिपे पड़े रहते हैं। यही कारण है कि हम सदैव ही आनन्द, प्रेम अथवा क्रोध आदि का अनुभव नहीं करते। हां कारणवश जब ये भाव परिस्थितियों के द्वारा उभर आते हैं, तब उनका प्रत्यक्षीकरण होजाता है। नृत्य का महत्व उसकी मनोरञ्जनकारिणी शक्ति में है। नृत्य और मानव हृदय में साधर्म्य है। नृत्य से हमारे सुषुप्त भाव जागृति हो उठते हैं, और इसी कारण हमें आनन्द प्राप्त होता है। नर्तक अथवा नर्तकी का उद्देश्य दर्शकों में अपने अभिप्रेतत्भावों का जागरण कराना ही होता है।

मानव हृदय में स्थित के भाव असंख्य हैं, परन्तु भाव अनन्त होते हुए भी परिस्थितियों के आधीन हैं। प्रत्येक मनुष्य प्रेमी नहीं होता अथवा सदैव ही किसी व्यक्ति को क्रोध का भाव नहीं होता, किन्तु अनुकूल परिस्थितियों के उत्पन्न होने पर ये जब भाव यथा समय अवश्य उत्पन्न हो सकते हैं। यह कोई नहीं बतला सकता कि किसी समय विशेष पर किसी विशेष परिस्थिति का किसी व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ेगा। फिर भी मानव हृदय के गहन मनोवैज्ञानिक अध्ययन के पश्चात् शास्त्रकारों ने ९ ऐसी सामान्य मनोवृत्तियां खोज निकाली हैं, जो प्रायः सभी मनुष्यों में पाई जाती हैं, और उपयुक्त परिस्थितियां प्राप्त होने पर साधारणतया प्रत्येक मनुष्य उनमें से एक न एक के आधीन होजाता है। इन वृत्तियों की संज्ञा ये हैं:—प्रेम, शोक, क्रोध, हास, भय, उत्साह, घृणा, आश्चर्य तथा निर्वेद।

नवरस का आधार ये ही ९ वृत्तियां अथवा भाव हैं। इन्हीं के द्वारा जिन नौ प्रकार के रसों की सृष्टि होती है, उनके नाम क्रमशः ये हैं:—श्रृङ्गार, करुण, रौद्र, हास्य, भयानक, वीर, वीभत्स, अद्भुत और शान्त।

आज कल जितने प्रकार के नृत्य प्रचलित हैं, उनमें विशेषतया, कत्थक, मणिपुरी, तंजौर, तथा कथाकाली ये चार प्रमुख हैं। प्रान्त विशेष में प्रचलित नृत्य, लोक नृत्य (Folk Dance) के अन्तर्गत आजाते हैं। इन सभी प्रकार के नृत्यों का उद्देश्य अभिप्रेत भावों के जागरण द्वारा दर्शकों को आनन्द प्राप्त कराना ही होता है। नृत्य के मुख्य वर्ग तो केवल दो ही हैं। एक ताण्डव तथा दूसरा लास्य। ताण्डव नृत्य मुख्यतः पुरुषों द्वारा किया जाता है, तथा लास्य नृत्य की अधिकारिणी विशेषतया स्त्रियां हैं। नवरस के दृष्टिकोण से यह वर्गीकरण बहुत ही समुचित हुआ है। वीर, रौद्र, भयानक,,अद्भुत तथा वीभत्स ये पांच रस ऐसे हैं, जिनका व्यक्तीकरण ताण्डव नृत्य के अन्तर्गत अत्यन्त सुचारु रूप से हो सकता है, तथा शेष रसों (विशेषतया श्रृङ्गार तथा करुण) का निर्वाह लास्य नृत्य में अधिक उत्तम रूप से होता है। ताण्डव नृत्य में सृष्टि की उत्पत्ति, पालन तथा संहार कीअभिव्यञ्जना होती है, तथा लास्य में श्रृङ्गारिक भावनाओं का समावेश अधिक है।

नृत्य द्वारा भावानुभूति के कारण दर्शकों को जो आनन्द प्राप्त होता है उसका मूल कारण यही है कि नृत्य में जिस भाव का प्रदर्शन होता है, उसे देखते-देखते हमें साक्षात अनुभूति का भान होता है, दर्शक को प्रतीत होता है कि भाव-अभिव्यञ्जक की परिस्थितियाँ स्वतः उसी की परिस्थितियाँ हैं। मानो वही उसका कर्ता है, और इन घटनाओं में भाग ले रहा है, जो नृत्य द्वारा व्यक्त की जारही हैं। इसी से दर्शक को आनन्द प्राप्त हो सकता है। अथवा दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि दर्शक को नृत्य बड़ा रस प्राप्त होता है। नाट्य शास्त्र के प्रणेता भरत का कथन है कि—

"विभानुभाव व्यभिचारि संयोगा प्रसनिष्पत्तिः"

अर्थात् "विभाव' 'अनुभाव'तथा'व्यभिचारी भाव'।इन तीनों के सुन्दर समन्वय से ही रसोत्पत्ति होती है। भावों के अनुकूल परिस्थितियों पर 'रस' अवलम्बित है। जो परस्थितियाँ भाव उपन्न करती हैं, उन्हें अवलंब विभाव, तथा भाव उत्पन्न होजाने पर जो परिस्थियाँ भाव को उद्दीप्त करती रहती हैं, उन्हें उद्दीपन विभाव कहा जाता है। अनुभाव उन अनुकूल शारीरिक चेष्टाओं का नाम है, जो नायक के भाव का दर्शकों को अनुभव कराती हैं। सञ्चारी भावों को ही व्यभिचारी भावों के नाम से सम्बोधित किया जाता है। स्थायो भाव के साथ आने वाले अन्य गौण भावों का नाम व्यभिचारी भाव है। स्थायी भाव तो आरम्भ से अन्त तक

बना रहता है, परन्तु व्यभिचारी भाव तो स्थायी भाव के केवल सहायक मात्र होते हैं, इसी कारण ये अधिक देर तक नहीं ठहरते और आते जाते रहते हैं। उक्त कथित प्रेम, हास्य, शोक इत्यादि ही स्थायी भाव हैं।

नृत्य में एक स्थायी भाव का होना आवश्यक है, परन्तु एक ही समय में एक से अधिक स्थायी भावों का होना हानिकारक है, क्यों कि इससे एक सूचना नष्ट हो जाती है। यहां एक बात पर और लक्ष्य कर लेना चाहिये कि भाव मानव हृदय की संपत्ति हैं, इसी कारण इन को धारण करने वाला कोई मनुष्य अथवा नायक भी होना अनिवार्य है, कृष्ण के कालीय-मर्दन नृत्य" में नायक श्री कृष्ण हैं। स्थायी भाव उत्साह है। शत्रु और उस की दुष्टता क्रमशः आलम्बन और उद्दीपन हैं। कृष्ण का शस्त्र संचालन तथा भुजाओं का फड़काना अनुभाव है, तथा उनकी उग्रता संचारी भाव अथवा व्यभिचारी भाव है, कृष्ण का 'कालीय मर्दन नृत्य' वस्तुतः ताण्डव नृत्य के अंतर्गत आजाता है। वीर रस का प्रतिपादन करने वाला यह नृत्य दर्शकों को बहुत ही प्रिय होता है। जिस प्रकार नृत्य में एक ही स्थायी भाव होना आवश्यक है' उसी प्रकार रस और नायक भी प्रधान रूप से एक ही होना चाहिये। हाँ रसोत्कर्ष के लिये प्रतिनायक की सृष्टि की जा सकती है। 'कालीय मर्दन नृत्य' में कालीनाग प्रतिनायक है।

नृत्य में निहित घटनाओं का अथवा कथानक का समुचित दिग्दर्शन कराने के लिये, नर्तकी अथवा नर्तक को कथानक अथवा घटना-क्रम से भी भलीभांति परिचित रहना पड़ता है। यद्यपि त्नृय में अभिनय तथा अभिव्यक्ति ही मुख्य हैं, तथापि ताल के संयोग के बिना नृत्य विशेष रंजक नहीं बन पाता। इसी कारण नृत्य को "तालबद्ध भावाभिव्यञ्जना" कहा जाता है। कत्थक नृत्य में तो ताल का महत्व और भी बढ़जाता है, और यही कारण है इस नृत्य में पैर का काम बड़ा सुन्दर होता है। नृत्य तथा नृत्त में थोड़ा सा अन्तर है।

नृत्त में शारीरिक अङ्ग विशेष के द्वारा भावना को इंगित किया जाता है। तथा नृत्य में तालस्वर के नियमानुसार रस की अभिव्यक्ति अभीष्ठ होती है। मणिपुरी, तंजौर, तथा कथाकाली नृत्य में अभिनय और भाव-प्रदर्शन का आधिक्य स्पष्ट तथा दृष्टिगोचर होता है, वस्तुतः पैरों से ताल की अभिव्यञ्जना तथा अन्य शारीरिक चेष्टाओं द्वारा हृदय के भावों के स्पष्टीकरण द्वारा रसोत्पत्ति में ही नृत्यकला का संपूर्ण रहस्य निहित है।

नृत्य की उत्पत्ति और विकास

(ले० प्रोफेसर लल्लूलाल गन्धर्व म्युज़िकल रिसर्चस्कालर, पटना सिटी)

विश्व की सुन्दरता के संग्रह का ही नाम सङ्गीत है। इसके एक अङ्ग का स्वतन्त्र नाम नृत्य है। जिस प्रकार ताल की उत्पत्ति 'काल' से हुई है। उसी प्रकार नृत्य की उत्पत्ति 'क्रिया' (हरकत) से हुई है। जिस भांति सुरीली आवाज़ से ही 'सङ्गीत' (गाना) का सम्बन्ध है उसी प्रकार केवल खूबसूरत हरकतों को ही नृत्य में स्थान दिया गया है।

नृत्य की व्यापकता।

इसकी व्यापकता की ओर दृष्टिपात किया जाय तो अखिल ब्रह्माण्ड ही नृत्य मय प्रतीत होता है, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदि सब के सब नृत्य करते हुए दिखाई देते हैं। नृत्य की सजीवता और निर्जीवता की पहिचान है। अर्थात् जिसमें जीवन है वह नृत्य करता है, मृतक नृत्य से विहीन है।

नृत्य दृष्टिगोचर आँखों से देखने की चीज़ है। हमारे ऋषियों ने इस ताल से सम्बन्ध कराकर अनुभव अन्य (अन्दाज़ से जानने लायक) तथा भिन्न-भिन्न प्रकार की पदध्वनियों द्वारा कर्णगोचर (सुनने योग्य) बना कर इसके सौन्दर्य को और भी बढ़ा दिया है।

स्वाभाविक नृत्य।

वास्तव में 'नृत्य' जीवात्मा की एक अवस्था का ही नाम है और यह अवस्था उस समय उत्पन्न होती है जब वह आनन्द में अपनी सुध-बुध खो बैठता है। यह एक ऐसी वस्तु है कि प्राणीमात्र को इसका स्फुरण स्वतः होने लगता है जिसके प्रभावस्वरूप छोटा सा बच्चा भी किलक २ कर नाचने लगता है। मेमना (बकरी का बच्चा) कूदने, बछेड़ा उछलने और घोड़ा थिरकने लगता। पक्षीगण चहचहाने और परों को फड़-फड़ाने लगतेहैं। यहीं तक नहीं वृक्ष झूमने और तालाब छलकने लगता है। भक्तजनों के नृत्य की भी ठीक यही दशा होती है। जब वह अपने आराध्य देव की आराधना में तल्लीन होजाता है तो वह अपनी सुध-बुध भूल जाता है। उसे यह ज्ञान भी नहीं होता कि जो क्रिया वह कर रहा है वह क्या है। और क्यों होरहा है। न तो उसके लिये वह तैयारी ही करता है और न इस छोटे से लेख में इस पर पूर्ण रूप से प्रकाश हीं डाला जा सकेगा, इसलिए मैं अब नृत्य कला की ओर ही बढ़ता हूं।

वस्तु संग्रह।

नृत्य निर्माताओं ने जिन सुन्दर २ दृश्यों के संग्रह से नृत्यकला का निर्माण

किया है, उसमें से कुछ का उल्लेख मैं यहां कर रहा हूं। चतुर पाठकों के लिये सङ्केत ही परियाप्त है।

पौधा नाट्य।

कलाकार ने फूल से लदे किसी पौधे को हवा के थपेड़ों से झोका खाते हुए देखा। उसे यह दृश्य अत्यन्त सुन्दर प्रतीत हुआ। उसने उसी के पास खड़े होकर अनुकरण करना आरम्भ किया और प्राप्त भी कर लिया।

आपने सङ्गीत जल्सों में देखा होगा कि नृत्यकार जब नृत्य के लिये खड़ा होता है तो खड़ा-खड़ा कभी आगे, कभी पीछे, कभी दायें, कभी बांऐ, धीरे २ झूमता है। इस क्रिया द्वारा वह आपको उस झोंका खाते हुए पौधे की ओर सङ्केत करता है।

सरोवर नाट्य।

कलाकार ने एक जल से पूरित सरोवर को पवन के प्रवाह से लहराता हुआ देखा। उसे यह दृश्य भी नृत्य के काम का मालुम हुआ और उसने इसका भी सङ्कलन किया।

आपने यह भी देखा होगा कि नृत्यकार झूमने के पश्चात् दोनों हाथों को भीतर की ओर मोड़ कर दोनों हाथों के बीच की उङ्गलियों को ठीक एक दूसरी के सीध में रखे हुए उसे हलका देता है। इस क्रिया से वह आपका ध्यान उस छल-छलाते हुए तालाब की ओर आकर्षित करता है।

पखेरू नाट्य

कलाकार ने एकबार एक विशाल पंख वाले पक्षी को उड़ता हुआ देखा। उसकी लीलापर दो, तीन स्थानों से बलखाता हुआ बड़ाही सुहावना प्रतीत हुआ। कलाकार ने इसका भी संग्रह किया।

जब आप उपरोक्त नृत्यकार को यह देखें कि वह अपने दोनों बाहुओं को बाहर की ओर फैला कर पंखुड़े से उङ्गलियों की छोर तक को एक सीधी रेखा सी स्थापित कर उसे दो-तीन स्थानों से लचा रहा है तो उस समय उड़ते हुए पक्षी का स्मरण करें।

विविध संग्रह।

इसी प्रकार मुद्रा भेद से आप जल में तरणी को तैरते और जलतरङ्गों के प्रभाव से डगमगाते हुए देखेंगे।

पशुओं के चाल की भी नकल कलाकारों ने नृत्य में की है।

कबूतर, मयूर, सारस इत्यादि नाचने वाले पक्षियों से भी बहुतसी मुद्रायें लीगईं हैं।

कृष्ण तृभंग

नटराज श्रीकृष्णचन्द्र के तृभङ्ग मुद्रा के सम्बन्ध में हमारा विचार है कि वृक्ष उससे लिपटी हुई लता का भाव है। पाठक ज़रा पैर की ओर ध्यान दें, एक पैर सीधा वृक्ष की भांति है और दूसरा पास में ही उगकर उसी वृक्ष से लिपटी हुई लता की भांति ही प्रदर्शित होता है।

पाठक अब दूर न जाकर अपने मानव समाज से ही ली हुई वस्तुओं की ओर ध्यान दें।

गगरी नाट्य

कलाकार ने एक नवोढ़ा पनिहारी को गगरी के बोझ के कारण बल खाते हुए देखा। उसकी गरदन, उसकी पतली कमर उसके सुकुमार पैर बारम्बार लचक जाते थे। अञ्चल भी फिसला ही पड़ रहा था। इस दृश्य ने कलाकार को चुप बैठा न रहने दिया। इसने उठाई गगरी और उसी प्रकार लगे उसका पीछा करने। गगरी नृत्य इतना प्रसिद्ध होगयाहै कि इस विषय में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है।

दहेड़ी नाट्य

एक बार तो कविवर बिहारी ही आपे से बाहर होगये। उन्होंने एक अहीरिन को छीके से दही की मटकी उतारते या रखते देखा। बस फिर क्या था आपका भावुक हृदय उछल पड़ा, हृदय में भावों की बाढ़ आगई और वे उससे बरबस कहने लगे

अहै दहेंड़ी जिन धरै जिन तू लेहि उतार।
नीके ही छीके छवे ऐसे ही रतनार॥

कुशल हुआ कि कवि जी महाराज न हुए नृत्यकार! नहीं तो ये भी हज़रत लेते दहेंड़ी और दौड़ पड़ते छीके की ओर।

नाज-नजाकत।

इसी प्रकार मुस्कान, चितवन, आदि भाव भंगियों का संग्रह किया गया है। किन्तु यह ध्यान रखने की बात है कि मुस्कान और चितवन में भी सभी मुस्कान और चितवन सङ्गीत के काम की नहीं होती। उसमें से तो मधुर मुस्कान और तिरछे नैन का ही सम्बन्ध नृत्य से है। विचारशील पाठकों से यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इसके सौन्दर्य की ओर कलाकार के कितने सुकुमार विचार हैं।

नाट्य और साहित्य

अब आप इस कला के मनोगत भावों के गूढ़ तत्व की ओर चलिये। यहीं पर आकर कला ने अपना क्षेत्र विस्तरित किया है। इसी स्थान पर आकर कलाकार की कुशलता का पता चलता है और उसकी योग्यता अयोग्यता का परिचय होता है।

कलाकार के सामने भाव बताने के लिये ये दोहा रक्खा गया।

नभलाली चाली निशा, चटकाली धुनि कीन।
रति पाली आली अनत, आये बन मालीन ॥

इस नायिका का पति रातभर बाहर रहगया है। सूर्य की लालिमा रात्री के अन्त होने की सूचना देरही है। जिसके सत्यता की गवाही चिड़ियों की चहचहाहट वो कलियों के फूटने का शब्द दे रहा है। बात तो केवल इतनी ही है किन्तु दर्शकों पर ग़ज़ब ढाने के लिये कुछ कम नहीं है।

नृत्यकार जब इसका चित्रण आपके सामने करेगा तो दिखायेगा आपको नायिका के विरह की व्यथा। व्यथा में भी नाना प्रकार की पीड़ायें। जैसे टीस, हूक, नालयेसर्द, उत्पीड़न करवटें इत्यादि।

नायक की प्रतीक्षा में नायिका की उत्सुकता, व्यग्रता, द्वार की ओर निर्निमेष नेत्रों से (टकटकी लगाये) देखना। कभी द्वार कभी झरोके द्वारा बार २ सुदूर तक विस्फारित नेत्रों से (आँखें फाड़फाड़कर) देखना शब्दों की ओर कान लगाये रहना जरासी आहट परही पति आगमन की मृग तृष्णा में दौड जाना कभी २ तो द्वार तक न जाकर बीच से ही लौट आना। उस जाते आते समय आशा निराशा का तद्वत भाव आदि।

'चाली निशा' के लक्षणों को देखकर भी भ्रमात्मक भाव। बार बार दीपक की मलीनता को परखना। कभी शीतल समीर, कभी तारों का फीकापन, कभी चन्द्रमा की मन्दता निरखना। बार २ मुक्ताहार की शीतलता की परीक्षा करना हार टटोलने के मिस दुःखी हृदय को थामलेना। अन्तमें आकाश की लालिमा देख अत्यन्त अधीर होजाना।

सखी से सहायता की आशा कर आए बनमालीन का कहना। आगमन प्रतीक्षा में श्रवणेंद्रियों की सतर्कत्ता से कलियों के फूटने के शब्दों को भी सुन लेना। नायक ने किसी अन्य रमणी के साथ (रतिपाली) की कल्पना से हृदय विदीर्ण होजाना इत्यादि २।

इसे नृत्य के भाव का प्रस्तार कहते हैं। यह विषय नायिका भेद का है। जिस प्रकार रागालाप में राग न बिगड़ने दिया जाता है उसी प्रकार इसमें नायिका की ओर ध्यान रखना अनिवार्य है। इस स्थान पर सङ्गीत और साहित्य दोनों ही परस्पर दूध मिश्री की तरह घुल मिल गये हैं। किसी नायिका के भावों का चित्रण करने में संगीतज्ञ और साहित्यिक दोनों का दृष्टि कोण और लक्ष्य एकही होता है केवल साधन मात्र का भेद है।

अब मैं पाठको का ध्यान तालबद्ध नृत्य की ओर लेजाना चाहता हूं।

किसी भी कार्य को क्रमबद्ध करने से उस में सुन्दरता स्वाभाविक ही आजाती है और अव्यवस्थित कार्य स्वयं बुरा मालूम होता है। प्रमाणस्वरूप आप मनुष्यों के एक झुण्ड को मार्ग में चलता हुआ देखें और शिक्षित सैनिकों को मार्च करता हुआ देखें। दोनों के चलने में आकाश पाताल का अन्तर पायेंगे। अब इसी से अनुमान करें कि जब साधारण चलने फिरने को ही ताल से सम्बन्धित करने पर सौन्दर्य वृद्धि होजाती है तो भावपूर्ण नृत्य में कितनी रोचकता आ सकती है?

इस साधारण चलने को यदि बराबर गति से चलाजाय तो यही मात्रा का रूप धारण करलेता है। और पदाघात के शब्द से उस मात्रा को सुना जाता है। उसे और भी साफ सुनने के लिये पैर में कोई शब्द कर पदार्थ बांध लेते हैं। शब्द को भी मधुर बनाने के लिये घूंघरू का आविष्कार हुआ है।

इस प्रकार से बनी हुई मात्राओं को किसी भी ताल से सम्बन्धित किया जा सकता है।

पदाघात से उत्पन्न होने वाले ध्वनियों का नाम कर्ण भी किया गया है। जैसे दाहिने पैर के पटकने से ता, ताव, तत् आदि। बांए पैर के आघात से थेई या थई थुन वगैरह दोनों पैरों को एक साथही पटकने यानी कूदने की क्रिया से धा इत्यादि शब्द बनते हैं। बस इन्हीं दोनों पैरों के आघात प्रत्याघात से नृत्य के सभी बोलों की रचना हुई है। टेलीग्राफ औफिस का 'टक्क' ट्रा, भी इसी आधार का द्योतक है।

नृत्य के और भी बहुत से बोल हैं जिन्हें पदाघात की भिन्नता से उत्पन्न किया जाता है जैसे 'क' एक पैर को ही दो भागों में विभाजित कर प्रथम एड़ी पटकना पुनः पंजों को पटकना। इस क्रिया से डेवढ़ी आवाज़ १॥ याने खनकदार ध्वनि होती है। कई कलाकार तो 'तत्' को इसी प्रकार निकालते हैं। (ख) पदाघात के हेत पैर को ऊपर उठाते समय ऐसा झटका देना जिसमें एक ध्वनि ऊपर की ओर ही हो और दूसरी पैर को रखते समय हो। इसी प्रकार दोनों पैरों से प्रथक २ ध्वनियां निकालते हैं और एक साथ भी इसी क्रिया विशेष से कड़ान धा भी बनता है।

याने उछलते समय 'कड़ान' और कूदते समय धा। (ग) पैर के तलुके से आघात न देकर एक पैर को कुछ पीछे की ओर हटाकर केवल अँगूठे के ही ठोकर से ध्वनि पैदा करते हैं! इसी ठोकर की स्थिति पैर मी एड़ी के समीप एक ही स्थान पर भी देते हैं और एड़ी के दाहिने बांये भी क्रमानुसार देते हैं। अँगूठे को ज़मीन से रगड़ते हुए आगे की ओर घसीटते भी हैं इससे एक थर्राहट पैदा होती है। इस क्रिया से छन नन नन नन शब्द भी एक छोटी सी तान बन जाते हैं।

नृत्य कला पर विचार !

(ले०--श्री० राजारामजी द्विवेदी, सुरङ्ग)

यह प्रत्यक्ष है कि भारत की "प्राचीन" आर्य-नृत्य-कला संसार में बड़ी तीव्र गति से अग्रसर होरही है। परन्तु हमें यह विचार करना है कि इसके अग्रसर होने का कैसा मार्ग है ? शास्त्रों में नृत्य-कला का स्थान अध्यात्मिक कला में है। क्योंकि इसका सम्बन्ध शरीर से होते हुए भी आत्मा के साथ घनिष्ट है।

नृत्यकला से मेरा सम्बन्ध कई वर्षों से है और आज भी मैं इसी की सेवा में जीवन व्यतीत कर रहा हूं। मुझे यह देखकर अतिःदुख होता है कि आधुनिक-नृत्यकार नृत्य को व्यापार की दृष्टि से देखते हैं। आजदिन नृत्य पर अधिकतर 'लेख' मैं चित्रपट पत्रों में देखता हूं-और जिनके लेखक इधर उधर की बातें लिख कर व्यापार-नृत्य-कलाकारों की प्रसंशा करके हमारे साहित्यक नृत्य को बहुत गहरी ठेस पहुँचाते हैं। फिर यह भी है कि अधिकतर ऐसे लेखक स्वयम् नृत्य-कला के विषय में सुन्न रहते हैं। और होते हैं। ऐसे अप्रमाणिक जनों के लेखको प्रकाशित करके "प्रकाशक" न केवल जनता में "वैदिक" नृत्यों के विषय में भ्रम पैदा कराते हैं। वरन वे हमारे-"नृत्यकार" पूर्वजों को अपमानित करते हैं। इसी प्रकार के लेखकों श्री वेदी जी हैं जो कि अभी हालही में उन्होंने आंख मींचकर श्री उदयशंकर जी के नृत्य की कड़ी आलोचना कर डाली। परन्तु उन्होंने कला के विषय में कोई ठीक बात एक भी नहीं लिखी। वे केवल अच्छन जी, जैलालजी, शम्भूजी मेनकाजी, इत्यादि कथिकनर्तकों को सर्व श्रेष्ट लिखकर शान्त होगये। मैं श्री वेदी जी से पूछना चाहता हूं कि क्या यही न्याय है ? क्या कथिक नृत्य की परिभाषा किसी शास्त्र ने की है ? क्या कथिक नृत्य की कला का वर्णन किसी ग्रन्थ में है ? क्या कथिक नृत्य सर्वांश में कलापूर्ण है ? क्या इसका जन्म मुसलमान बादशाही कालका नहीं है ? क्या ख्याल ठुमरी की गायकी और कथिक नृत्य समकालीन नहीं हैं ?

क्या उनशाही दरबारों में (यथाभेषस्तथा गतिः) वाले वैदिक नृत्यों ने आदर प्राप्त किया। या कर सक्ते थे ? "मैं यहां, किसी पर जातीय कटाक्ष नहीं करना चाहता, और न मेरा यह उद्देश है। किन्तु जिस कला की खोज में मैंने अपने जीवन को अर्पण किया है और कर रहा हूं, उसका अपमान मेरे लिये असह्य है। मैं वैदिक नृत्य कलाकारों से (तांडव) इत्यादि, नृत्य करने वालों से प्रार्थना करूंगा कि वे भूलकर भी कथिक इत्यादि कौमी नृत्यों की छाया अपने पवित्र नृत्यों

में न आने दें। और जहांतक हो सके (त्रिताल में) नृत्य करना बन्द करदें। क्यों कि शास्त्र ने त्रिताल को क्षुद्र ताल माना है। (ताल स्त्री नीच संज्ञिनाम्) वैदिक नृत्य करने वालों को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये, कि उनके नृत्य गति, न्याश में लोक धर्म नाशक कुप्रवृत्तियां न आने पावें। और न वे ऐसे नृत्यों का प्रस्तार करें जिनसे लोक धर्म दूषित हो जायें।

गंधर्व और अप्सराओं के केवल वे नृत्य समाज में दिखाये जावें जो सार्व जनिक रूप में किये गये हों। अप्सराओं के वे नृत्य दूषित हैं कि जो राजाज्ञा से नैतिक रूप में ऋषियों को तप से च्युत करने के लिये कामदेव की सैन्य लेकर नृत्य में लास्य की पुट चढ़ाकर उन्होंने लोक से छिपकर किया है। यह राजनैतिक विषय है। सामाजिक नहीं। इस लिये ऐसे नृत्यों का प्रचार लोक धर्म के लिये लाभप्रद नहीं है। (लोकोपदेश जननं) नियम के अनुसार ही नृत्यों की रचना सुखद होगी।

सङ्गीत में, नृत्य में, ब्रह्मचर्य अनिवार्य है परन्तु आजका (सङ्गीत साहित्य) और "लास्य से पूर्ण नृत्य, उस ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये कहां तक उपयोगी है। यह बात हमारे ख्याल, ठुमरी, के गायक, और कथिक नृत्य के उपासक अच्छी तरह समझ सकते हैं। भारतीय जनता ने तो इस सङ्गीत और इस नृत्य को त्याग ही दिया था और आज भी यह सर्व मान्य नहीं है। क्योंकि यह वही है कि जो वैदिक नियमों को तोड़ मरोड़ कर कुछ लोगों की प्रसन्नता के लिये बनाया गया था। मैं अभी सङ्गीत के विषय में कुछ नहीं कहता क्योंकि विषय नृत्य का है।

आजकल कुछ उच्च कुल के पुरुष और स्त्रियां भी नृत्यकला से प्रेम करने लगे हैं। और यह उचित भी है। किन्तु उन्हें उन्नति का उचित मार्ग नहीं मिलता इसलिये बहुत से, हतोत्साह होकर छोड़ देते हैं, या "अताइयों" से कुछ क्षुद्रनृत्य सीखकर नृत्य कलाचार्य बन बैठते हैं। उनकी नृत्य-कला का मूल्य चाहे कुछ भी न हो किन्तु जनता उनका आदर करती है। वह इसलिये कि उसकी नजरों में नृत्य-कला से अधिक उच्चकुल के होने का अधिक भाव होता है। किन्तु ऐसी भावनायें कायम नहीं रह सकतीं। आगे चलकर कला ही अपना स्थान प्राप्तकरेगी। ऊपरी आड़म्बर काम न देंगे। भारत की प्रसिद्ध नर्तकी श्री अज़ूरी ने इस विषय में काफी प्रकाश डाला है। उन्होंने फिल्मों के नर्तक नर्तकियों की कला के विषय में भी सुधार की आवश्यकता बतलाई है। किन्तु मेरी समझ में अभी नृत्य-कला का सुधार होना कठिन है। क्यों कि हमें यही नहीं मालूम कि नृत्य का उद्देश क्या है। तभी तो हम, गगरीनृत्य, पिचकारी नृत्य, दही छीनना भगवान कृष्ण, और गोपियों की गोप्य जीवन की घटना यों की हंसी उड़ाने को नृत्य कला माने बैठे हैं। क्या ऐसे नृत्यों के प्रभाव से हम नृत्य-कला के उद्देशों की पूर्ति कर सकते हैं? क्या यह

नृत्य सामाजिक हैं ? क्या यह नृत्य, लोक धर्म के रक्षक हैं ? क्या यह कामोत्पादक नहीं हैं ? ऐसी बहुत सी त्रुटियां हैं जिनपर हमें विचार करना चाहिये।

नृत्यकला का उद्देश

बलदं मानदं नृत्यं भुक्ति मुक्ति फल प्रदम् ।
प्रसन्न वदनं कायंज्ञाना विस्तारकं तथा ॥
नृत्यकला सों बढ़त है तन, मन, धन, सन्मान।
जीवित रहत समाज, यश, जाति देश की आन ॥

नृत्य-बल देने वाला, मान देने वाला, भुक्ति, मुक्ति देने वाला, मनको प्रसन्न रखने वाला, तथा सम्पूर्ण ज्ञानों का भंडार है । इस लिये नृत्य का सुधार होना परमावश्यक है। आजकल भारत में-तंजोरी, मणिपुरी, गर्वा, इत्यादि प्रान्तीय, और देवदासी, रामदासी, कथक, वेश्या, भांड़, कहार जुलाही मल्लाही, गोंड़ भील, इत्यादि कौमी नृत्यों की भरमार है। परन्तु ये नृत्य अपूर्ण होने के कारण सुखद नहीं हैं। यद्यपि सबमें सङ्गीत है, कारण हैं, भाव हैं, गति हैं। किन्तु छिन्न भिन्न हैं। इसलिये व्यक्तित्व रुचिकर भले ही हों, किन्तु शिक्षाप्रद, और सामाजिक नहीं हैं। इसलिये हमें चाहिये कि हम वैदिक नियमों के नृत्यों का पुनः प्रचार करें कि जिससे हमारे नृत्य सर्व प्रिय, लोक धर्म रक्षक बनजावें । तालगति, भावगति, नृत्यगति, करण, मुद्रा, ऐतिहासिक भाव, मुख्य दस अङ्गन्यास, मुख्य दस नृत्य, एकादश ताण्डव, सप्त रास, शास्त्रोक्त भाव, भेष "देवता, गधर्व यक्ष किन्नर, नर इत्यादि जातियों के नियमानुकूल नृत्यों से ही सम्पूर्ण नृत्यों का-सुधार किया जा सकता है। क्यों कि अराजकता के कारण भारत का सङ्गीत, और नृत्य दोनों पद च्युत होगये हैं। इसलिये बिना संशोधन के ग्रहण करने से अधिक लाभ न होगा । नृत्य संसार के लिये यह बड़े सौभाग्य का समय है। कि श्री उदयशंकर जी अल्मोड़ा में राधा "वैदिक नाट्य शास्त्र कला समिति" ने-लखनऊ में वैदिक नृत्य शिक्षा के विद्यालय कायम किये हैं।

मुझे पूर्ण आशा है कि सत्य-नृत्य कलाप्रेमी इन संस्थायों से पूर्ण लाभ प्राप्त करेंगे। मैं खास कर अपने उनवैदिक नृत्य-कलाकारों से प्रार्थना करूंगा कि जो सांस्कृतिक नृत्य करते हैं। (ताण्डव इत्यादि) उन्हे चाहिये कि वे अपने को पवित्र बनायें और अपनी कलाओं में पवित्रता का श्रोत प्रवाहित करदें। जिससे हमारे पूर्वजों को कीर्ति में बाधा न पड़े।

एकताले का पूरा नाच !

(लेखक-श्री० नरेन्द्रसहाय जी वर्मा बी० ए० फाइनल)

लेखक का परिश्रम सराहनीय है तथा समझाने की शैली अत्यन्त सरल एवं सुन्दर है, शिक्षार्थी इस लेख द्वारा भरसक लाभ उठा सकेंगे। सम्पादक-

(१) लहरा राग विलावल ताल एकताला मात्रा १२

ताल चिन्ह-	×		०		२		०		३		४	
मात्रायें—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
लहरा—	सं	–	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	न	न

(२) लहरा नं० १ एक को चार छः बार बजाने के बाद, लहरा बजने के साथ तबले में आमद की बोल।

लहरा--	सं	–	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	न	न
ठेके का उठान	धा	किट	तक	धुम	किट	तक	धेत्त	ता	किट	तक	गदि	गिन
,, ,,	धा	तिटतक	तेटे	कत्त	–धुम	किटतक	धाकिट	तकधुम	किटतक	धेत्ता	किटतक	गदिगिन
,, ,,	धा	तेटे	तेटे	कत	धा	तकधुम	किटतक	धेत्ता	किटतक	गदिगिन	धा	तेटे
,, ,,	तेटे	कत	धा	तकधुम	किटतक	धेत्ता	किटतक	गदिगिन	धा	तेटे	तेटे	कत

(३) अब नं० दो वाले बोल को दून से बजाए जांय ।

(४) अब लहरा और ठेका को इस तरह कायम होजांय ।

लहरा--	सं	-	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	न	न
तवला--	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत्त	ता	धागे	तिरकिट	धिं	ना

(५) लहरा और ठेके की सङ्गत सहित नृत्य आमद की बोल ।

लहरा--	सं	धप	मग	मर	गप	धन	संरं	गं-	-	धप	मग	मर
तवला--	धा	तेटे	कत्त	तेटे	तेटे	तेटे	तेटे	कत्त	ऽ	तेट	तेटे	कत
नृत्य--	ता	थेई	तत	थेई	तिदा	थेई	थेई	तत्त	ऽ	थेई	थेई	तत
पैर--	१	२	१	२	२	१	२	१	ऽ	२	२	१

लहरा--	सं	-	-	धप	मग	मर	सं	-	-	धप	मग	मर
तबल --	धा	ऽ	ऽ	तेटे	तेटे	कत	धा	ऽ	ऽ	तेटे	तेटे	कत
नृत्य--	ता	ऽ	ऽ	थेई	थेई	तत	ता	ऽ	ऽ	थेई	थेई	तत
पैर--	१	-	-	२	२	१	१	-	-	२	२	१

(६) अब नं० ५ पांच वाले बोल को दून से नाच कर बाद में फिर नं०

(७) लहरा, तबले का ठेका तथा नृत्यादि के बोलों सहित क़ायम होना ।

लहरा—	सं	–	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	न	न
तबला—	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत्त	ता	धागे	तिरकिट	धिं	ना
नृत्य—	ता	थेई	तत्त	थेई	थेई	तत	अ	थेई	तत	थेई	थेई	तत
पैर—	१	२	१,२	१,२,१	१	२	२	१	१,२	१,२,१	२	१

(८) नृत्य के बोल की पहली चलन–फिरन ।

लहरा—	सं-	धप	म-	मर	ग-	गप	धन	सं-	धप	ध-	न-	सं-
तबला—	धाऽ	तेटे	तत	तेटे	कत्त	तेटे	तेटे	कत्त	तेटे	कत्त	ताऽ	धाऽ
नृत्य—	ता	थेई	तत	थेई	तत	थेई	थेई	तत	थेई	तत	तत	ताऽ
पैर—	१-	२-	१-	२-	१-	२-	२-	१-	१-	२-	२-	१-
लहरा—	धप	मग	मर	-सं	सं-	--	मर	सं-	सं-	--	मर	स-
तबला—	तेटे	तेटे	तेटे	कत	धाऽ	ऽऽ	तेटे	कत	धा-	--	तेटे	कत
नृत्य—	थेई	थेई	थेई	तत	ता-	ऽऽ	थेई	तत	ता-	--	थेई	तत
पैर—	१-	२-	२-	१-	१-	--	२-	१-	१-	--	२-	१-

(९) अब ८ आठ वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ वाले पर एक ही आवृति के लिये आजाइये फिर नं०

(१०) जनरंजन के लिये बोल, पहले मुँह से बोलों की ताल लै से पढ़कर दर्शकों को सुनादें, फिर नाचें।

लहरा--	नुस	गर	-स	नधु	स-	रख	गम	गर	गम	पग	प-	न-
तबला--	धेटे	गता	ऽन	कऽऽत	धाऽ	दीऽ	नाऽ	कत्त	कति	गेगे	नक	धिन
नृत्य--	झट	सुपा	ऽड़ी	कऽऽत्	थाऽ	चूऽ	नाऽ	लेऽ	पाऽ	नल	गाऽ	ऊँऽ
पैर--	१,२	१,२	-१	२---	१-	२-	१-	२-	१-	२,१	२-	१-
लहरा--	सं-	--	गम	पग	प-	न-	सं-	--	गम	पम	प-	न-
तबला--	धाऽ	गेऽ	कति	गेगे	नक	धिन	धाऽ	गेऽ	कति	गेगे	नक	धिन
नृत्य--	मैंऽ	ऽऽ	पाऽ	नल	गाऽ	ऊंऽ	मैंऽ	ऽऽ	पाऽ	नल	गाऽ	ऊँऽ
पैर--	१-	--	१-	२,१	२-	१-	१-	--	१-	२,१	२-	१-

(११) अब नं० १० दस वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले पर एक दो आवृति के लिये आजाइये। इसके बाद फिर नं०

(१२) गुण रंजन के लिए सङ्गीत के प्रसिद्ध टुकड़े की बोल, पहले मुँह से बोलों की ताल और लय पढ़कर दर्शकों को सुनादें। फिर नाचें।

लहरा—	सं-	सं-	सं-	धप	मग	मर	गप	मग	म-	रस	-ग	मर
तबला—	तित	तित	ताऽ	तेटेगाऽ	दिन	दिन	धागे	तेटे	धागे	दीना	ऽग	तक
नृत्य—	तत्	तत्	ताऽ	ढुग	ढुन	ढुन	झट	कत	थीऽ	थूंक	ऽग	तक
पैर—	१-	१-	१-	१,२	१-	१-	१,२	१,२	१-	२,१	-२	१,२

लहरा—	ग-	प-	-ग	मर	ग-	प-	-ग	मर	ग-	प-	-ग	धन
तबला—	धिन	दीना	-ग	तक	धिन	दीना	ऽग	तक	धिन	दीना	ऽग	तक
नृत्य—	थुन	थुन्न	-ग	तक	थुन	थूंन	ऽग	तक	धुन	थुंन	ऽग	तक
पैर—	१-	१,२	-१	१,२	१-	१,२	-१	१,२	१-	१,२	-१	१,२

(१३) अब नं० १२ वाले बोल को दून की लय से नाच कर फिर नं० ७ वाले पर एक दो आवृति के लिए आजांय। इसके बाद फिर नं० (१४) गुँण रंजन के लिए पखावज की मशहूर परन के बोल, पहले मुँह से बोलों को ताल और लय से पढ़कर दर्शकों को सुनावें। फिर नाचें—

लहरा—	संरं	गरं	संनध-	संसं	धप	मग	मगम-	-र	गप	मग	मर	सर
तबला—	धागे	तेटे	क्ड़िधाऽ	किट	धुम	किट	नगधेऽ	ऽत	गिन	धागे	तेटे	तकि
नृत्य—	धागे	तेटे	क्ड़िधाऽ	किट	धुम	किट	नगधेऽ	ऽत	गिन	धागे	तेटे	तकि
पैर—	१,२	१,२	२,१,२-	२,१	१,२	२,१	२,१,२-	-१	२,१	१,२	२,१	१,२

लहरा—	संसं	नसं	धप	मग	मर	गप	-न	संन	सं-	सं-	मगमर	गपधन
तबला—	टेधी	किट	किट	नग	तेटे	गिधा	ऽन	तका	थुंग	थुंग	किटतक	गदिगिन
नृत्य—	टेधी	किट	किट	नग	तेटे	गिधा	ऽन	तका	थुंग	थुंग	किटतक	गदिगिन
पैर—	२,१	२,१	२,१	१,२	२,१	२,१	-१	१,२	१-	१-	२,१,१,२	२,१,२,१

(१५) अब नं० १४ वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ वाले पर एक ही आवृति के लिये आजाइये फिर नं०

(१६) गुण रंजन के लिए पखावज की मशहूर परन मींड़दार के बोल, पहले मुँह से बोलों की ताल और लय पढ़कर दर्शकों को सुनादें । फिर नाचें ।

लहरा—	स-	गम	-र	सं-	धप	मग	मर	गप	धन	पप	ध-	धप
तबला—	कत्त	तड़ा	ऽन	धाऽ	किट	तक	धुम	किट	तक	धेधे	धित्त	तड़ा
नृत्य—	कत्त	तड़ा	ऽन	धाऽ	कि:	तक	धुम	किट	तक	धेधे	कित्त	तड़ा
पैर—	२-	२,१	-२	१-	२,१	१,२	१,२	२,१	२,१	२,२	१..	१,२

लहरा—	-न	स-	पप	धन	धप	धन	संन	-न	रु-	गप	-न	पंमं
तबला—	ऽन	धा	धेधे	तेटे	तक	धकि	टेधा	ऽन	धाऽ	कत्ता	ऽन	नग
नृत्य—	ऽन	धा	धेधे	तेटे	तक	धकि	टेधा	ऽन	धाऽ	कत्ता	ऽन	नग
पैर—	-१	१-	१,२	२,१	१,२	१,२	१,२	१-	१-	१,२	-१	१,२

लहरा--	गंरं	संनं	धप	धन	संरं	गंमं	गंरं	-न	संऽ	गमर-	--गग	प-
तबला--	तेटे	तक	धागे	तेटे	तक	धकि	टेधा	ऽन	धाऽ	किड़धाऽ	ऽऽकिड़	धाऽ
नृत्य--	तेटे	तक	धागे	तेटे	तक	धकि	टेधा	ऽन	धाऽ	किड़धाऽ	ऽऽकिड़	धाऽ
पैर--	२,१	१,२	१,२	२,१	१,२	१,२	२,१	-२	१-	१,२,१-	--१,२	१-
लहरा--	नध	-न	सं-	--गग	प-	नध	-न	सं-	--गग	प-	नध	-न
तबला--	नधा	ऽन	धाऽ	ऽऽकिड़	धाऽ	नधा	ऽन	धाऽ	ऽऽकिड़	धाऽ	नधा	ऽन
नृत्य--	नधा	ऽन	धाऽ	ऽऽकिड़	धाऽ	नधा	ऽन	धाऽ	ऽऽकिड़	धाऽ	नधा	ऽन
पैर--	२,१	-२	१-	--१,२	१-	२,१	-२	१-	--१,२	१-	२,१	-२

(१७) अब नं० १६ सोलह वाले बोल को दून की लय से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले पर एक दो आवृति के लिये आजाइये। इसके बाद फिर नं०

(१८) सर्व रंजन के लिये नटवरी के प्रसिद्ध टुकड़े की बोलों को, चाहे मन में या जी चाहे तो इसे भी पहले मुँह से बोलों को ताल और लय से पढ़कर दर्शकों को सुनादीजिये, फिर नाचें।

लहरा--	धनसं-	संरं	सं-	गंरंसं-	--संन	ध-	प-	धनसं-	रं-	--संन	ध-	प-
तबला--	तेटेधाऽ	तेटे	तत्	तेटेधाऽ	ऽऽतेटे	धाऽ	तेटे	तेटेधाऽ	तेटे	ऽऽतेटे	धाऽ	तेटे
नृत्य--	तिगदा	थेई	तत्	तिगदाऽ	ऽऽतिग	दाऽ	थेई	तिगदाऽ	थेई	ऽऽतिग	दाऽ	थेई
पैर--	१,२,१-	२-	१-	१,२,१-	--१,२	१-	२-	१,२,१-	२-	--१,२	१-	२-

लहरा--	गपध-	--नसं	ध-	प-	--गप	न-	सं-	--गप	न-	सं-	--गप	न-
तबला--	तेटेधाऽ	ऽऽतेटे	धाऽ	तेटे	ऽऽतेटे	ताऽ	धाऽ	ऽऽतेटे	नाऽ	धाऽ	ऽऽतेटे	ताऽ
नृत्य--	तिगदाऽ	ऽऽतिग	दाऽ	थेई	ऽऽतिग	दाऽ	थेई	ऽऽतिग	दाऽ	थेई	ऽऽतिग	दाऽ
पैर--	१,२,१-	--१,२	१-	२-	--१,२	१-	१-	--१,२	१-	१-	--१,२	१-

(१९) अब नं० १८ अट्ठारह वाले बोल को दून की लय से नाच कर फिर नं० ७ वाले पर एक दो आवृति के लिए आजांय। इसके बाद फिर

(२०) अन्त में झाला की तरह पर सिर्फ पैर की गिनतियों ही का मनन कर इस प्रकार नाचें। और होसके तो दून में भी नाचें जांय।

लहरा—	धसंसंसं	नसंसंसं	संसंसंसं	रंसंसंसं	गंसंसंरं	संसंनसं	संधसंसं	धसंसंन	संपंसंसं	संमसंसं	संगसंसं	संमसंसं
तबला—	धातेटेतेटेतेटे	धाधातूना	तातेटेतेटेतेटे	धाधातूना	धातेटेतेटेधा	तेटेतेटेधातेटे	तेटेतातेटेतेटे	धातेटेतेटेधा	तेटेधातेटेतेटे	तेटेधातेटेतेटे	तेटेतातेटेतेटे	तेटेधातेटेतेटे
नृत्य—	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*
पैर—	१,२,२,२	१,२,२,२	१,२,२,१	१,२,२,१	१,२,२,१	२,२,१,२	२,१,२,२	१,२,२,१	२,१,२,२	२,१,२,२	२,१,२,२	२,१,२,२

लहरा—	सं—	मगमर	ग— —प	ध— —न	सं—	मगमर	ग— —प	ध— —न	सं—	मगमर	ग— —प	ध— —न
तबला—	धाऽ	तेटेधातेटेतेटे	धा · तेटे	धा— · तेटे	धा—	तेटेधातेटेतेटे	धाऽऽतेटे	धाऽऽतेटे	धाऽ	तेटेधातेटेतेटे	धाऽऽतेटे	धाऽऽतेटे
नृत्य—	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*	*
पैर—	१—	२,१,२,२	१— —२	१— —२	१—	२,१,२,२	१— —२	२,१,२,२	१—	१,२ २,२	१— —२	१— —२

नोट—अपने पूज्यवर गुरु, प्रोफेसर बैनीप्रशाद श्रीवास्तव " भाई " के प्रसिद्ध चतुर्विधि स्वरलिपि का ही इस लेख में क्रमशः पालन किया गया है, अर्थात् उन्हीं की बन्दिश पद्धति के आधार पर ही यह लेख लिखा गया है। पहले सरगम दिये हैं जो कि लहरे के स्वर हैं, उसके नीचे तबले के बोल हैं. फिर इसके नीचे नाच के बोल हैं, तथा इसी के नीचे तदनरूप १-२ अङ्क दिये हैं । १-दांया और दूसरा बांया पैर समझना चाहिये ।

हमारी नृत्य कला !

ले०--बा० कृष्णचन्द्र निगम, सङ्गीत कलानिधि P. A. Mus. (जलंधर) नृत्याचार्य
सेक्रेट्री मार्डन इस्टिट्यूट आफ (ग्वालियर स्टेट)

सङ्गीत से जीवन का वही सम्बन्ध है, जो प्राण और शरीर का है। प्राण हमारे जीवन का संचालक है, सङ्गीत शासन का मंत्र है। सङ्गीत का, आत्मा के तुल्य न आदि है और न अन्त, किन्तु क्रमशः उत्थान और पतन है।

गायन वादन और नृत्य के सम्मिश्रण को सङ्गीत कहते है यथा "गीतं वाद्यं तथा नृत्य त्रयं सङ्गीत मुच्यते" गायन जीवन का दर्शन शास्त्र, है वादन राजनीति और नृत्य साहित्य है। साहित्य हमारे हृदय संसार की प्रदर्शिनी है। नैत्र, नाक, हाथ पांव और कमर इसकी दुकाने हैं इस कला का विशेष संवंध आंख से है।

नृत्य गीत वाद्य, भारतीय अभिनय के तीन मुख्य अङ्ग हैं। उसको चार भागों में विभक्त किया जाता है। आंगिक (मुद्रा प्रदर्शन) सात्विक (भावप्रदर्शन Emotional) भावुक पूर्ण (Expressional) कलापूर्ण (Artistic) और वाचिक (शब्दप्रदर्शन) भावपूर्ण नृत्य में नर्तक अपने हृदय के तरंगित भावों को प्रकट करता है। इसमें नर्तक को उसी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। जिसका कि कवि या लेखक को। नर्तक का भाव विन्यास लेखक या कवि के वाक्य विन्यास सा पूर्ण होना चाहिये।

कलाकार की सफलता उसके प्रदर्शन करने की शक्ति पर अवलंबित है। सभी उसमें सफलीभूत नहीं होते, क्योंकि, यदि किसी में सुन्दर भाव है तो उसके पास पूर्ण भाव-विन्यास नहीं है, या किसी में दूसरा गुण है तो पहिला गुण नहीं। जिसमें इन दोनों वस्तुओं की पूर्णता है, वही विशेष सफलता प्राप्त करता है। एक गीतकार (Lyrist) के समान उसका हृदय होना चाहिये। जितना ही वह युवा होगा उतना ही वह कलाकार होगा। यौवन के पतन के साथ ही कला का भी ह्रास होने लगता है। किंतु उसकी मनोवृत्ति का झुकाव भावुक पूर्ण (Expressional) नृत्य की ओर होजाता है।

नर्तक प्रौढ़ होजाने पर भी अपना अभिनय ठीक कर सकता है। यद्यपि उसका हृदय भाव रहित होजाता है, तब भी उसकी कला की जानकारी उसमें रहती है।

कला पूर्ण नृत्य वह है जिसमें नर्तक एक विद्यार्थी के समान छोटे २ टुकड़े

या बोल याद करता है (गये साल नृत्य के बोल त्रिताल में दिये थे अब इस लेख के अन्त में दुगुन के बोल परण के साथ दिये जाएंगे) प्रायमरी स्कूलों में बच्चों को केवल स्वर अथवा व्यंजन की बनावट, उनका मिलाना आदि सिखाते हैं, उसी तरह एक नर्तक 'ता थेई २ तत्' इत्यादि की वर्णमाला का ज्ञान प्राप्त करता है। तत्पश्चात् शब्दों अथवा वाक्यों का बनाना सिखाया जाता है। उसी तरह नर्तक, टुकड़े परन, बोल, तिहैया, इत्यादि सीखता है। जितना जिसका अभ्यास प्रचुर होगा उतना ही वह अच्छा विद्यार्थी समझा जावेगा।

इस कला का आधार ताल है। बिना ताल का नृत्य, वादन या गायन अशुद्ध समझा जाता है। नर्तक के घुंघरू की आवाज़ उसके बोलों के समानंतर होनी चाहिये।

कुछ लोगों ने ताल की मुख्यता बिलकुल उड़ादी है। किन्तु क्या वे कला के पूर्ण अङ्ग का आनन्द उठा सकते हैं? निस्संदेह स्वरों का सुख प्राप्त होता है और वह भी अधूरा। आदि काल से अबतक और प्रलय काल तक ताल की मुख्यता रहेगी।

ताल ज्ञान, गायक, वादक की अपेक्षा नर्तक को विशेष होना चाहिये। उसका दारोमदार ताल पर ही निर्भर है। प्रत्येक नर्तक का तबला बजाने वाला ताल का पूर्ण आचार्य होता है। नर्तक की सफलता का एक अङ्ग, ध्वनि है। कई यन्त्रों से, एक स्वर बद्धपंक्ति नृत्य के समय बनती रहती है। इससे नर्तक की भाव, लय भिन्न नहीं होना चाहिए, नहीं तो उसकी अवस्था भूले पथिक सी होगी। प्रत्येक नर्तक की प्रशंसा उसकी सावधानी से ही होती है।

नर्तक के अङ्ग प्रत्यङ्ग से सङ्गीत की लय अथवा ताल की जानकारी प्रकट होनी चाहिए। नर्तक एक चित्रकार है। लय अथवा ताल वर्णन उसकी बारिकी, किसी भाव विशेष का उत्थान और किसी पेढ़े-टेढ़े मार्ग से होकर उस नर्तक का निश्चित समय (Tining) पर अपने सौन्दर्य का चमत्कार प्रदर्शन करते हुए आना ही कठिन कार्य है। चित्रकी कूंची (Bursh) साकारता प्रदान करती है, नर्तक की उंगलियों का यहां वहां आना जाना, हाथों का संकेत, उसकी चितवन, उसके पैर और कमर की लोच इत्यादि नृत्य को साकार बनाते हैं। चित्र में जिस तरह कई रङ्ग होते हैं, उसी तरह नर्तक में भी कई भाव रङ्ग होते हैं।

नर्तक का रङ्गीन, कल्पित चित्र, मन की आंखों के दिखाने, चित्रकार के चित्र से कहीं अधिक साकारता प्रदान करता है। केवल दाहिने पैर को बांये पैर के दूसरी ओर पैरों की उंगलियों पर खड़ा करना, दाहिने और बायें हाथों से बंशीधर (भगवान श्रीकृष्ण) की मुद्रा दिखाना, कहीं ज्यादा आकर्षिक और मन हरण है।

चित्रको समझना वैसा ही कठिन है जैसे नृत्य को। अज्ञान दर्शक की हँसी रुक नहीं सकती, जब वह देखता है कि चित्र में नाक लंबी, आंखें छोटी या बड़ी हैं, या मुंह गोल या लंबा है। पर ये बातें विशेष महत्व नहीं रखती। हमें समझना चाहिये कि संसार की समस्त कलाओं का उद्देश्यभाव चित्रित करना है। भावों से हमारा प्रधान सम्बन्ध है।

कितने परिश्रम से चित्रकार या नर्तक अपना कार्य करता है, और उसे न समझने वाले हँसने लगते हैं। निश्चय हम उन पर वज्र प्रहार करते हैं। किन्तु क्या नर्तक को अपना उद्देश्य छोड़ देना चाहिए ? संसार में कला-प्रेमी हैं, तो हँसने वाले भी हैं। उच्च कोटि के नर्तक को उपरोक्त तीनों नृत्यों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये। आजकल गायन और नृत्य में जो गंदगी फैली हुई है उसकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं देना चाहिये। यह तो प्रत्येक जानता ही है कि मानव-जीवन से कला का पृथक्करण तो हो नहीं सकता। हम जीवन को भी एक स्वतंत्र कला मानते हैं। अपने सभी रूपों में हमें वह अनुप्राणित किया करती है। ललित कला का और भी गहरा साहचर्य हमारे साथ है, उसमें धर्म का झगड़ा नहीं, जाति भेद नहीं, वह अपने आकर्षक बल पर, अपना जबर्दस्त सिक्का हमारे ऊपर जमा रही है। रूप रेखा हीन अर्चना भावों को छोड़कर, धार्मिक आज्ञाओं का उलंघन कर मुसलमानों ने इसे अपनाया है, यह ऐतिहासिक सत्य है, इसपर पर्दा नहीं डाला जा सकता कि कला-शक्ति से प्राभवित होकर ही, प्रकारांतर से वह मूर्ति-पूजा कर रहे हैं फिर हमारी इस नृत्य-कला के बारे में क्या कहा जाए ? उसका प्रभाव-जीव-ईश्वर दोनों पर समान रूप से है। हम अपने कर्म-नृत्य की बात छोड़कर भी कह सकते हैं कि ईश्वर स्वयं नर्तक है और लकड़ी में छिपी आग की तरह अस्पष्ट भाव से चेतन अचेतन सभी को उनमें अपनी प्रेरणा डालकर नचाता रहता है। इतना ही क्यों, हम कहेंगे कि नृत्य यथार्थ में ईश्वर की पंच क्रियाओं-सृष्टि, स्थिति, तिरोभाव और अनुग्रह का द्योतक है। वह अलग २ ब्रह्मा विष्णु और सदाशिव की क्रियाओं का रूप है। 'सत्यं शिवंसुन्दर' में उन का रूप भव्य रूप बनकर रह गया है। शिव शक्ति सर्व व्यापिनि से, शिव ही सब कुछ हैं, सर्व व्यापी हैं, इसलिये उसका मङ्गल मय नृत्य सर्वत्र दृष्टि गोचर होता है। उसके पांच प्रकार के नृत्य सकल और निष्कल रूप मे होते हैं, उन नृत्यों का हम जल अग्नि, वायु और आकाश में होने की कल्पना करते हैं। प्रभु का यह अनादि और अनंत नृत्य दिखलाई भी पड़ता है, मगर उन्हें दिखलाई पड़ता है जो माया से नहीं, महा माया से भी ऊपर उठ चुके हैं। इस प्रकार हमारे सर्वेश्वर तो सदा अपने प्रांगण में नृत्य किया करते हैं, सांसारिक नृत्यों-मानव संसर्ग में भी हम उन्हें नाचते पाते हैं, यह भी भुलाया नहीं जा सकता।

कि मीरा के भक्ति नृत्य से कितने प्राण भक्ति विभोर हुए, कितनों की आत्मा में आध्यात्मिक स्फूर्ति आई–यह बतलाना मीरा की यशोकीर्ति को मलिन करना है। नृत्य के विपक्षी, इसका उत्तर–अपनी आत्मा से ही–यदि उनकी आत्मा उत्तर देने लायक है तो–पूछने का कष्ट करें कि कलाकार की दृष्टि में कला आध्यात्मिकता से बहुत ऊपर उठकर अवर्णनीय होजाती है, और सर्व साधारण की दृष्टि में वह आध्यात्मिकता की जननी दिखाई देती है। इसका हमें सदैव ध्यान रखना चाहिये कि कला कार्य का सदा आनन्द प्रदान करना है और आनन्द कभी कलुषित नहीं होता है। हमारा और आपका मन अपनी कलुषता की छाया से यदि शुद्ध आनन्द को कलुषित बनावे तो इसका दोष कला के सिर क्यों मढ़ा जाए। जब तक कला का गला नही घोट दिया जाता, तब तक उससे पशु लालसा और काम वृत्ति की पूर्ति नहीं हो सकती, और उसके पश्चात् के दुष्कर्मों का आरोग्य कला का गला घोंटने वालों के ऊपर ही हो सकता है।

मीराबाई, जिस समय नृत्य कला में 'अब काहे की लाज, सजनी प्रकट होवें नाची' गा २ कर अपनी आत्मा को आनन्द में विभोर कर देती थी, उस समय किस पापी के हृदय में वासना का स्रोत उमड़ता था। लोग भले ही इस बात को मानले परन्तु अपनी दृष्टि में तो, मीरा, उस समय मिलन सुख में डूबी हुई दिखाई देती है, जिस सुख के लिये, हमारे उपनिषद गाते हैं। यथाः–

मधुवाता ऋतायते। मधुक्षरंति सिंधवः।
माध्वीर्नः संत्वोषधीः। मधुनक्त मुतोषसः॥
मधु मत्पार्थिवं रजः। मधुद्योरस्तनुः पिता।
मधुमान्नो वनस्पातेः। मधु मानस्तु सूर्यः॥
माध्वी र्गावो भवंतु नः।

अनेक लोग नृत्य का अर्थ ऐसे भी निकालते हैं कि अङ्ग निक्षेप एवं सैन संकेत द्वारा रसात्मक ढंग से अन्तर की अनुभूतियों को दूसरों पर प्रकट करना और विश्व के कौने २ में नयन–नितंव का प्रदर्शन करना ही नृत्यकला है। सत्य कहना पाप न हो तो हमारी समझ से वे लोग अपनी व्याख्या के द्वारा, कला मर्मज्ञता का अभूत पूर्व सबूत दुनियां के समक्ष ला सकते हैं। सब कुछ कहकर, वे यह कहना क्यों भूल जाते हैं कि प्रत्येक मनुष्य का जीवन–वैयक्तिक जीवन–उनकी स्वार्जित भावनाओं से बना है।

हम अपनी वासनाओं के वशीभूत होकर संसार के अनेक कामों में प्रवृत्त होते हैं तथा सुख और दुःख का उपयोग करते हैं। हमारी इच्छाएं ही संसारी

पदार्थों में स्फुरित होजाती हैं। James तथा Duice के प्रेग मेटिज्म (Pregmentism) से यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि प्रेगमेटिज्म के अनुसार संसार का अनुभव हमारी मानसिक प्रवृत्तियों पर ही निर्भर है। हमारी भोग इच्छाही हमारे संसार का निर्माण करती है। वासनाओं वाला व्यक्ति तत्व ज्ञान भी कहे तो वह तत्व ज्ञान भी उसके भोग की सामग्री बनजाता है। कर्म तो वासनाओं का प्रति फल है।

मनुष्य के हृदय में जो रति आनन्द और स्पर्श सुख है-वह भी ईश्वर सुख की लहर है। सभी आनन्दों में उसी एक चराचर वाले का आनन्द व्याप्त है। 'पुरुष' भी केवल एक वही है 'कामी' भी केवल एक वही है, शेष सब कुछ उसकी भोग्या है। अब साफ बात तो यह है कि कोई हृदय आत्मरमण में भी काम वासना का स्वप्न देखे तो इसका कोई इलाज नहीं। भूमा के आनन्द में, रसोवैसः की ध्वनि में भी नैतिकता का ह्रास देखने वाले लोग दुनियां में हैं। बेचारी कला को कलुषित बताते हैं, तो कोई बड़ी बात नहीं! आदि काल से ही--

'आनंदाद ध्येव खाम्विमानि भूतानि जायन्ते।
आनंदेव जातानि जीवन्ति, आनन्द प्रयंत्यक्ति संविशन्ति।'

का सत्य, विवाद के मार्ग से चल रहा है और हमारी आपकी मानसिक कलुषताओं के कारण दुनियां को यदा-कदा यह कहने को अवसर मिल जाता है, कि आनन्द भी कलुषित होता है।

हमारे मनके विकार ही हमें नृत्य-कलामें पाप का दर्शन करा रहे हैं। नयन-नितम्ब-नर्तक को ही सही हम उसके रूपों को नहीं लेंगे-काम चेष्टा प्रदर्शन से समानता नहीं दी जाती। नृत्य कला के नयन नितम्बों में कुदरत नग्नता है, वह नग्नता है? जो लाज विहीन नहीं, वरन् सभी लज्जाओं का उद्गम है। वसन्त में खिले पुष्पों को देखकर किसी के मनमें काम अग्नि धधकती है तो, कोई To me the meanst flawer that blows can give thought that often in too deep for tears कहने को वाद्य होता है। आख़िर कोई भी चीज़ अपनी आंखों से ही देखी जाती है। हमारी आंखों में जो दृश्य चित्र उतरता है, वह दृश्य और हमारी अन्तर भावनाओं का मिश्रित चित्र होता है।

नृत्यकला में भी कुछ बुराइयां हैं और 'श्री उदयशङ्करजी भट्ट' के समान लोग उसे दूर करने के प्रयत्न में सतत् परिश्रम कर रहे हैं। हमें चाहिये, इस ओर अपने विचार से नृत्यकला को गंतव्य मार्ग पर ले चलें। व्यर्थ के बकवादों को सुनकर नृत्यकला के इच्छुकों को कभी अपना मार्ग तथा अपने ध्येय को नहीं छोड़ना चाहिये।

"हाथी चले अपनी चाल से, कुतर भुंसत
वाको भुंसवादे तूतो राम सुमर जगलड़वादे"

उपरोक्त कहावत का स्मरण रखते हुए नृत्यकला का सतत अभ्यास करना चाहिये। गये साल आपने त्रिताल का ठेका 'ता थेई थेई तत् थेई थेई तत्' याद किये थे, अब आप इसी ठेके की दुगुन Double करिये यानी एक आवृत्ति में उक्त ठेके को उसी प्रकारा दो मर्तवा कह डालिये। यथाः--

×								२							
१,	२,	३,	४,	५,	६,	७,	८,	९,	१०,	११,	१२,	१३,	१४,	१५,	१६
ता	ऽ	थे	ई	थे	ई	त	ऽ	त्	थे	ई	थे	ई	त	ऽ	त्
०								३							
१,	२,	३,	४,	५,	६,	७,	८,	९,	१०,	११,	१२,	१३,	१४,	१५,	१६
ता	ऽ	थे	ई	थे	ई	त	ऽ	त	थे	ई	थे	ई	त	ऽ	त्

अब दुगुन के बोल तिये के साथ दिये जाते हैं।

× ता थेई तत् थेई थेई	२ ति धे तत् थेई ता	० ता धा थेई ता थेई
३ ता धा थेई ता थेई	× ति धे ति धा ता	२ थे ई ति धे ति
० धा ता थे ई	३ ति धे ति धा ता	थे ई (सम)

बोल को निकालनाः–

ताः–ज़मीन पर लंब रूप खड़ा होकर, सीधे हाथ को बिलकुल समकोण Right angle में रखें, मगर हाथ के, पंजे से पताका नामक मुद्रा बनाये (कलाई के यहां से पंजे की समस्त उङ्गलियों को खोलकर तथा तानकर लम्ब Prpendiculer रखना तथा बांये हाथ को सर के ऊपर पता का मुद्रा में रखकर दाहिने पैर को ज़मीन पर डालना चाहिये लेकिन ख्याल रहे कि दाहिनी बाजू से कमर चँद्राकार arc की शकल में रहे तथा दुगुन Side depth बांई ओर न्यून कोण Acute angle बनाये रहे। गर्दन सम भङ्ग में रहकर नेत्र आधे मूंदकर भौंहों को कुछ चढ़ाकर 'ता' निकालना चाहिये।

थेई:-उसी 'ता' की अङ्गस्थिति में Pose में बांयें पैर को १ फुट आगे डालना चाहिये तथा सहसा आंख तथा कमर का कुछ धक्का (झझका) देकर वैसे ही खड़े होजाना, कलाइयों wrist के यहां से दोनों हाथों में संदेश मुद्रा (अंगूठे से तर्जनी उंगली को मिलाकर) बनाकर 'थेई' निकालिये।

तत्:--दाहिने पैर को जमा हुआ जमीन पर डालकर 'ता' शब्द के विपरीत opposite हाथों तथा कमर की मुद्रा को बनाना चाहिये मगर आंख को एकदम खोल देना चाहिये और गर्दन आगे खिंचकर भौंहों को ऊपर चढ़ा लेना चाहिये।

ति:--दोनों हाथों कीपताका मुद्रा बनाकर सामने बिलकुल सीधे रखकर दाहिने पैर को पटककर।

धे:--एकदम 'धे' को निकालना यानी 'ति' वाले हाथों को खिंचकर, छाती कमर और गर्दन में क्रम से--

सम भङ्ग, द्विभंग और सम भङ्ग लेकर एकदम झझका देना चाहिये। पुनः 'तत' को वैसे ही निकालना चाहिये।

ता धा:-बांये हाथ को पीछे से obtuse angle में, सीधे हाथ को छाती के बराबर बांये हाथ की कोहनी तक लाकर दो मर्तबा बांये पैर को पटकना, भौंहों को चढ़ाकर दृष्टि को ४५ डिग्री नीचे की ओर तथा कमर के हिलाने के साथ दृष्टि को भी कुछ २ बांई ओर चढ़ाना उतारना।

मोहरा निकालना।

इनके निकालने में कुछ भिन्नता रहती है। यथा:--ति:(१)-दाहिने पैर को ज़मीन पर डालकर दोनों हाथों के गुछे को मिलाकर तथा उगलियों को सीधा रखकर 'धेति'(२) निकालना पाने बांये पैर को १० डिग्री में शरीर को घुमाकर डालना तथा 'धा'(३) दाहिने पैर को नीचे पटकना और शरीर को बिलकुल विपरीत दिशा में रखकर यानी सामने से १८० डिग्री के कोण में रखकर 'ता'(४) २७० डिग्री का कोण बजाकर बाये पैर को पटकना चाहिये और थेई आते ही उसी प्रकार सम्मुख खड़े होजाना और दाहिने पैर को पटकना चाहिये।

नोट:--मोहरा निकालते समय पूरा एक चक्कर बनाना पड़ता है। अब मानिए कि पूरा चक्कर ३६० अंश का होता है। यदि ३६० अन्श में ४ को भागदेते। ९० नब्वे अंश होते हैं। अब प्रथम १ को दाहिने पैर से निकालना फिर ९० अंश घूमकर दूसरे को में १८० अंश घूमना ३ में २७० अंश घूमना और ४ में ३६०

अंश में घूमजाना और थेई यानी ५ आते ही सामने थेई की अंश स्थिति बनाकर खड़े होजाना चाहिये।

नोट नं० २–पैरों के घुंघरू कांसी के और करीब करीब नीम्बू के बराबर बड़े होना चाहिये। इन छोटे घुंघरू से शरीर का Balance बराबर नहीं रहता एक पैर में कम से कम २० या २५ घुंघरू होना चाहिए घुंघरू को यदि मोची से चमड़े की पट्टी के ऊपर सिलालिया जाए तो पैर में लगेंगे नहीं।

अब एक दो परण नृत्य की लिखी जाती हैं। इन्हे ज़बानी याद कर लीजिये। भविष्य में इन को भी निकालने का प्रयत्न किया जाएगा।

लास्य नृत्य की परण:–

× ता थेई थेई तत्	। थेई थेई तत् १	० २, ३, ४, ५, ६
। तिग धा तिग दिग	× तिग धा तिग दिग	। तिग धा ता तिग
धा दिग दिग	० थेई १, २, ३ कड़ा	× नथेई कड़ान थेई कड़ान
। थेई १, २, ३ कड़ा	० न थेई कड़ान थेई कड़ान	। थेई १, २, ३ कड़ान थेई

आड़ी परन

× तान थेई	। धान थेई	० धिकिट धिध्	। धिकिट तगन
× नगन दिगन	। दिगन्तान तका	० थुंथुं किट तान ता	× थे ई ऽ थुं
३ किट तान ता	० थेई ऽथुं	३ किट तान ता	थेई सम

नोट—इस लेख में मुझे माधुरी, नाद विनोद सङ्गीत रत्नाकर, सङ्गीतकलाधर (गुजराती) तथा वलवैश्वरानंदजी के भावों से खूब मदद मिली है अतः मैं उनका बहुत ही आभारी हूं।

—:(*):—

कत्थक घराने के प्रसिद्ध बोल और परन।

(लेखक—प्रोफेसर बैनीप्रसाद श्रीवास्तव 'भाई')

प्रिय पाठको सम्पादक महाशय की इच्छा थी कि नृत्यकला की यह चतुर्विधि स्वरलिपि मैं तथा मेरे योग्य शिष्य श्रीमान् नरेन्द्रसहाय जी वर्मा द्वारा तैयार कर आप सभी प्रेमियों की सेवा में भेंट करूं। यदि आप इसकी ओर स्वयम् या अपने बच्चों के साथ थोड़ा भी परिश्रम करेंगे तो इस से निःसन्देह समुचित लाभ उठावेंगे। सांकेतिक चिन्हों का अक्षरशः पालन करते हुए जब आप इसे अच्छी, तरह तैयार करलेंगे तो आप को यह भली भांति प्रकट होजायगा कि लखनऊ के सुविख्यात नटराज स्वर्गीय श्री कालका बिन्दा जी महाराज कैसा नाचते होंगे। उनके दो सुयोग्य पुत्र इस कला के आखरी कलाकार हैं। इनकी नृत्यकला का वास्तविक चित्र खींचना कठिन है, और लिखना तो असम्भव सा है। यही कारण है कि नृत्य जैसे कठिन विषय पर सङ्गीत संसार के सन्मुख अब तक कोई साहित्य नहीं रक्खा जा सका। –लेखक।

लेख से विद्वता प्रकट होती है, लेख पाठकों के मनन करने योग्य है। लेखक ने नृत्यकला की वास्तविक झलक दिखलाने का अतुल परिश्रम किया है। –सम्पादक।

(१) लहरा राग बिलावल ताल तीन तात्रा १६)

ताल के चिन्ह	×				२				०				३			
मात्रायें–	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
लहरे के बोल	सं	ऽ	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न

(२) लहरा नं० १ को चार छः बार बजाने के बाद लहरा बजने के साथ ही तबले में ठेका पर आने से पहले आमद की बोल ।

	×				२				०				३			
लहरा-	सं	-	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न
तबला-	धा	तिर	किट	तक	तिन	तिर	किट	तक	धा	गे	तिर	किट	धिं	-	किट	तक
तबला-	धा	गे	तिर	किट	कत्त	तक	तिर	किट	धिं	ऽ	तिर	किट	धिं	-	तिर	किट

(३) लहरा के साथ ही आमद की बोल नं० २ को दून की लय में इस तरह बजावें ।

लहरा-	सं	-	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न
तबला-	धातिर	किटतक	तिंनतिर	किटतक	धागे	तिरकिट	धिं-	किटतक	धागे	तिरकिट	कततक	तिरकिट	धिं-	तिरकिट	धिं-	तिरकट
,,	धिं-	-	-	तिरकिट	धिं-	तिरकिट	धिं-	तिरकिट	धिं-	-	-	तिरकिट	धिं-	तिरकिट	धिं-	तिरकिट

(४) लहरा और ठेका को इस तरह कायम होजांय ।

लहरा-	सं	-	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न
तबला-	धि	-	धि	ना	ना	धि	धि	ना	ना	तिं	तिं	ना	ना	धि	धि	ना
,,	ना	-	धि	ना	ना	धि	धि	ना	ना	तिं	तिं	ना	ना	धि	धिं	ना

(५) लहरा और ठेके की संगत के साथ नृत्य आमद की बोल ।

(५) लहरा और ठेके की संगत के साथ नृत्य आमद की बोल।

लहरा–	सं	गर	गप	धप	मग	मर	गप	धन	–	धन	–	धन	–	मर	गप	धन
तबला–	तिन	तिटे	कत	तिटे	तिनधिन	तिटे	तिटे	कत	–	कत	–	कत	–	तिटे	तिटे	कत
नृत्य–	ता	थेई	तत	थेई	तीदा	थेई	थेई	तत	–	तत	–	तत	–	थेई	थेई	तत
पैर–	१	२	१	२	२	१	२	१	–	१	–	१	–	२	२	१

(६) लहरा और तबले की बोलों की संगत सहित नृत्य आमद की बोल को इस तरह नाचें।

लहरा–	सं–गर	गपधप	मगमर	गपधन	––धप	––मग	––मर	गपधन	सं	––मप	––मर	गपधन	सं	––मग	––मर	गपधन
तबला–	तिनतिटे	कततिटे	तिनधिनतिटे	तिटेकत	––कत	––कत	––तिटे	तिटेकत	धा	––कत	––तिटे	तिटेकत	धा	––कत	––तिटे	तिटेकत
नृत्य–	ताथेई	तत्तथेई	तीदाथेई	थेईतत	– ·तत	––तत	––थेई	थेईतत	धा	––तत	––थेई	थेईतत	धा	––तत	––थेई	थेईतत
पैर–	१,२	१;२	२,१	२,१	––१–	––१–	––२–	२–१–	१	––१–	––२–	२–१–	१	––१–	––२–	२–१–

(७) लहरा, तबले का ठेका तथा नृत्यादि के बोलों सहित कायम होना।

लहरा–	सं	–	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न
तबला–	धा	–	धिं	ना	ता	धिं	धिं	ना	ता	तिं	तिं	ना	ना	धिं	धिं	ना
नृत्य–	ता	–	थे	ई	थे	ई	त	त	त	–	थे	ई	थे	ई	त	त
पैर–	१	–	२	–	१	–	२	–	२	–	१	–	२	–	१	–

(८) नृत्य के बोल की पहली चलन फिरन ।

लहरा—	सं	–	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न
तबला—	धागे	तिरकिट	तेतिन	तिरकेट	तेतिन	तिरकिट	तिरकिट	तत	कत	तिन	तिन	धिन	तिटतक	तिरकिट	नगता	तिरकिट
नृत्य—	ता	थेई	तीदा	थेई	तीदा	थेई	थेई	तत	कत	ता	ता	धा	थेई	थेई	थेई	तत
पैर—	१	२	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	१	२	२	१
लहरा—	ग	प	ध	न	सं	–	ग	प	ध	न	सं	–	ग	प	ध	न
तबला—	किटतक	तिरकिट	नगता	तिरकिट	धा	–	किटतक	तिरकिट	नगता	तिरकिट	धा	–	किटतक	तिरकिट	नगता	तिरकिट
नृत्य—	थई	थेई	थई	तत	ता	–	थेई	थेई	थेई	तत	ता	–	थेई	थेई	थेई	तत
पैर—	१	२	२	१	१	–	१	२	२	१	१	–	१	२	२	१

(९) अब नं० ८ आठ वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले पर एक दो आवृति के लिये आजाइये ।

इसके बाद फिर—

(१०) नृत्य के बोल की दूसरी चलन फिरन ।

लहरा–	संधं-सं	ध-संलं	सं	गर	गप	धप	मग	मर	गप	मग	मर	गप
तबला–	कतिन-क	तिन-तिटे	धागेतिरकिट	तीतिनतिरकिट	तीतिनतिरकेट	तिरकेटतत	कततिन	तिनधिन	किटतकतिरकिट	कततिन	तिनधिन	किटतकतिरकिट
नृत्य––	तकात्तत	काश्रतिटे	ताथेई	तिद्राथेई	तिदाथेई	थेईतत	कतता	तोधा	थेईथेई	कतता	ताधा	थेईथेई
पैर––	१,२-१	२-१२	१,२	२,१	२,१	२,१	२,१	२,१	१,२	२,१	२,१	१,२

	मग	मर	गप	धन
	कततिन	तिनधिन	किटतकतिरकेट	नगतातिरकिट
	कतता	ताधा	थेईथेई	थेईतत
	२,१	२,१	१,२	१,२

लहरा–	गप	धन	सं	-	गप	धन	सं	-	सं	-	गप	धन	सं	-	सं	-
तबला–	तिनकिन	नगतातिरकिट	धि	ऽ	तिनकिन	नगतातिरकिट	धि	ऽ	धि	ऽ	तिनकिन	नगतातिरकिट	धि	ऽ	धिं	ऽ
नृत्य––	ताधा	थेईतत	एऽ	ऽक	ताधा	थेईतत	एऽ	ऽक	दो	ऽ	ताधा	थेईतत	एऽ	ऽक	दो	ऽ
पैर––	२,१	२,१	१-	--	२,१	२,१	१-	--	१	-	२,१	२,१	१-	--	१	-

लहरा–	सं	––	ग	र	ग	प	ध	प	म	ग	म	र	ग	प	ध	न
तबला–	धि	–	धि	ना	ना	धि	धि	ना	ना	तिं	तिं	ना	ना	धि	धि	ना
नृत्य––	ती	–न	थ	ई	थ	ई	त	त	आ	ऽ	थ	ई	थ	ई	त	त
पैर––	१	–	२	–	१	–	२	–	२	–	१	–	२	–	१	–

(११) अब नं० १० दस वाले बोल को दून से नाचकर फिर नं० ७सात वाले पर एक दो आवृति के लिये आजाइये इसके बाद फिर– (१२) नृत्य के बोल की तीसरी चलन–फिरन।

लहरा–	सं–	गर	गप	धप	मग	मर	ग–	पध	गप	मग	मर	ग–	मर	ग–	प–	धन
तबला–	तिन	धागे	तेटे	धागे	धागे	धागे	तेत	धागे	तेटे	धागे	धागे	तेत	धागे	तेत	ता	कत
नृत्य––	ता	थेई	तिदा	थई	थई	थई	तत	थई	तिदा	थई	थई	तत	थई	तत	ना	कत
पैर––	१	१,२	२,१	१,२	१,२	१,२	१	१,२	२,१	१,२	१,२	१	१,२	१	१	१,२

लहरा–	मर	ग–	प–	धन	सं–	मग	मर	ग–	प–	धन	सं–	मग	मर	ग–	प–	धन
तबला–	धागे	तते	तिन	कत	धा	कत	धागे	तेत	तिन	कत	धा	कत	धागे	तेत	तिन	कत
नृत्य–	थई	तत	ता	कत	धा	कत	थई	तत	ता	कत	धा	कत	थई	तत	ना	कत
पैर–	१,२	१	१	१,२	१	१,२	१,२	१	१	१,२	१	१,२	१,२	१	१	१,२

(१३) अब नं० १२ वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले पर एक दो आवृति के लिए आजाइये।

इसके बाद फिर– (१४) सङ्गीत का प्रसिद्ध टुकड़ा।

लहरा–	सं	सं	सं–	धप	मग	मर	गप	मग	म–	रस	–स	गप	मग	मर	गप	धन
तबला–	तत	तत	ता–	तेटकत	दिन	दिन	धागे	कत	धागि	नधा	गिन	तक	धिन	धिन	गिदा	कत
नृत्य—	तत	तत	ता–	द्रग	दुन	दुन	झट	कत	थो–	थुंब	–ग	तक	थुन	थुन	गिदा	गिन
पैर—	१–	२–	१–	१,२	१–	१–	१,२	१,२	१–	२,१	–२	१,२	१–	१–	१,२	१,२

लहरा–	सं–	रस	–स	गप	मग	मर	गप	धन	सं–	रस	–स	गप	मग	मर	गप	धन
तबला–	धिन	नधा	गिन	तक	धिन	धिन	गिदि	कत	धिन	नधा	गिन	तक	धिन	धिन	गिदि	कत
नृत्य—	थेई	थुंब	–ग	तक	थुन	थुन	गिदि	गिन	थेई	थुंब	–ग	तक	थुन	थुन	गिदि	गिन
पैर—	१–	२,१	–२	१,२	१–	१–	१,२	१,२	१–	२,१	–२	१,२	१–	१–	१,२	१,२

(१५) अब नं० १४ वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले पर एक दो आवृति के लिये आजाइये।

इसके बाद फिर– (१६) संगीत का प्रसिद्ध टुकड़ा दूसरी तरह से।

लहरा–	सं–	गर	स–	गम	प–	पध	प–	धम	ग–	ग–	रग	मर	प–	मग	–म	रस
तबला–	कत्त	तेटे	तिन	कत	धा–	कत्त	ती–	तेटकट	दिन	दिन	धागे	कत	धागे	नधा	गिन	तक
नृत्य—	कत्त	तेटे	तिन	कत	धा–	कत्त	ता–	द्रग	दुन	दुन	झट	कत	थो–	थुंब	–ग	तक
पैर—	१–	१,२	१–	१,२	१–	१,२	१–	१,२	१	१	१,२	१,२	१–	२,१	–१	१,२

लहरा–	म–	र–	प–	मग	–म	रस	म	र	म–	मग	–म	रस	म–	र–	गप	धन
तबला–	धिन	धिन	धागे	नधा	गिन	तक	धिन	धिन	धागे	नधा	गिन	तक	धिन	धिन	गिदि	गिन
नृत्य—	थुंब	थुंब	थो–	थुंब	–ग	तक	थुंब	थुंब	थो–	थुंब	–ग	तक	थुंब	थुंब	गिदि	गिन
पैर—	१–	१–	१–	२,१	–२	१,२	१–	१–	१–	२,१	–२	१,२	१–	१–	१,२	१,२

(१७) अब नं० १६ सोलह वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले बोल पर एक दो आवृति के लिये आजाइये, इसके बाद फिर।

(१८) सङ्गीत का प्रसिद्ध टुकड़ा तीसरी तरह से ।

लहरा—	—	स-	स-	स-	-	स-	ग-	मर	ग-	प-	गप	धन	सं-	संरं	-गं	मर
तबला—	--	तत	तत	तिन	-	तत	तिर	तेरकेट	दिन	दिन	धागे	कता	धागे	नधा	गिन	तक
नृत्य—	आ-	तत	तत	ता-	-	तत	ता-	द्रग	दुन	दुन	झट	कत	थो-	थुंब	-ग	तक
पैर—	--	२-	२-	१-	-	२-	१-	१,२	१-	१-	१,२	१,२	१-	२,१	-२	१,२

लहरा—	गप	धन	सं-	संरं	-गं	मर	गप	धन	सं-	संरं	-गं	मर	म-	र-	गप	धन
तबला—	धागे	कता	धागे	नधा	गिन	तक	धागे	कता	धागे	नधा	गिन	तक	धिन	धिन	गिदि	गिन
नृत्य—	झट	कत	थो-	थुंब	-ग	तक	झट	कत	थो-	थुंब	-ग	तक	थुंब	थुंब	गिदि	गिन
पैर—	१,२	१,२	१-	२,१	-२	१,२	१,२	१,२	१-	२,१	-२	१,२	१-	१-	१,२	१,२

(१९) अब नं० १८ अठारह वाले बोल को दून से नाच कर फिर नं० ७ सात वाले बोलपर आजाइये ।

इसके बाद फिर– (२०) नटवरी के टुकड़े नाचैं ।

लहरा–	गप	–प	गप	प–	पध	–ध	पध	ध–	धन	–न	धन	न–	नसं	–सं	नसं	सं–
तबला–	नाधिन	–धि	नाधी	नाग	नाधिन	–धि	नाधी	नाग	नाधिन	–धि	नाधी	नाग	नाधिन	–धि	नाधी	नाग
नृत्य––	तिगदा	–तिग	दा–	थेई	तिगदा	–तिग	दा–	थेई	तिगदा	–तिग	दा–	थेई	तिगदा	–तिग	दा–	थेई
पैर––	१,२	–१	२,२	१–	१,२	–१	२,२	१–	१,२	–१	२,२	१–	१,२	–१	२,२	१–

लहरा–	मग	ग–	मर	र–	रग	ग–	गप	प–	पन	न–	सं–	पन	न–	सं–	पन	न–
तबला–	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीमाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग
नृत्य––	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा	तिगदा
पैर––	१,२,१–	१,२,१–	१,२ १–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१–	१,२,१

लहरा–	संसंसं–	संसंसं–	गगग–	ररर–	गगग–	पपप–	धधध–	पपप–	ममम–	गगग–	ममम–	ररर–	गगग–	पपप–	धधध–	ननन–
तबला–	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग	नाधीनाग
नृत्य––	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-	एकदो-
पैर––	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-	१,२,१-

बड़ा ख्याल
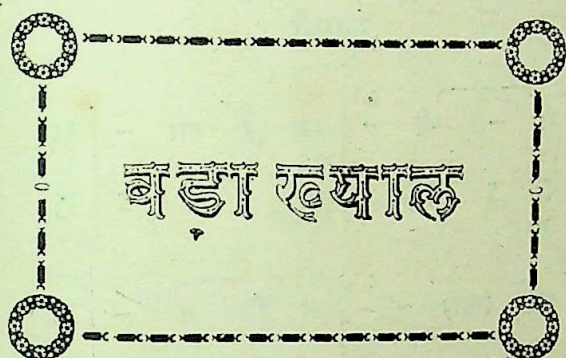
राग-अल्हैया बिलावल

शब्दकार — ताल तिलवाड़ा — प्रोफेसर एन० एल० गुणे

विलंबित लय

गीत

स्थायी--कलना परे अब तुमरे दरस बिन बनवारी ।
अन्तरा-निस दिन मैका जुग सम बीतत !
वेग पधारो कृष्ण मुरारी ॥

स्थायी

ध	प	गम	गमप,म	ग	-	री	-	सा	रे	सा	-	सा	रे	ग	मरे
क	ल	नाऽ	ऽऽऽ,प	रे	ऽ	ऽ	ऽ	अ	ऽ	ब	ऽ	तु	म	रे	ऽद
३				×				२				०			
ग	प	-	(प ध) निनि	सां	(सां)	-	-	(सां) ध	नि	प	-	ध	ग	म	ध
र	स	ऽ	बिन	ब	न	ऽ	ऽ	वा	ऽ	ऽ	ऽ	री	ऽ	ऽ	क
३				×				२				०			
प	ग	म	गमप,म	ग	रे	सा	-								
ल	ना	ऽ	ऽऽऽप	रे	ऽ	ऽ	ऽ								
३				×											

अन्तरा

प	प	नि	(ध) नि	सां	-	सां	-	सां	रें	गं	मंरें	सां	(सां)	धनि	प
नि	स	दि	न	मैं	ऽ	का	ऽ	जु	ग	स	ऽम	बी	ऽ	तऽ	त
३				×				२				०			
(प) ध	नि	ध	प	म	ग	म	रे	ग	म	प	म	ग	रे	सा	ध
वे	ऽ	ग	प	धा	ऽ	रो	ऽ	कृ	ऽ	ष्णा	मु	रा	ऽ	री	क
३				×				२				०			

प ग म गमप,म
ल ना ऽ ऽऽऽप
३

अलाप स्थायी

क ल नाऽ ऽऽऽ,प ३	रे ऽ ऽ ऽ ×	सा री ग मरे २	सा -, सा रे ०
ग प म ग ३	म रे सा -, ×	सा री ग प(प) २	ध ग म, क ०
ल ना ऽ ऽऽऽ,प ३			
क ल नाऽ ऽऽऽ,प ३	रे ऽ ऽ ऽ ×	अ ऽ ब ऽ २	म ग रे, ग ०
प म (म) ग ३	म रे ग(प) प ×	ध ग प मग २	म रे सा - ०
क ल नाऽ ऽऽऽ,प ३	रे ऽ ऽ ऽ ×		
क ल नाऽ ऽऽऽ,प ३	रे ऽ ऽ ऽ ×	अ ऽ व ऽ २	ग प ध ध(प) ०
नि ध प म, ३	प म ग मरे, ×	ग प ध नि २	सांसांनिध ऽनि सां ऽ ०
सां (सां) ध निप ३	प ध ध(प) नि ×	ध प म ग २	म रे सा - ०
क ल नाऽ ऽऽऽ,प ३	रे ऽ ऽ ऽ ×		

अलाप अन्तरा

नि स दि न ३	मै ऽ का ऽ ×	प ऽ निध नि २	सां - सां र ०

सां	-	सां	(सां)	ध	नि	प	-	ध	ग	म	रे	गप	धनि	सां	-
३				×				२				०			
नि	स	दि	न	मैं	ऽ	का	ऽ								
३				×											
नि	स	दि	न	मैं	ऽ	का	ऽ	ग	प	ध	नि	सां	-	सां	रें
३				×				२				०			
सां	-	-	-	सां	रें	गं	मंरें	सां	-	सां	(सां)	ध	नि	प	-
३				×				२				०			
नि	स	दि	न	मैं	ऽ	का	ऽ								
३				×											
दि	स	दि	न	सां	रें	सां	-	सां	रें	गं	मंरें	सां	-	सां	रें
३				×				२				०			
गं	पं	मं	गं	मं	रें	सां	-	सां	(सां)	ध	निप	ध	ग	मरे	सा
३				×				२				०			
नि	-स	दि	न	मैं	ऽ	का	ऽ								
३				×											

तानें—स्थायी

क	ल	नाऽ	ऽऽऽ,प	रे	ऽ	ऽ	ऽ
३				×			
सारेगरे	सासा,सारे	गपमग	रेसा,सारे	गपधनि	धपमग	रेसा,सारे	गपधनि
२				०			
सांनिधप	मगरेसा	कल	नाऽऽप	रे	ऽ	ऽ	ऽ
३				×			
क	ल	नाऽ	ऽऽऽप	रे	ऽ	ऽ	ऽ
३				×			

सारेगप २	धनिसारें	गरेंसांनि	धपमग	रेंस,सारे ०	गपधनि	सारेंगंपं	मंगंरेंसं
निधपम ३	गरेसा–,	कल	नाऽऽप	रे ×	ऽ	ऽ	ऽ
सारेगप, २	रेगपध,	गपधनि,	पधनिसं	धनिसारें, ०	निसंरेंगं,	संरेंगंपं,	मंगंरेंसां
निधपम ३	गरेसा–,	कल	नाऽऽप	रे ×	ऽ	ऽ	ऽ

तानें अन्तरा

नि ३	स	नि	न	मैं ×	ऽ	का	ऽ
जु २	ग	स	ऽम	सारेंसांनि ०	धपमग	रेगपध	निसं--
नि ३	स	दि	न	मैं ×	ऽ	का	ऽ
नि ३	स	दि	न	मैं ×	ऽ	का	ऽ
सांनिधप २	मगरेस,	संरेंसंनि	धपमग	रेंसागंरें ०	सांनिधप	मगरेस	पंमंगंरें
सांनिधप ३	मगरेस,	निस	दिन	मैं ×	ऽ	का	–

नोट—बड़े ख्याल की तानें हर हमेश चौपट की लय में कहना चाहिये।

---*---

राग-अल्हैया बिलावल

ताल तिलवाड़ा

(रचयित-प्रोफ़ेसर 'केलकर' साहेब माधव सङ्गीत विद्यालय ग्वालियर)

गीत

स्थायी--भोर भई मोहन श्याम,
तुम्हरे मिलन को ठाड़े गोप।
अन्तरा--जागोरे जागो मोरे श्याम ।
मुखचंद्र की कोर दिखावो ।

स्थायी

प सं			म
गप गपधनिसं ध निध	प – – धग	प – गमपपम रेग	गमप –म रे –म
भोऽ ऽऽऽऽ र ऽभ	ई ऽ ऽ ऽऽ	ऽ ऽ मोऽऽऽऽ ऽऽ	हऽऽ ऽन श्या ऽम
३	×	२	०
सं ध	सं		
नि नि सं –	सं (सं) – ध	–नि धप धग प	गपधनि धपमप मरे –स
तु म्ह रे ऽ	मि ल ऽ न	ऽऽ कोऽ ठाऽ ड़े	गोऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽ ऽप
३	×	२	०

अन्तरा-

	सं		
गप – धनिसं –सं	रें – सं –	गंरें – गंमंपं– –	मंगं मंरें सं –
जाऽ ऽ गोऽऽ ऽरे	जा ऽ गो ऽ	जाऽ ऽ गोऽऽऽ ऽ	मोऽ ऽऽ रे ऽ
३	×	२	०
निं ग		ग	
–ध नि प –	ध ग प –	प – गपधनि –ध	–प मग मरे –स
श्या ऽ म ऽ	मु ख चौं ऽ	द्र ऽ कीऽऽऽ ऽको	ऽर दिऽ खाऽ ऽवो
३	×	२	०

आलाप-स्थायी

सा ग ऽ मरे	सा ऽ, ग प	म (म) ग प	म रे सा ऽ	भोऽ
३	×	२	०	३

सा ग ऽ मरे	ग प ऽ म	(म) ग मरे ग	प ध ग प
०	३	×	२
मग म रे सा	भो		
०	३		
गप धनि धप ऽ	ध गप धनि सांऽ	धनि सांरें सां ऽ	ऽ धनि धप धग
०	३	×	२
प ऽ म ग	मरे सा, भोऽ रऽऽभ	ई	
०	३	×	
साग ऽ मरे ग	प ऽ ध ग	प ऽ मग मरे	गप धनि धप ऽ
०	३	×	२
धग प ऽ मग	मरे सा, भोऽ रऽऽभ	ई	
०	३	×	

आलाप अन्तरा

ग प धनि सां	ऽ, सां रें सां	ऽ सां (सं) ऽ	धनि धप जाऽ गोरे	जा
×	२	०	३	×
सां रें सां ऽ,	गं ऽ मंरें सां	ऽ, सां सं धनि	धप गप धनि सां	जा
३	×	२	०	३
प ऽ निध निसां	ऽ, सांरें सां ऽ	गं पं मंरें सां,	सां (सं) धनि धप	
०	३	×	२	
मप धनि धनि सां	जा			
२	३			
गप निध नि सां	सांरें सांऽ गं गंरें	गंपं मंगं मंरें सां	सांरें सां धनि धप	
३	×	२	०	
मग मरे, जाऽ गोरे	जा			
३	×			

तानें—

सारेगप धनिधप गपधनि धनिसंरें | सांनिधप मगरेसा भोऽ रऽऽभ | ई
0 | ३ | ×

सारेगप धनि,धनि संरेंसंनि धप,धनि | धपगम रे,गपध नि,धनिसं गरेंसंनि
२ | 0

धपमग मरेसाऽ भोऽ रऽऽभ | ई
३ | ×

गपधनि धप,मप गपधनि धनि,धनि | संरेंसंनि धप,गप धनि,धनि संरेंगरें
× | २

संरेंसंनि धपमरे गपधनि सांरेंगरें | संनिधप मगरेसा भोऽ रऽऽभ | ई
0 | ३ | ×

सांरेंगरें संरेंसंनि धपमग रे,गपध | निसांरेंगं पंमंगरें सांरेंसंनि धप,गप
२ | 0

धनिसंनि धपमरे भोऽ रऽऽभ | ई
३ | ×

—:(*):—

तराना
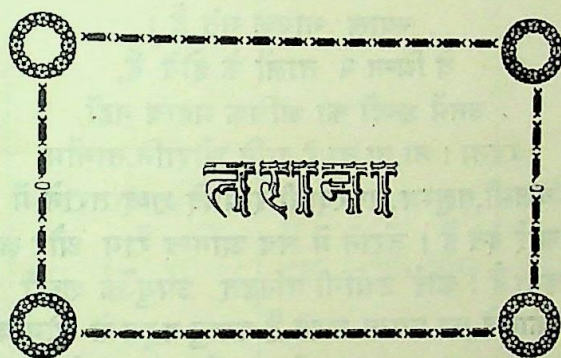
तराने बहुशः
ख्याल गायक गते हैं।
वे भिन्न २ तालों के होते हैं,
उनमें शब्दों का अधिक महत्व नहीं
रहता। ना,ना,ता,रे,दानि,ओदानि,तानोंम
यलली,यलुम्भ,तदरेदानी इत्यादि शब्द तराने में
दिखाई देते हैं। तराने में सब आनन्द राग और लय
का रहता है। कोई उद्योगी पण्डित उपर्युक्त शब्दों में से
अर्थ निकालने का प्रयत्न करते हैं परन्तु बहुत से लोगोंका मत
है कि यह सब्द उच्चार में सहूलियत करने के लिये
रक्खे हैं। कभी-कभी तरानों में मृदङ्ग के शब्दों
का फ़ारसी भाषा के एक दो शेर मिलाए हुए
मिलते हैं। तरानों का गायन सारे देश
में मनोरंजन माना जाता है, बहादुर
हुसेनखां, तानरसखां और
नत्थूखां के अनेक तराने
प्रसिद्ध हैं।

राग-यमनी (अलैया) बिलावल

ख्यालनामा (तराना) ताल-तिलवाडा (विलम्बित)

(ले०-श्री०राजा भैया पूछवाले प्रिंसिपल, माधव सङ्गीत महाविद्यालय, लश्कर-ग्वालियर)

स्थायी

			म प द
ध नि सां ध सां निसां रा ऽ तो ऽऽ ३	(सां) धनि प मप म्द ऽऽ रा ऽऽ ×	म मग - पप पप दरा - धेते लेला २	नि ध नि सांसांनिनि -ध सां निसां नाऽऽऽ ऽऽ रे ऽऽ ०
नि सां (सां) ध निप दी ऽ म्दी ऽम्त ३	म ग म ग प(प) पर ना ऽ नित नना ×	नि गरे सा सारे गरे ऽत ना ऽऽ द्रेरे २	नि सा - निसा,सा सासा ना ऽ ऽऽ,ना द्रेरे ०
गरे गम गग गग द्रेरे नन नन नन ३	नि म रे सारे गम प(प) मग द्रेद्रे तन द्रेद्रे तन ×	प नि मनि धप गरे सारे द्रेद्रे द्रेद्रे द्रेद्रे दाऽ २	म ममगग -रे सा निसा,प ऽऽऽऽ ऽऽ नी ऽऽ,द ०
नि प नि सांसांनिनि -ध सां निसां राऽऽऽ ऽऽ तो ऽऽ ३	म्द ० ×		

अन्तरा

नि नि प सां-सांरें सां- गमप गम-म	म ग - प (प)	ग रे गरे सा निसा-	ध साँनि साँसाँनिनि (प) -नि
बुलबुऽ ऽलबाजाऽ ऽऽर्नी	ला ऽ मी ऽ	गो ऽऽ य ऽऽ,द	ताके ऽऽऽऽ द ऽर्क
३	×	२	०
नि सां सांसां,- सांसां गंरें	प नि नि ग म गम धध	नि नि ध निप गरे सांरे	ग ग रे म ममगग -रे सा निसा,प
फ ऽऽ,ष कबी ऽऽ	ऽ ऽ बाऽ ऽग	बा ऽऽ जाऽ ऽऽ	ऽऽऽऽ ऽऽ र ऽऽ,द
३	×	२	०
नि ध नि साँसाँनिनि -ध सां निसाँ			
राऽऽऽ ऽऽ तो ऽऽ	म्द ०		
३	×		

---*---

तराने के बोल

स्थायी—दरा तोंम दरा दरा धेते लेला नारे।
दीम दीम्तना नितनना तना देरे नाना देरेदेरे
नन नन नन द्रेद्रे तन द्रेद्रे तन द्रेद्रे द्रेद्रे द्रेद्रे
दानी दरा तोंम।

अन्तरा—बुलबुल बाजार्नालामी गोयद ताके दर्क
फषकबी बाग़ बाज़ार। दरा तोंम।

---*---

तराना राग बिलावल।

शब्दकार—
श्री० नरेन्द्रसहाय वर्मा
(बी०ए०फ़ाइनल)

तीन ताल मात्रा १६
जलद लय

स्वरलिपिकार—
प्रोफ़ेसर बेनीप्रसाद श्रीवास्तव
"भाई"

स्थायी—द्रीम त द्रीम तनन देरे ना तादारे दानी।
जोड़— ओदे नीत दानी द्रीम तादा आ तदारे दानी।
अन्तरा—ओदे नीत दानी द्रीम तदारे तदारे दानी,
तद्रीम तद्रीम तन तनन द्रीम तद्रीम,
तन देरे ना तदारे दानी तदानी द्रीम त,
ता दानी तदानी द्रीम तदा अतदारे दानी॥

(१) स्थायी

x				२				०				३			
सं	--	ध	प	म	ग	म	रे	ग	प	मग	मरे	ग	प	नि	नि
द्री	ऽम	त	द्री	ऽम	त	न	न	दे	रे	नाऽ	ताऽ	दा	रे	दा	नी

(२) जोड़

रे	स	ग	म	ग	रे	ग	प	म	ग	म	रे	ग	प	नि	नि
ओ	दे	नी	ता	दा	नी	द्री	ऽम	त	दा	ऽ	त	दा	रे	दा	नी

(३) अन्तरा

ग	प	नि	नि	सं	सं	सं	-	सं	गं	गं	मं	गं	रं	सं	सं
ओ	दे	नी	त	दा	नी	द्री	ऽम	ता	दा	रे	त	दा	रे	दा	नी

×				२				०				३			
गं	मं	गं	रें	सं	–	ध	प	म	ग	म	रे	ग	प	म	ग
त	द्री	ऽम	त	द्री	ऽम	त	न	त	न	न	द्री	ऽम	त	द्री	ऽम
म	रे	रे	स	ग	म	रे	स	ग	प	नि	नि	सं	ध	प	मग
त	न	दे	रे	ना	ता	दा	रे	दा	नी	त	दा	नी	द्री	ऽम	तऽ
मरे	ग	प	म	ग	रे	ग	प	म	ग	म	रे	ग	प	नि	नि
ताऽ	दा	नी	त	दा	नी	द्री	ऽम	त	दा	ऽ	त	दा	रे	दा	नी

(४) स्थायी दून की तरकीब से ।

सं–	धप	मग	मरे	गप	मगमरे	गप	निनि	सं–	मगमरे	गप	निनि	सं–	मगमरे	गप	निनि
द्रीऽम	तद्री	ऽतत	नन	देरे	नाऽता	दारे	दानी	द्रीऽम	नाऽताऽ	दारे	दानी	द्रीऽम	नाऽताऽ	दारे	दानी

(५) स्थायी और जोड़ दून की तरकीब से ।

सं	–	ध	प	सं–	धप	मग	मरे	गप	मगमर	गप	निनि	रेंस	गम	गरे	गप
द्री	ऽम	त	द्री	द्रीऽम	तद्री	ऽमत	नन	देरे	नाऽताऽ	दारे	दानी	ओदे	नीत	दानी	द्रीऽम
मग	मरे	रेंस	गम	गरे	गप	मग	मरे	रेंस	गम	गरे	गम	मग	मरे	गप	निनि
तदा	ऽत	ओदे	नीत	दानी	द्रीऽम	तदा	ऽत	ओदे	नीत	दानी	द्रीऽम	तदा	ऽत	दारे	दानी

(६) स्थायी, जोड़ और अन्तरा की दून तरकीब सहित ।

सं	–	सं–	धप	मग	मरे	गप	मगमरे	गप	निनि	रेंस	गम	गरे	गप	मग	मरे
द्री	–म	द्रीऽम	तद्री	ऽमत	नन	देरे	नाऽता	दारे	दानी	ओदे	नीता	दानी	द्रीऽम	तदा	ऽत

गध निनि गप निनि	संसं सं– संगं मंगं	गरें संसं गंमं गरें	सं– धप मग मर
दारे दानी ओदे नीत	दानी द्रीऽम तदा रेते	दारे दानी तद्री ऽमत	द्रीऽम तन तन तद्री
गप मग मरे रेस	गम रेस गप निनि	संध प-मप मरग- पम	गरे गप मग मरे
ऽमत द्रीऽम तन देरे	नाता दारे दानी तदा	तद्री ऽमतऽ ताऽदाऽ नीत	दानी द्री–म तदा –त
गप मग मरे गप	मग मरे गप निनि	सं – मग मरे	गप मग मरे गप
दारे तदा –त दारे	तदा ऽत दरि दानी	द्री ऽम तदा –त	दारे तदा ऽत दारे
मग मरे गप निनि	सं – मग मरे	गप मग मरे गप	मग मरे गप निनि
तदा ऽत दारे दानी	द्री ऽम तदा –त	दारे तदा ऽत दारे	तदा ऽत दारे दानी
सं – सं– धप	मग मरे गप मगमरे	गप निनि रेस गम	गरे गप मग मरे
द्री ऽम द्रीऽम तद्री	ऽमत नन देरे ताऽनाऽ	दारे दानी ओदे नीत	दानी द्रीऽम तदा –त
गप निनि सं– धसं	सं– मगमर गप निनि	रेस गम गरे गप	मग मरे गप निनि
दारे दानी द्रीऽम अत	द्रीऽम नाऽता दारे दानी	ओदे नीत दानी द्रीऽम	तदा ऽत दारे दानी
सं– धसं सं– मगमरे	गप निनि रस गम	गरे गप मग मरे	गप निनि सं– धसं
द्रीऽम अत द्रीऽम नाऽताऽ	दारे दानी ओदे नीत	दानी द्रीऽम तदा –त	दारे दानी द्री–म अत

---*---

तराना राग बिलावल

शब्दकार—
श्रीयुक्त नरेन्द्रसहाय वरमा
(बी० ए० फ़ाइनल)

ताल झपताल मात्रा १०
(मध्यलय)

स्वरकारः--
श्रीमती मृणालिनी
रामचौधरी।

स्थाई और जोड़ः-ता नोंम तदारे दानी, देरे नातादारे दानी।
अन्तरा--ता द्रीम तनन द्रीम, दारे तदारे दानी।
ओदे नीत दानी द्रीमत, दिरया नारे तानीत।
ओदे नीतदानी तदानी, तदानी तदारे दानी।
(सुविख्यात सङ्गीताचार्य प्रोफ़ेसर बेनीप्रसाद श्रीवास्तव 'भाई')
की बंदिश पद्धति के अनुसार)

(१) स्थायी-

×		२			०		३		
सं	-	ध	-	प	ग	म	र	-	स
ता	ऽ	नों	ऽम	त	दा	रे	दा	ऽ	नी

(२) जोड़

र	स	ग	म	र	ग	प	न	-	सं
दे	रे	ना	ऽ	त	दा	रे	दा	ऽ	नी
गं	मं	गं	रं	सं	न	सं	ध	न	प
ता	ऽ	द्री	ऽम	त	न	न	द्री	ऽम	त
मग	मर	ग	प	म	ग	म	र	-	स
ताऽ	ऽऽ	रे	ऽ	ता	दा	रे	दा	ऽ	नी

(३) अन्तरा

×		२			०		३		
प	प	न	–	न	सं	सं	सं	–	सं
ओ	दे	नीं	ऽ	त	दा	नी	द्री	ऽम	त
सं	गं	गं	मं	गं	रं	सं	न	सं	सं
दिर	या	ना	–	रे	ता	ऽ	नी	ऽ	त
ध	प	म	ग	म	र	ग	प	म	ग
ओ	दे	नों	ऽ	त	दा	नी	त	दा	नीं
म	र	स	–	प	ग	म	र	–	स
त	दा	नी	ऽ	त	दा	रे	दा	ऽ	नी

(४) स्थायी दून में तरक़ीब सहित।

सं	सं–	ध–	पग	मर	–स	मर	–स	मर	–स
ता	ताऽ	नों–म	तदा	रेदा	–नी	रेदा	–नी	रेदा	–नी

(५) स्थाई और जोड़ दून में तरक़ीब सहित।

सं–	ध–	पग	मर	–स	रस	गम	रग	पन	–सं
ताऽ	नों–म	तदा	रेदा	ऽनी	देरे	नाऽ	तदा	रेदा	ऽनी
गंमं	गंरं	संन	संध	निप	मगमर	गप	मग	मर	–स
ताऽ	द्री–म	तन	नद्री	ऽमत	दाऽऽऽ	रेऽ	तादा	रेदा	ऽनी

(६) अन्तरा दून में तरक़ीब सहित ।

×		२			०		३		
पप	न-	नसं	संसं	-सं	संगं	गंमं	गंरं	संन	संसं
ओदे	नीऽ	तदा	नीद्री	ऽमत	दिरया	ना-	रेता	ऽनी	ऽत
धप	मग	मर	गप	मग	मर	स-	पग	मर	-स
ओदे	नीऽ	तदा	नीत	दानी	तदा	नीऽ	तदा	रेदा	ऽनी

(७) स्थायी और अन्तरा दून में तरक़ीब सहित ।

सं	-	ध-	पग	मर	-स	पप	न-	नसं	संसं
ता	ऽ	नोंऽम	तदा	रेदा	ऽनी	ओदे	नीं-	तदा	नीदी
-सं	संगं	गंमं	गंरं	संन	संसं	धप	मग	मर	गप
ऽमत	दिरया	नाऽ	रता	ऽनी	ऽत	ओदे	नीऽ	तदा	नीत
गम	मर	स-	पग	मर	-स	सं	मग	मर	स-
दानी	तदा	नीऽ	तदा	रदा	ऽनी	ता	दानी	तदा	नी-
गप	मर	-स	सं	मग	मर	स-	मग	मर	-स
तदा	रेदा	ऽनी	ता	दानी	तदा	नी-	तदा	रेदा	-नी

—:(*):—
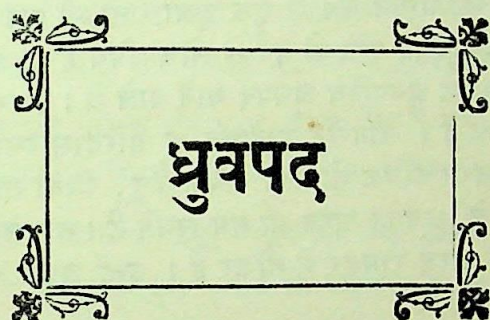
ध्रुवपद

ध्रुवपद

भावभट्ट पंडित ने अपने अनूप सङ्गीत रत्नाकर में ध्रुपद की व्याख्या इस प्रकार की है।

गीर्वाणमध्यदेशीयभाषा साहित्यराजितम्। द्विचतुर्वाक्यसंपन्नं नरनारी कथाश्रयम्। श्रृङ्गाररसभावाद्यं रागालापपदात्मकम्। पादातँनुप्रासयुक्तं पादांतयुगकं च वा। प्रतिपादं यत्र बद्धमेवं पादचतुष्टयम्। उद्ग्राहध्रुवकाभोगांतं ध्रुवपदं स्मृतम्।

आज कल संस्कृत ध्रुपद कहीं नहीं सुनाई देते। यदि कोई नए रचकर गाना चाहे तो अवश्य गा सकता है। उसमें कोई हर्ज नहीं है। प्रचार में अधिकतर ध्रुपद हिन्दी उर्दू तथा व्रज-भाषा में होते हैं। यद्यपि यह आज निश्चित् रूप से नहीं कह सकते कि ध्रुवपद का गायन कब से शुरू हुआ, तो भी इस बात के लिये ऐतिहासिक आधार है कि ध्रुवपद पांचसौ वर्ष से लोक प्रिय है। अकबर बादशाह के दरबार के सुप्रसिद्ध गायक ध्रुवपदिये ध्रुवपद गाने वाले थे। उन सबों में तानसेन एक अपूर्व गायक रत्न होगए हैं। तानसेन वृन्दावन के हरिदास स्वामी डागुर के शिष्य थे। हरिदास स्वामी तथा नायक गोपाल, नायक बैजू, मियां तानसेन, चिन्तामणि मिश्र इत्यादि गायकों के ध्रुवपद आज भी हम सुनते हैं। तानसेन के वंशज वज़ीरखां और मुहम्मद अली खां आज रामपुर में नौकर हैं। उन्हें अपने परम्परा के सैकड़ों ध्रुवपद याद हैं।

गत शताब्दी के आरम्भ तक ध्रुवपद गायन बहुत ही लोकप्रिय था। आज भी वह शुद्ध और आदर योग्य ही माना जाता है। परन्तु गत सौ डेढ़ सौ वर्ष में ख्यालों का गायन अधिक लोक प्रिय होरहा है, इस कारण ध्रुवपद गायन पीछे हट रहा है।

ध्रुवपद, ख्याल की अपेक्षा अधिक विस्तृत रहता है। उसके स्थाई, अन्तरा संचारी, और आभोग ऐसे चार भाग रहते हैं। कुछ ध्रुवपदों को स्थाई और अन्तरा ऐसे दो ही भाग रहते हैं। प्रचीन प्रसिद्ध ध्रुवपदों में चारों भाग रहते थे, और हर एक भाग में तीन-तीन चार-चार चरण रहते थे। 'सङ्गीत कल्पद्रुम' में हजारों प्राचीन ध्रुवपद देखते हैं, परन्तु स्वर ताल लिपि में न लिखे हुए होने से वे नष्ट हो बैठे हैं। जो घराने वाले गायक अभी जीवित हैं, उन्हें इस संग्रह में से अधिक गीत आते हैं, परन्तु वे गायक अशिक्षित होते हैं, इस लिये उनके गीतों में स्वर और शब्द बहुत भ्रष्ट हुए मिलते हैं। ध्रुवपद गान को हिन्दुस्तान का ज़ोरदार और मर्दानी गायन कहते हैं। उसमें वीर, श्रृङ्गार और शान्त यह रस प्रधान रहते हैं। उसकी भाषा भी उच्चप्रती की होती है। ध्रुवपद अधिकतर चौताल, सूलफाक, झंपा तीव्रा, ब्रह्म, रुद्र इत्यादि तालों में गाये जाते हैं। ध्रुवपद गायकों को कलावन्त की संज्ञा दी जाती है।

राग बिलावल

शब्दकार- पं० बद्रीप्रसाद शुक्ला से प्राप्त ।

ताल चौताल मात्रा १२
(विलंबित लय)

स्वरलिपिकारः- प्रोफेसर माधोप्रसाद श्री वास्तव ।

स्थायी--शङ्कर जै महादेव, छवि छाय रहे मनमें ।
सुमिरो बम भोलेको, सब पाप कटें पलमें ॥

अन्तरा-शीश जटा गंग धार, भस्म अङ्ग गौरि नारि ।
व्याल खाल गज अम्बर, शोभित है कुल तनमें ॥

संचारी-ललाट तिलक कंठ माल, डमरू त्रिसूल हाथ ।
नंघ बदन विष पियें, भूत प्रेत संगन में ॥

आभोग-दीनन के मित्र नाथ, भक्तन को भक्त जानि ।
विश्वनाथ त्रिपुरार, भजै तो मङ्गल क्षण में ॥

(प्रख्यात सङ्गीताचार्य श्रीयुक्त प्रोफेसर बैनीप्रसाद श्री वास्तव ('भाई') की बंदिश पद्धति के अनुसार)

(१) स्थायी-

×		०		२		०		३		४	
सं	-	ध	ध	न॒	प	म	ग	म	र	-	स
शं	ऽ	क़ु	र	जै	य	म	हा	ऽ	दे	ऽ	व
ग	म	र	-	स	ऩ	ध़	-	स	-	र	स
छ	बि	छा	ऽ	य	र	हे	ऽ	म	-	न	में
ग	म	ग	ॱर	ग	प	म	ग	ध	प	म	ग
सु	मि	रो	ऽ	ब	ऽम	भो	ऽ	ले	-	को	ऽ

म	र	ग	र	ग	प	म	ग	म	र	–	स
स	ब	पा	ऽ	प	क	टें	ऽ	प	ल	ऽ	में

(२) अन्तरा

प	–	प	सं	सं	–	सं	–	सं	सं	रं	गंरं
शी	ऽ	श	ज	टा	ऽ	गं	ऽ	ग	धा	ऽ	रऽ
सं	–	गं	मं	गं	रं	सं	न	सं	ध	न	प
भ	ऽस	म	अं	ऽ	ग	गौ	ऽ	र	ना	ऽ	रि
म	ग	म	र	ग	प	म	ग	म	र	र	स
ध्या	–	ल	खा	ऽ	ल	ग	ज	अं	–	ब	र
ग	प	न	न	सं	–	सं	सं	सं	सं	धन	प
शो	–	भि	त	है	ऽ	कु	ल	त	न	मेंऽ	ऽ

(३) संचारी

ग	प	न	ध	प	प	ध	न	ध	प	–	प
ल	ला	ट	ति	ल	क	कं	ऽ	ठ	मा	ऽ	ल
प	प	न	ध	सं	सं	सं	–	सं	ध	न	प
ड	म	रू	ऽ	ऽ	त्रि	शू	ऽ	ल	हा	ऽ	त

ध	ग	प	न	सं	सं	रं	सं	सं	धप	मग	मर
तं	ऽ	ध	ब	द	न	वि	ऽ	ष	पिऽ	ऽऽ	मेंऽ
स	र	स	ध	न	प	म	ग	म	र	र	स
भू	ऽ	त	प्रे	ऽ	त	सं	ऽ	ऽ	ग	न	में

(४) आभोग

प	–	ध	प	सं	–	रं	सं	सं	सं	–	सं
दी	ऽ	न	न	के	ऽ	मि	–	त्र	ना	ऽ	थ
सं	–	सं	सं	रं	सं	ध	–	ध	सं	–	सं
भ	ऽक	त	न	की	ऽ	भ	ऽक	ति	जा	ऽ	नि
सं	रं	सं	न	ध	प	सं	–	सं	ध	न	प
वि	ऽ	श्व	ना	ऽ	थ	त्रि	ऽ	पु	रा	ऽ	र
म	ग	म	र	स	र	स	ग	म	र	–	स
भ	जे	तो	मं	ऽ	ग	ऽ	ल	क्ष	ण	ऽ	में

---*---

राग अलैया बिलावल !

ध्रुपद (विलम्बित)

(ले०--श्री० मास्टर मोहनलाल जैपुर)

स्थायी-

×		०		२		०		३		४	
सां	-	सां	ध	न	प	ध	नी	ध	प	म	ग
क	र	ऽ	ऽ	जो	ऽ	ऽ	ऽ	क	र	ऽ	में
ग	ग	मरे	ग	ग	प	ग	म	ग	म	रे	सा
कै	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ला	ऽ	श	ऽ	लि	ऽ	ये
सा	-	नि	ध	-	ध	नी	प	-	नी	नी	सां
क	स	ऽ	कैं	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	अ	ब	ऽ	ऽ
सां	ऽ	रें	गं	सां	नीध	नी	प	-	प	नीध	नी
ना	ऽ	ऽ	क	सि	को	ऽ	ऽ	र	त	है	ऽ

अन्तरा

×		०		२		०		३		४	
प	प	-	ध	सां	सां	रें	सां	-	सां	-	सां
दे	ता	ऽ	ऽ	ऽ	ल	न	ऽ	बी	ऽ	स	ऽ
सां	सां	गं	मं	गं	पं	मं	गं	रें	सां	ध	प
भु	जा	ऽ	ऽ	ज	ऽ	ह	ऽ	रा	ऽ	य	ऽ

×		०		२		०		३		४	
ग	प	नी	ध	नी	प	नी	नी	प	ध	नि	सां
कु	के	ऽ	ऽ	ऽ	ध	ऽ	ऽ	नु	कुं	ऽ	ऽ
सां	रें	गं	नी	सां	नीध	नी	प	-	ध	ध	नी
झ	ऽ	ऽ	क	झो	र	त	ऽ	ऽ	है	ऽ	ऽ

संचरी

म	-	ग	प	-	प	ध	नी	ध	प	-	प
ति	ऽ	ऽ	ऽ	ल	प	ऽ	ऽ	क	हि	लै	ऽ
प	-	ध	नी	सां	-	सां	सां	सां	ध	नी	प
प	हि	ले	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	घ	र	ऽ	ती	ऽ
सां	सां	ध	ध	नी	प	सां	सां	-	सां	ध	प
रि	ऽ	ऽ	स	ऽ	ऽ	पी	स	ऽ	ऽ	के	ऽ
सां	रें	गं	नी	सां	नीध	नी	प	-	ध	ध	नी
दां	ऽ	त	न	ऽ	ऽ	मो	ऽ	र	व	है	ऽ

आभोग

प	प	-	प	सां	सां	रें	सां	-	सां	-	सां
श्र	व	ऽ	ऽ	य	ऽ	द	ठी	ऽ	कु	भ	यो

×		०		२		०		३		४	
सां	-	गं	गं	मं	रें	सां	-	रें	सां	ध	प
ह	ऽ	ऽ	ऽ	म	रे	म	द	का	ऽ	ऽ	ऽ
म	-	ध	ध	-	ध	ध	नी	प	ध	नी	सां
को	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	म	है	ऽ	ऽ	ऽ	श	ऽ
सां	सां	रें	गं	सां	नीध	नी	प	-	ध	नीध	प
न	ऽ	ऽ	ऽ	मो	ऽ	ऽ	र	त	ऽ	है	ऽ

—:(*)।—

राग बिलावल

ध्रुपद (बिलम्वित)

स्थायी—

×		०		२		०		३		४	
सा	-	-	सा	-	रे	रे	-	निसा	रे	सा	रे
शी	ऽ	श	मु	क	ट	ति	ल	क	भा	ऽ	ल
ग	म	ग	-	रे	सा	रे	सा	सा	-	रे	रे
का	न	न	कुं	ऽ	ड	ल	ऽ	वि	शा	ऽ	ल
रे	ग	रेग	म	ग	म	प	-	ग	म	ग	रे
कं	ऽ	ठ	में	ऽ	वै	ऽ	जं	ती	मा	ऽ	ल

×		०		२		०		३		४	
सा	सा	ध	प	सा	ध	सा	सा	-	सा	सा	रे
शो	ऽ	भि	ऽ	त	अ	ति	ऽ	प्या	ऽ	ऽ	री

अन्तरा-

×		०		२		०		३		४	
नी	ध	ध	सां	सां	ऽ	सां	नी	-	नी	नी	नी
शं	ऽ	ख	च	ऽ	क्र	ग	ऽ	दा	सं	ऽ	ग
नी	ध	नी	ध	प	म	ग	म	र	ग	पध	सां
र	मा	ऽ	ब	स	त	बा	ऽ	म	अं	ऽ	ग
रें	गं	रें	सां	नी	ध	प	-	सां	-	ध	प
सु	न्द	र	शु	भ	श्या	ऽ	ऽ	म	रं	ऽ	ग
म	ग	म	ग	रे	सा	सा	रेऩी	ऩी	सा	ऩि	ध़
ग	ऽ	रू	ऽ	ड़	की	ऽ	ऽ	स	वा	ऽ	री

---*---

अकबर की मृत्यु के बाद से सङ्गीत का पतन आरम्भ होगया था। यहांतक कि औरङ्गज़ेब ने तो प्रतिज्ञा की थी कि मैं सङ्गीत के ज़नाजे को इतना गहरा दफनाऊँगा कि कोई उखाड़ ही न सके। पतन इस दर्जे को पहुँच गया कि गाने के नाम से लोग चिड़ने लगे। कुछ इने-गिने अशिक्षित लोगों में ही इसकी परम्परा प्रायः बनी रही और वे इस विद्या का दुरुपयोग करके अपनी जीविका का स्वार्थ सिद्ध करके सङ्गीत की दुर्दशा करते रहे। वेश्वालयों और लोफ़र लोगों में ही इसका प्रचार होता रहा।

निदान सङ्गीत की इस मध्य काल में जो अवनति हुई वह असहनीय है, किंतु उस चराचर जगत के पिता परमात्मा की लीला अपार है। कौन जानता था कि इस विद्या का पुनरुद्धार होसकेगा। आखिरकार श्री० विष्णुदिगम्बर, श्री०भातखण्डे साहब आदि सङ्गीत सम्राट विभूतियों का भारत में ,जन्म हुआ। जिन्हों ने अपने अतुल परिश्रम से सङ्गीत को मृत्यु के मुंह से बचाया। स्वर्गीय श्री० भातखण्डे साहब ने तो अपने जीवन को बलिदान देकर सारे भारतवर्ष में भ्रमण करके इस विद्या की काफ़ी खोज की और प्राचीन घरानों की चीजों को शास्त्र सूत्रों में बांधकर लिपिबद्ध करके प्रकाशित कराया जो अब तक 'हिन्दुस्तानी सङ्गीत पद्धति क्रमिक' पुस्तक नाम से प्रसिद्ध है। यह पुस्तक पांच-छः भागों में प्रकाशित हुई है। जिनमें छः-सात सौ प्राचीन घरानों की चीजों का एक अच्छा संग्रह ।है और यही पुस्तकें सङ्गीत के स्कूलों और कालेजों में पढ़ाई जाती हैं। आपने स्वरलिपि का एक नवीन ढङ्ग निकाल कर सङ्गीत के प्रचार में काफी सहायता की है। शोक है उपरोक्त दोनों विभूतियां अब संसार में नहीं हैं, किन्तु इनकी कृतियां सदैव चिरस्मरणीय रहेंगी।

आज कल फिर से सङ्गीत का प्रचार बढ़रहा है। किन्तु शोक है कि इसकी प्रगति एक ऐसे अन्धकार की ओर जारही है कि जहां पथभ्रष्ट होना सम्भव है। तात्पर्य यह है कि शिक्षित घरानों में सङ्गीत की गुनगुनाहट अवश्य सुनाई देती है,

किन्तु यह गुनगुनाहट, गुनगुनाहट तक ही सीमित है। इस गुनगुनाहट से यह आशा कदापि नहीं की जा सकती कि स्वर्गीय तानसेन की तरह दीपक जलाने वाली व पानी बरसाने वाली शक्ति इसमें पैदा हो सकेगी। सङ्गीत के स्कूल व कालेजों की भरमार है किन्तु जिस समय विद्यार्थी अपने नाम के साथ लम्बा चौड़ा टाइटिल लेकर सङ्गीतशाला से बाहर निकलता है तब वह कितना सङ्गीतज्ञ बनजाता है। यह एक विचारणीय विषय है। खैर पाठक समझ ही गये होंगे। अब मैं प्रेमी पाठकों का ध्यान इस ओर आकर्षित करता हूं कि यह कमी विद्यार्थियों में क्यों रहजाती है।

संगीत के स्कूल और कालेज

सङ्गीत के स्कूल और कालेजों में एक-एक क्लास में चालीस-चालीस पचास-पचास विद्यार्थियों का होना सङ्गीत शिक्षा का पूर्ण बाधक है। भला एक अध्यापक सङ्गीत जैसे विषय के चालीस विद्यार्थियों को किस प्रकार शिक्षा देसकता है। मैंने अपनी आंखों देखा है कि बहुत से विद्यार्थियों का नम्बर भी नहीं आता जब तक अध्यापक का (Period) समाप्त होजाता है। मेरे विचार से एक अध्यापक की अध्यक्षता में उतने ही विद्यार्थी होने चाहियें जिनको वह आसानी से शिक्षण दे सके। यह मैं उन स्कूलों व कालेज़ों के लिये प्रर्थना कर रहा हूं, जो सरकार की अध्यक्षता में हैं। वरन, प्राइवेट स्कूल के अध्यापकों को तो अपनी जीविका के हेतु अधिक से अधिक विद्यार्थियों की आवश्यकता बनी ही रहती है। और खर्च कमी की वजह से प्रायः मास्टर भी अधिक बढ़ा नहीं सकते और विद्यार्थियों की तादाद भी एक मास्टर की अध्यक्षता में अधिक ही रखते हैं। परिणाम स्वरूप ऐसे सङ्गीतशालाओं से कदापि योग्य गायक बनकर कोई भी विद्यार्थी नाम नहीं कमा सक्ता।

विद्यार्थियों में आलस्य

आज कल के विद्यार्थी भी प्रायः आलसी होते हैं। वे अपना उचित अभ्यास करने में असमर्थ रहते हैं। उन्हें स्मरण रखना चाहिये कि बैजूबावरे ने अपने पिता के अनादर का बदला केवल थोड़े ही समय में अतुल परिश्रम करके तानसेन से लेलिया था। हारमोनियम के साथ अभ्यास करने से भी बड़ी हानि होती है।

हारमोनियम से हानि

हारमोनियम से एक बहुत बड़ा लाभ यह अवश्य हुआ है कि सङ्गीत की स्वरलहरी प्रायः सभी शिक्षित घरानों में गूंज उठी है। किन्तु यह स्वरलहरी केवल उनके मनोविनोद तक ही सीमित है। इसका मुख्य कारण है कि हारमोनियम के स्वर बजते २ बेसुरे होजाते हैं और जब तक उनकी Tuning किसी हारमो-

नियम मेकर के पास लेजा कर ठीक न कराई जाय तब तक बेसुरे स्वर पर ही शिक्षार्थी गाते रहते हैं जिससे उनका गला भी बेसुरा होजाता है और यह बेसुरापन जीवन भर नहीं सुधरता, इसलिये विद्यार्थी को चाहिये कि स्वरज्ञान हमेशा तारवाद्य, तानपूरा आदि के सहारे ही करना चाहिये।

इस हारमोनियम के युग में गवैयों की तादाद बेशक बहुत बढ़गई है, किन्तु यह सब न होने के बराबर ही है। हां जिनको यह साधन उपलब्ध न होसके, वह अपने मनो विनोद के लिये चाहे जो वाद्य उपयोग कर सकते हैं। क्योंकि सङ्गीत का मनोविनोद से घनिष्ठ सम्बन्ध है। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि हारमोनियम का बिलकुल बहिष्कार ही कर दिया जाय।

अब मैं कुछ इस "विलावल अङ्क" के बारे में जो आपके कर-कमलों में प्रस्तुत है, थोड़ा बहुत कहकर अपने लेख को समाप्त करूंगा।

हां! तो यह विचार साल के शुरू में ही होगया था कि अबकी बार सङ्गीत-कला का विशेषांक "विलावल अङ्क" निकाला जाय। यह प्रस्ताव हमारी कमेटी ने पास करदिया और इसकी घोषणा भी करदी गई। और यत्र तत्र मान्य लेखकों के पास 'विलावल अङ्क' की विषयसूची बना कर उनसे लेख मांगने की प्रार्थना की गई। प्रेमी लेखकों ने लेख व स्वरलिपि भेजने की कृपा भी की है। जिनमें श्री विनायक राव पटवर्धन व्यास, श्री० वैनीप्रसाद श्रीवास्तव 'भाई', तथा उनके शिष्य, प्रो० लल्लूलाल गन्धर्व, मास्टर मोहनलाल कत्थक जैपुर, तथा स्थानीय श्री० राजाभैया पूछवाले व प्रो० गुणे साहब, केलकर साहब आदि का परिश्रम सराहनीय है।

इस अङ्क में प्रधान विषय 'विलावल' राग का दिग्दर्शन कराना है। किन्तु पाठक गणों की रुचि को बढ़ाने के लिये इसमें नृत्य, वाद्य, आदि सभी विषय दिये हुए हैं।

इस अङ्क का सम्पादन १-श्री० राजाभैया पूछवाले, २-श्री० पं० बालाभाऊ जी उमड़ेकर (ग्वालियर दरबार गायक) ३-प्रो० ऐन०ऐल० गुणे, ४-प्रो० रामचन्द्र राव अग्निहोत्री, ५-प्रो० सदाशिवराव अग्निहोत्रीजी ने किया है और नृत्य सम्बन्धी लेखों का निरीक्षण श्रीयुत मास्टर मोहनलाल जी कत्थक जैपुर ने श्री० मास्टर चुन्नीलाल जी कत्थक की अनुपस्थिति में किया है। जिन लेखकों के लेख इस अङ्क के लिये भेजे हुए नहीं छपे हैं, वे समझलें कि सम्पादक मण्डल ने पास नहीं किए हैं। यदि वे अपना लेख वापिस मँगाना चाहें तो डाक व्यय भेज कर मंगा सकते हैं। हां! कष्ट के लिये अवश्य क्षमा करें। अन्त में मेरी पाठकों से यही प्रार्थना है कि इस अङ्क को आदि से अन्त तक पढ़कर अपनी सम्मति भेजने का कष्ट अवश्य करें। मैं उनका अत्यन्त आभारी हूंगा।

विनीत-नन्दलाल शर्मा,

परिशिष्टांक
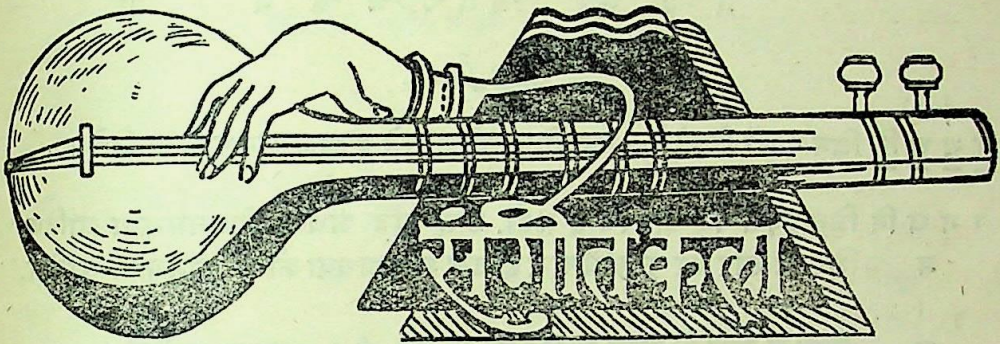
नाहं तिष्ठामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

फरवरी सन् १९४१ | सम्पादक-नन्दलाल शर्मा | वर्ष ३ संख्या २

यूं अगर आप मोहन मुकर जांयगे।
तो भला हमसे पापी किधर जांयगे ॥

अब तरेंगे नहीं तो सच जानिये।
आपका नाम बदनाम कर जांयगे ॥

चाहते कुछ रिश्वत, तो सच जानिये।
हां गुनाहों से भण्डार भर जांयगे ॥

थी जो नफरत तो घर में बिठाया ही क्यों।
जाय सर, गैर के अब न घर जांयगे ॥

है यक़ीं 'बिन्दु' गर चश्मेतर से बहे।
तो तुम्हें कर के तर खुद भी तरजांयगे ॥

श्री० 'बिन्दु' जी शर्मा
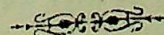
चिन्ह परिचय ।

रे ग ध नि जिन स्वरों के नीचे—यह चिन्ह हो उनको कोमल समझना चाहिये ।

रे ग ध नि जिन स्वरों पर कोई चिन्ह न हो, उन्हें शुद्ध अथवा तीव्र समझना चाहिए,

म जिस म स्वर पर कुछ चिन्ह न हो उसे शुद्ध अथवा कोमल समझना चाहिए,

म। जिस म स्वर के ऊपर ऐसी । रेखा हो उसे तीव्र समझना चाहिये ।

नि़ ध़ प़ जिन स्वरों के नीचे बिन्दु हो उन्हें मन्द्रस्थान के स्वर समझना चाहिये ।

सां रें गं जिन स्वरों के सिर पर बिन्दु हो उन्हें तारस्थान के स्वर समझना चाहिये,

गम ऐसे चिन्ह में लिखे हुए स्वरों को एक मात्रा के काल में बजाना चाहिये ।

रे–ग जिस स्वर के आगे–यह चिन्ह हो उसको एक मात्र दीर्घ करना चाहिये । अथवा उतनी विश्रान्ति समझनी चाहिये ।

राऽम गीत के शब्दों में जहां ऽ यह अकार चिन्ह हो वहां पिछले अक्षर का अन्तिम स्वर एक मात्रा दीर्घ करना चाहिये । जैसे रा आ म ।

(प) जिस स्वर को कँस में लिखा हो वहाँ पर आगे का अक्षर, वह स्वर, पिछला स्वर और फिर वही स्वर इन चारों स्वरों को एकमात्र में बजाना चाहिये जैसे:-(प) = ध प म प, (ध) = नि ध प ध, (नि) = सां नि ध नि इसी प्रकार अन्य भी समझना चाहिए ।

म
ग किसी स्वर के सिर पर बांई ओर छोटे टाइप में स्वर दिया हो उसको "Grace Note" (आलङ्कारिरिक स्वर कहते हैं । नूतन विद्यार्थी यदि इस स्वर को प्रथमतः बाजे में से न निकाल सके तो कोई राग हानि न होगी, परन्तु इसके बजाने से राग की रंजकता अवश्य बढ़ती है ।

× यह चिन्ह ताल का 'सम' दिखाता है, समको पहली ताली मान कर आगे के २-३ अङ्कों को दूसरी, तीसरी ताली समझना चाहिये ।

० यह चिन्ह ताल का खाली स्थान बतलाता है ।

सां प यह चिन्ह दिखाता है कि मीड़ किस स्वर से किस स्वर तक है । मीड़ का अर्थ यह है कि आवाज़ को बिना तोड़े हुए मिठास के साथ घुमाव देकर एक स्वर से दूसरे स्वर तक पहुँचाना ।

—:(*):—

राग अलैया बिलावल

(स्वरकार-श्री० ऐस० ऐ० महाड़कर, लखनऊ)

गीत एक ताल

स्थायी

ध	नि	सांरें	सांसां	ध	नि	ध	प	ध	ग	प	-
ल	खि	छ	वि	सु	ऽ	द	र	रा	ऽ	घा	ऽ
×		०		२		०		३		४	
ध	नि	सां	-	सांरें	सांनि	धप	मग	म	रे	सा	सा
व	र	की	ऽ	हिऽ	यऽ	मेंऽ	ऽऽ	ब	स	ग	इ
×		०		२		०		३		४	
गं	रें	सां	-	ग	प	ध	नि	सांरें	सांनि	धप	मग
अ	ति	ही	ऽ	अ	नु	प	म	प्याऽ	ऽऽ	रीऽ	ऽऽ
×		०		२		०		३		४	

अन्तरा

प	-	प	ध	नि	सां	सां	सां	-	सां	रें	सां
शं	ऽ	ख	च	ऽ	क	ग	दा	ऽ	प	ऽ	दम
×		०		२		०		३		४	
ध	ध	सां	-	सां	-	(सां)	ऽ	सां	ध	नि	प
ग	ल	सो	ऽ	है	ऽ	मु	ऽ	क्त	मा	ऽ	ल
×		०		२		०		३		४	
सां	गं	गं	गं	गंमं	पं	मं	गं	मं	रें	सां	सां
मु	कु	ट	छ	वि	ऽ	झ	ल	क	त	अ	ति
×		०		२		०		३		४	
गं	रें	सां	-	ग	प	ध	नि	सांरें	सांनि	धप	मग
पी	ऽ	तां	ऽ	ब	र	धा	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	रीऽ	ऽऽ
×		०		२		०		३			

राग अलैया बिलावल !

शब्दकार—	ताल	स्वरकार--
"सूरदास"	तीन	श्री० गोपाल कृष्ण

—गीत—

स्थायी--ऊधो, मन नहिं हाथ हमारे ।

अन्तरा--रथ चढ़ाय हरि संग गए लै मथुरा जबै सिधारे ।

नातरू कहा जोग हम छांड़हिं अति रुचिके तुम लाए ।

हमतो झँखति श्याम की करनी, मनलै जोग पठाए ।

अजहूं मन अपनो हम पावैं तुमरो होय तो होय ।

'सूर' सपथ हमैं कोरि तिहारी कहो करेंगी सोय ॥

स्थायी

३				×				२				०			
ग	प	नि	(सं)नि	सां	-	सां	सां	ध	नि̲	ध	प	मग	म	रे	सा
म	न	न	हिं	हा	ऽ	थ	ह	मा	ऽ	ऽ	रे	ऊऽ	ऽ	धो	ऽ

अन्तरा

प	प	प	प	नि	नि	सां	सां	सां	गं	गं	मं	गं	रें	सां	-
र	थ	च	ढ़ा	ऽ	य	ह	रि	सं	ऽ	ग	ग	ये	ऽ	लै	ऽ
नि	नि	नि	नि	सां	सां	सां	सां	ध	नि̲	ध	प	मग	म	रे	सा
म	थु	रा	ऽ	ज	ब	हि	सि	धा	ऽ	रे	ऽ	ऊऽ	ऽ	धो	ऽ

शेष अन्तरा इसी भांति गाये जावेंगे ।

—:(*):—

राग बिलावल

यह गीत
प्रोफ़ेसर टी० पी० बनर्जी
से प्राप्त

एकताल मात्रा १२
(विलम्बित)

स्वरलिपिकार—
प्रोफ़ेसर बैनीप्रसाद श्रीवास्तव
'भाई'

स्थायी—नाद ही स्वर ब्रह्म ज्ञान।

जोड़— जीवन निश दिन को।

अन्तरा—पार नहीं पावत कोई, सकल ब्रह्म की मधु ध्वनी,

गुनि जन सब गुन बखाने, लय स्वर में सबको।

(१) स्थायी

x		०		२		०		३		४	
सं	-	ध	प	म	ग	म	र	म	ग	र	स
ना	ऽ	द	ही	स्व	र	ब्र	ऽ	ह्म	ज्ञा	ऽ	न

(२) जोड़

र	स	ग	म	ग	र	प	प	गप	धप	मग	मर
जी	ऽ	व	न	नि	श	दि	न	कीऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(३) अन्तरा

ग	-	प	सं	सं	-	सं	-	सं	सं	सं	सं
पा	ऽ	र	न	हीं	ऽ	पा	ऽ	व	त	को	ई
सं	गं	गं	मं	गं	रं	सं	न	सं	सं	ध	प
स	क	ल	ब्र	ऽ	ह्म	की	ऽ	म	धु	ध्व	नि

×		०		२		०		३		४	
म	ग	म	र	ग	प	म	ग	म	र	–	स
गु	नि	ज	न	स	ब	गु	न	ब	खा	ऽ	ने
र	स	ग	म	ग	र	ग	प	गप	धप	मग	मर
ल	थ	सु	र	मैं	ऽ	स	ब	कोऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(४) तान और अलाप

सं	–	ध	प	म	ग	सर	गम	गर	गप	मग	मर
ना	ऽ	द	ही	स्व	र	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सं	–	ध	प	म	ग	संरं	गंरं	संन	धप	मग	मर
ना	ऽ	द	ही	स्व	र	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सं	–	ध	प	धन	संरं	गंमं	गंरं	संन	धप	मग	मर
ना	ऽ	द	ही	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सं	–	ध	प	म	ग	स	–	–	–	ग	–
ना	ऽ	द	ही	स्व	र	आ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
–	–	र	–	–	–	स	–	स	–	र	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
स	–	–	–	न	–	म	ग	–	प	–	म
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	–	–	–	–	–	–	–	–

×		०		२		०		३		४	
ग	–	म	र	–	स	–	ऩ	ध़	–	प़	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
ध़	–	स	–	ग	–	म	र	गप	धप	मग	मर
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	कोऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(५) जोड़ की तानें

र	स	ग	म	ग	र	संरं	संन	नध	धप	मग	मर
जी	ऽ	व	न	नि	श	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
र	स	ग	म	ग	र	गप	धन	संन	धप	मग	मर
जी	ऽ	व	न	नि	श	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
र	स	सर	स	गम-ग	-प-म	ग-मर	-स	सं	धप	मग	मर
जी	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(६) अन्तरा की तान आलाप

ग	–	प	सं	सं	सं	सं	–	–	–	–	–
पा	ऽ	र	न	हीं	ऽ	पा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
सं	–	रं	–	सं	–	–	–	गं	–	मं	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
रं	–	सं	–	–	–	न	–	ध	–	–	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

×		०		२		०		३		४	
प	ध	मग	-पं	-गं	-मं	रं	सं	संरं	गंमं	पंगं	मंरं
ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
रंसं	-न	ध	प	पम	गर	गप	धन	संन	धप	मग	मर
ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
सं	गं	संगं	गंमं	गंरं	संन	सं	न	सं	सं	सं	धप
ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ
म	ग	म	र	ग	प	म	ग	म	र	-	स
गु	नि	ज	न	स	व	गु	न	व	खा	ऽ	ने
र	स	ग	म	रस	गम	गर	गप	-प	मग	मग	मर
ल	थ	सु	र	मेंऽ	ऽऽ	सऽ	बऽ	ऽकी	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(७) लपेट दार तानें छूट सहित ।

सं	-	ध	प	म	ग	सर	गम	गर	गम	पम	गर
ना	ऽ	द	ही	स्व	र	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
गप	धन	संन	धप	-म	ग	मर	-स	सग	-र	स	ऩध़
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ
ऩध़	-प़	-ध़	स-	ग	गम	गर	गप	धन	संन	धप	मग
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	-	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

×		०		२		०		३		४	
मर	सं	धप	मग	मर	मग	रस	-सं	सं	-	सग	-र
ऽऽ	ना	दही	स्वर	व्रऽ	ह्मज्ञा	ऽन	ऽऽ	ना	ऽ	ऽऽ	ऽऽ
स	ऩध़	ऩध़	-प़	-ध़	स-	ग-	गम	गर	गप	धन	संन
ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
धप	मग	मर	सं-	धप	मग	मर	मग	रस	-सं	सं-	-
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	नाऽ	दही	स्वर	व्रऽ	ह्मज्ञा	ऽन	ऽऽ	नाऽ	ऽ
सग	-र	स	ऩध़	ऩध़	-प़	-ध़	स-	ग	गम	गर	गप
ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	-	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
धन	संन	धप	मग	मर	सं-	धप	मग	मर	मग	रस	-सं
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	नाऽ	दही	स्वर	व्र-	ह्मज्ञा	ऽन	ऽऽ

(८) स्थायी और जोड़ दून की तरक़ीब से ।

सं	धप	मग	मर	मग	रस	रस	गम	गर	गप	गपधप	मगमर
ना	दही	स्वर	व्रऽ	ह्मज्ञा	ऽन	जीऽ	वन	निश	दिन	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ

(९) स्थायी और जोड़ दून में दूसरी तरक़ीब से ।

सं	-	ध	प	सं	धप	मग	मर	मग	रस	रस	गम
ना	ऽ	द	ही	ना	दही	स्वर	व्रऽ	ह्मज्ञा	ऽन	जीऽ	वन

×		०		२		०		३		४	
गर	गप	गपधप	मगमर	सं	गप	गपधप	मगमर	सं	गप	गपधप	मगमर
निश	दिन	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ना	दिन	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ना	दिन	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ

(१०) अन्तरा दून की तरक़ीब से ।

ग	पसं	सं	सं	संसं	संसं	संगं	गंमं	गंरं	संन	संसं	धप
पा	रन	हीं	पा	वत	कोई	सक	लब्र	ऽम्ह	कीऽ	मधु	ध्वनी
मग	मर	गप	मग	मर	-स	रस	गम	गर	गप	गपधप	मगमर
गुनि	जन	सब	गुन	बखा	ऽने	लय	सुर	मेंऽ	सब	कोऽऽऽऽऽऽऽ	

(११) अन्तरा दून में दूसरी तरक़ीब से ।

ग	-	प	सं	सं	-	ग	पसं	सं	सं	संसं	संसं
पा	ऽ	र	न	हीं	ऽ	पा	रन	हीं	पा	वत	कोई
संसं	गंमं	गंरं	संन	संसं	धप	मग	मर	गप	मग	मर	-स
सक	लब्र	ऽम्ह	कीऽ	मधु	ध्वनी	गुनि	जन	सब	गुन	बखा	-ने
रस	गम	गरे	गप	गपधप	मगमर	सं	मर	-स	रस	गम	गर
लय	सुर	मेंऽ	सब	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ना	बखा	ऽने	लय	सुर	मेंऽ
गप	गपधप	मगमर	सं	मर	-स	रस	गम	गर	गप	गपधप	मगमर
सब	कोऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ना	बखा	ऽने	लय	सुर	मेंऽ	सब	कोऽऽऽऽऽऽऽ	

—।(*)ः—

राग बिलावल

शब्दकारः--
पंडित बद्रीप्रसाद शुक्ला
से प्राप्त ।

ताल तीन मात्रा १६
(मध्यलय)

स्वरकारः--
श्रीयुक्त नरेन्द्रसायह बरमा
(बी० ऐ० फाइनिल)

गीत

स्थाईः--जावो श्याम वांही, कुबरी के ।

अन्तराः-रात गये सो भोरही आये अब क्या कहो मोहे दुबरी सों ॥

(सुविख्यात संगीताचार्य प्रोफेसर बैनीप्रसाद श्रीवास्तव (भाई) की वंदिश पद्धति के आधार पर)

(१) स्थायी

३				×				२				०			
ग	प	न	–	न	सं	–	ध	प	ध	प	म	ग	म	र	–
जा	वो	श्या	ऽ	म	वां	ऽ	हीं	ऽ	कु	ऽ	ब	ऽ	री	के	–

(२) अन्तरा

प	न	न	सं	–	सं	–	सं	गं	गं	मं	गं	रं	सं	–	सं
रा	त	ग	ये	ऽ	सो	ऽ	भो	र	ही	ऽ	आ	ऽ	ये	ऽ	अ
गं	सं	–	ध	प	ध	नी	सं	न	ध	प	म	ग	म	र	–
ब	क्या	ऽ	क	हो	मो	ऽ	हे	ऽ	दु	ब	री	ऽ	सों	ऽ	ऽ

(३) तानें स्थायी में ।

ग	प	न	–	न	गर	गप	धसं	रंगं	रंसं	नध	पम	गर	म	र	–
जा	वो	श्या	ऽ	म	वांऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री	के	–

ग	प	न	–	न	पप	धन	संरं	गंरं	संन	धप	मग	मर	म	र	–
जा	वो	श्या	ऽ	म	वांऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री	के	–
ग	प	न	–	न	गम	गर	गप	धन	संन	धप	मग	मर	म	र	–
जा	वो	श्या	ऽ	म	वांऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	री	के	ऽ
ग	प	न	–	न	पम	गर	गप	धन	संरं	गंरं	गंमं	रंसं	नध	पम	धन
जा	वो	श्या	ऽ	म	वांऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
संरं	गंगं	पंमं	गंरं	संन	धप	–सं	–रं	संन	धप	मग	रस	ग	म	र	–
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	री	के	ऽ

(४) बोल आलाप ।

ग	प	न	–	न	सं	–	–	–	–	–	–	न	–	ध	–
जा	वो	श्या	ऽ	म	वां	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
–	–	प	–	–	–	ध	–	–	–	प	–	–	–	ध	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
–	–	म	–	ग	–	–	–	म	–	र	–	ग	म	ध	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
प	–	ध	–	म	ग	–	म	र	–	ग	म	प	–	र	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	के	ऽ

(५) तानें अन्तरे में

प	न	न	सं	–	धन	संरं	गंमं	गंरं	सनं	धप	मग	रग	पम	गर	सर
रा	त	ग	ये	ऽ	सोऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(६) अन्तरा में तान आलाप और छूट सहित

प	न	न	सं	–	पंमं	गंरं	संन	धप	धन	संरं	गंमं	गंरं	संन	धप	मग
रा	त	ग	ये	ऽ	सोऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ
मर	न	न	सं	–	–	–	–	सं	–	रं	–	गं	–	मं	–
ऽऽ	त	ग	ये	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
रं	–	सं	–	–	सं	न	ध	–	प	ध	प	मग	–म	र	गम
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ
ध	प	ध	मग	–म	र	गम	प	मग	–म	र	स	ग	म	र	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ	सों	ऽ	ऽ

(७) स्थायी दून में, तरकीब सहित।

ग	प	न	–	न	सं	धप	धप	मग	मर	–ग	पन	–न	सं	–ग	पन
जा	वो	श्या	–	म	वां	हीऽ	कुंऽ	बऽ	रीके	ऽजा	वोश्या	ऽम	वां	ऽजा	वोश्या
–न	सं	–ग	पन	–न	सं	–	ध	प	ध	प	म	ग	ग	र	–
ऽम	वां	ऽजा	वोश्या	ऽम	वां	ऽ	ही	ऽ	कु	ऽ	ब	ऽ	री	के	ऽ

(८) स्थायी और अन्तरा दून में तरकीब सहित

ग	प	न	–	न	सं	धप	धप	मग	मर	–प	नन	सं	सं	संगं	गंमं
जा	वो	श्या	ऽ	म	वां	हीऽ	कुऽ	बऽ	रीके	ऽरा	तग	ये	सो	भोर	हीऽ

गरं सं सगं सं	धप धन संन धप	मग मर ऽग पन	-न मर -ग पन
आऽ ये अब कया	कहो मोऽ हेऽ दुब	रीऽ सोंऽ ऽजा वोश्या	ऽम सोंऽ ऽजा वोश्या
-न मर -ग पन	-न सं - ध	प ध प म	ग म र -
ऽम सोंऽ ऽजा वोश्या	ऽम वां ऽ ही	ऽ कु ऽ ब	ऽ री के ऽ

(९) स्थायी और अन्तरा का दून दूसरी तरकीब से ।

गप न नसं -ध	पध पम गम र	पन नसं -सं -सं	गंगं मंगं रंसं -सं
जावो श्या मवां ऽहीं	ऽकु ऽब ऽरी के	रात गये ऽसो ऽभो	रही ऽआ ऽये ऽअ
गंपं -ध पध नसं	नध पम गम र-	गप न नसं -ग	मर -ग पन -न
बक्या ऽकि होमो ऽहे	ऽदु बरी ऽसों ऽऽ	जावो श्या मवां ऽऽ	सोंऽ ऽजा वोश्या ऽम
-ग मर -ग पन	-न सं - ध	प ध प म	ग म र -
ऽऽ सोंऽ जा वोश्या	ऽम वां ऽ हीं	ऽ कु ऽ ब	ऽ री के ऽ

(१०) स्थायी की तरकीब तान सहित ।

ग प न -	न सं - ध	प ध प म	गंमं गंरं संन धप
जा वो श्या ऽ	म वां ऽ हीं	ऽ कु ऽ ब	आऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ
धन संरं गंरं संन	धप मग मर सं	धप धप मग मर	धप मग मर धप
ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ	ऽऽ ऽऽ ऽऽ वां	हींऽ कुऽ बऽ रीके	कुऽ बऽ रीके कुंऽ
मग मर -ग पन	-न सं - ध	प ध प म	ग म र -
बऽ रीके ऽजा वोश्या	ऽम वां ऽ ही	- कु ऽ ब	- री के ऽ

राग बिलावल

शब्दकार
श्रीमती मृणालिनी
राम चौधरी

तीन ताल मात्रा १६
(विलम्बित)

स्वरकार—
प्रो०जीतेन्द्रनारायण राम चौधरी
(बी०ए०,बी० म्यूज़)

स्थायी—हे री माई आज न खेलन जाऊँ ।
अन्तरा—उत की डगर न जात सखिन कोई ।
इत चरनन में जीया को लगाऊँ ॥

(प्रोफ़ेसर बैनीप्रशाद श्रीवास्तव 'भाई' की बन्दिश पद्धति के अनुसार)

(१) स्थायी

०				१				×				२			
सं	–	ध	प	ग	म	प	म	ग	–	–	म	रे	–	स	–
हे	ऽ	री	ऽ	मा	ऽ	ई	ऽ	आ	ऽ	ऽ	ज	न	ऽ	खे	ऽ
स	–	–	ग	म	र	ग	प	गप	धन	संरं	गंरं	संन	धप	मग	मर
ल	ऽ	ऽ	न	जा	ऽ	ऽ	ऽ	ऊँऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

(२) अन्तरा

प	प	सं	–	सं	सं	सं	सं	लं	रं	गं	रं	सं	न	ध	प
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जा	ऽ	त	स	खि	न	को	ई
ग	मर	ग	म	प	मग	म	र	गप	धन	संरं	गंरं	संन	धप	मग	मर
इ	तऽ	च	र	न	नऽ	में	ऽ	जीऽ	याऽ	कोऽ	लऽ	गाऽ	ऽऽ	ऊँऽ	ऽऽ

(३) तानें स्थायी में

सं - ध प | ग म प म | प- धन संरं गंरं | संन धप मग मर
है ऽ री ऽ | मा ऽ ई ऽ | आऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ

स - - ग | ग म प म | गप धन संरं गंरं | संन धप मग मर
ल ऽ ऽ न | मा - ई - | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ

सं - ध प | ग म प म | गंगं रंगं गंरं गंगं | रंसं नध पप धन
है - री ऽ | मा ऽ ई ऽ | आऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ

संन धप -सं -रं | संन धप धन संरं | गंमं पंमं गंरं सं- | -रं संन धप मग
ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ

मर गप ध प | ग म प म | ग - - म | र - स -
हेऽ ऽऽ री ऽ | मा ऽ ई ऽ | आ ऽ ऽ ज | न ऽ खे ऽ

स - - ग | गर गप मग मर | गप धन संरं गंरं | संन धप मग मर
ल - - न | जाऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऊंऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ | ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ

(४) अलाप तान स्थायी में

सं - ध प | ग म प म | ग - - - | र - - -
है ऽ री ऽ | मा ऽ ई ऽ | आ ऽ ऽ ऽ | ऽ ऽ ऽ ऽ

स - - - | ऩ - ध़ - | - - ऩ - | ध़ - - -
ऽ ऽ ऽ ऽ | ऽ ऽ ऽ ऽ | ऽ ऽ ऽ ऽ | ऽ ऽ ऽ ऽ

प़	–	–	–	ध़	–	–	–	स	–	–	–	ग	–	–	–
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

मग	–म	र	गप	धन	सं	संरंगंमं	पंमंगंरं	संनिधप	मगमर	गपधन	संरंगंरं
ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ

संन	धप	संनधप	मगमर
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ

(५) तानें अन्तरे में

प	प	सं	–	सं	सं	सं	सं	गंरं	संन	धन	संरं	संन	धप	मग	मर
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प	प	सं	–	सं	सं	सं	सं	सर	गम	गर	गप	गप	धन	सं–	––
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प	प	सं	–	सं	सं	सं	सं	प–	धन	धप	धन	संन	धप	मग	मर
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प	प	सं	–	सं	सं	सं	सं	मंगं	गंरं	संरं	गंरं	संन	धप	मग	मर
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

प	प	सं	–	सं	सं	सं	सं	रंसं	गंरं	संन	धप	मग	रस	पंमं	गंरं
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जाऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ

गंमं	गंरं	संरं	गंरं	संन	धप	मग	रस	धप	मग	रग	प-	संन	धप	मग	मर
ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	गाऽ	ऽऽ	ऊँऽ	ऽऽ
ग	मर	प	संन	धप	मग	मर	ग	मर	मग	रग	प-	संन	धप	मग	मर
इ	तऽ	ऽ	गाऽ	ऽऽ	ऊँऽ	ऽऽ	इ	तऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	गाऽ	ऽऽ	ऊँऽ	ऽऽ
ग	मर	ग	ग	प	मग	म	र	गप	धन	संरं	गंरं	संन	धप	मग	मर
इ	तऽ	च	र	न	नऽ	में	ऽ	जऽ	याऽ	कोऽ	लऽ	गाऽ	ऽऽ	ऊँऽ	ऽऽ

(६) अन्तरा में आलाप

प	प	सं	-	सं	सं	सं	सं	सं	-	-	-	गं	-	मं	-
उ	त	की	ऽ	ड	ग	र	न	जा	ऽ	ऽ	ऽ	-	-	-	-
रं	-	सं	-	-	-	सं	-	रं	-	गं	-	मं	-	रं	-
-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
सं	-	-	-	न	-	ध	-	-	-	प	-	-	-	ध	-
-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
म	ग	-	पं	-	गं	-	मं	रं	सं	-	-	-	धप	गग	मर
-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	--	--	--

(७) स्थायी दून–तरकीब सहित

०				१				×				२			
सं	-	सं	धप	गम	पम	ग	-म	र	स	स	-ग	मर	गप	गपधन	संरंगरं
हे	ऽ	हे	रीऽ	माऽ	ईऽ	आ	ऽज	न	खे	ल	ऽन	जाऽ	ऽऽ	ऊंऽऽऽ	ऽऽऽऽ

०				१			
संनधप	मगमर	सं	धप	-ग	मर	गप	गपधन
ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	हे	रीऽ	ऽन	जाऽ	ऽऽ	ऊंऽऽऽ

×				२			
संरंगरं	संनधप	मगमर	सं	धप	-ग	मर	गप
ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	हे	रीऽ	ऽन	जाऽ	ऽऽ

०				१			
गपधन	संरंगरं	संनधप	मगमर	सं	धप	गम	पम
ऊँऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	हे	रीऽ	माऽ	ईऽ

×				२			
ग	-	-	म	र	-	स	-
आ	ऽ	ऽ	ज	न	ऽ	खे	ऽ

०				१			
स	-	-	ग	म	र	मर	गम
ल	ऽ	ऽ	न	जा	ऽ	जाऽ	ऽऽ

×				२			
गप	धन	संरं	गरं	गपधन	संरंगरं	संनधप	मगमर
ऊंऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	जाऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऊंऽऽऽ	ऽऽऽऽ

(८) स्थायी और अन्तरा दून में, तरकीब सहित

०				१				×				२			
सं	-	ध	प	ग	म	प	म	ग	-	ग	-म	र	स	स	-ग
हे	ऽ	री	ऽ	मा	ऽ	ई	ऽ	आ	ऽ	ऽआ	ऽज	न	खे	ल	ऽन

०				१			
मर	गप	गपधन	संरंगरं	संनधप	मगमर	पप	सं
जाऽ	ऽऽ	ऊंऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ	उत	की
×				२			
संसं	संसं	संरं	गरं	संन	धप	ग–मर	गम
डग	रन	जाऽ	तस	खिन	कोई	इऽतऽ	चर
०				१			
प–मग	मर	गपधन	संरंगरं	संनधप	मगमर	सं	धप
नऽनऽ	मेंऽ	जीऽयाऽ	कोऽलऽ	गाऽऽऽ	ऊंऽऽऽ	हे	रीऽ
×				२			
मर	गपधन	संरंगरं	संनधप	मगमर	सं	धप	मर
मेंऽ	जीऽयाऽ	कोऽलऽ	गाऽऽऽ	ऊंऽऽ	हे	रीऽ	मेंऽ
०				१			
गपधन	संरंगरं	संनधप	मगमर	सं	धप	गम	पम
जीऽया	कोऽलऽ	गाऽऽऽ	ऊंऽऽऽ	हे	रीऽ	माऽ	ईऽ
×				२			
ग	–	संनधप	मगमर	सं	धप	गम	पम
आ	ऽ	गाऽऽऽ	ऊंऽऽऽ	हे	रीऽ	माऽ	ईऽ
०				१			
ग	–	संनधप	मगतर	सं	धप	गम	पम
आ	ऽ	गाऽऽऽ	ऊंऽऽऽ	हे	रीऽ	माऽ	ईऽ
×				२			
ग	–	–	म	र	ऽ	स	ऽ
आ	ऽ	ऽ	ज	न	ऽ	खे	ऽ

—*—

(३) तोड़ा

			गत का हिस्सा
१ २ १ २ १ १ १ २	१ २ १ २ १ २ १ २	१ १ १ १ १ १	
रग पध गप धनि	पध निसां धनि सांरें	सांनि धप मग रेरे	ग पप ध नि
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दा दिर दा रा
×	२	०	३

(४) तोड़ा

१ १ १ १ १ १ १ १	२ १ १ १ १ १ १	२ १ १ १ १ १	१ १ २ १ १ २ १ १
सांनि -र सांनि धप	धप नि- धप मग	मग -प मग रे-	गप धप धनि धनि
दारा ऽदा दारा दारा	दारा ऽदा दारा दारा	दारा ऽदा दारा दाऽ	दारा दारा रादा दारा
×	२	०	३

(५) तोड़ा

१ २ १ १ १ १ १ २	१ १ १ १ २ २ १	२ २ १ १ १ १ १ १	२ १ २ १ १ २ १
सांरें गंरें सांनि धप	सांनि धप धनि धप	गम गप मग रेसा	सारे गम गप धनि
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा
×	२	०	३

(६) तोड़ा

१ १ १ १ २ १ १ १	१ १ १ १ १ १ १ १	१ १ २ १ २ १ १	२ १ २ १ १ २ २
गंरें सांनि सांरें सांनि	धनि सांनि धप मग	गप धनि सां- गप	धनि सां- गप धनि
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दाऽ दारा	दारा दाऽ दारा दारा
×	२	०	३

(७) तोड़ा

१ २ १ १ १ १ २ १	२ १ २ १ १ १ १ १	२ २ १ १ १ १	२ १ २ १ १
गम गरे गप धनि	सांरें गंरें सांनि धप	धनि धप मग रेरे	ग पप धनि सां-
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दा दिर दारा दाऽ
×	२	०	३

११ ११ ११ ११	११ ११ ११ ११	११ २१ २ ११	२१ २ ११ २१
गंसां रेंनि सांध निप	धम पग मग रेंसा	गप धनि सां गप	धनि सां गप धनि
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दा दारा	दारा दा दारा दारा
×	२	०	३

(८) तोड़ा

गत का हिस्सा			
		१२११ ११ ११	१२ ११ ११ ११
सां सां सां सांसां	नि धध प ध	गम गप मग रेसा	निसां निरें सांनि धप
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा
×	२	०	३

१२ १ १२ १	१२ १२ ११ १	११ २१ २१ २१	११ २१ १२ ११
धनि सां- धनि सां-	पध निसां निध प-	गंसां रेंनि सांध निप	धनि सांध निसां धनि
दारा दाऽ दारा दाऽ	दारा दारा दारा दाऽ	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा रादा दारा
×	२	०	३

(९) तोड़ा

गत का हिस्सा			
		११ ११ ११ ११	११ ११ २ २१
सां सां सां सांसां	नि धध प ध	गंरें सांगं रेंसां गंरें	सांनि धप धनि धप
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दारा दादा रादा दारा	दारा दारा दारा दारा
×	२	०	३

२१ २१ ११ ११	२ २१ ११ ११	२१ २१ १२ १२	११ २१ १२ ११
धनि सांरें सांनि धप	धनि धप मग रेसा	रेग मग पध निसां	धनि सांध निसां धनि
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दादा रादा दारा
×	२	०	३

(१०) तोड़ा

२१ २ २१ २	२१ २ २१ २	११ २ ११ २	२१ २ २१ २
सांनि सां- सांध नि-	निप ध- धम प-	सांनि सां- सांध नि-	निप ध- धम प-
दारा दाऽ दारा दाऽ	दारा दाऽ दारा दाऽ	दारा दाऽ दारा दाऽ	दारा दाऽ दारा दाऽ
×	२	०	३

११२२ २१२२	२१ २२ २१ २२	११२२ २१ २२	२१ २२ २१ २२
सांनि सांसां सांध निनि	निप धध धम पप	सांनि सांसां सांध निनि	निप धध धम पप
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा
×	२	०	३

११ २ २१ २	२१ २ २१ २
सांनि सांसांसांसां सांध निनिनिनि	निप धधधध धम पपपप
दारा दिरदिर दारा दिरदिर	दारा दिरदिर दारा दिरदिर
×	२

२१ २ २१ २	२१ २ २१ २
सांनि सांसांसांसां सांध जिनिनिनि	निप धधधध धम पपपप
दारा दिरदिर दारा दिरदिर	दारा दिरदिर दारा दिरदिर
०	३

२१ १२ १२ १२	१२ ११ ११ ११ ११	११ २१ २ ११	२१ २ ११ २१
पनि धसां निरें सांगं	सांरें गंरें सांनि धप	गप धनि सां- गप	धनि सां- गप धनि
दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दारा दारा	दारा दारा दाऽ दारा	दारा दाऽ दारा दारा
×	२	०	३

—:(*):—

राग देवगिरी

(स्वररचनाकार--श्री पं० विनायकनारायण जी पटवर्धन, पूना)

-----*-----

तीन ताल मात्रा ८ (मध्यलय) १, ३, ७ पर ताली आती है ।

स्थायी--सुमिर सुमिर नर उतरो पार । भवसागर की तीखन धार ॥

अन्तरा--धर्म जहाज माहिं चढ़ि लीजै । सँभल सँभल तामें पग दीजै ॥

स्थायी

सा
निं रे ग रे सा रे निं सा धं पं
० ० ० ० ० ०
सु मि र सु मि ऽ र ऽ न र
\+ ७

नि॒ नि॒ नि॒
ग रे गप धप मगऽरे सा सा सा ध ध ध ध प
० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ०
उ त रोऽ ऽऽ पाऽऽ र भ व सा ऽ ग र की ऽ
१ ३ + ७

सा
धनि सारे नि सा धपमग रे निं रे ग रे सा रे निं सा धं पं
० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ०
तीऽ ऽऽ ख न धाऽऽऽ र सु मि र सु मि ऽ र ऽ न र
१ ३ + ७

ग रे गप धप मगऽरे
० ० ० ० ० ०
उ त रोऽ ऽऽ पाऽऽर
१ ३

अन्तरा

१ नि ध नि सां सां गं
० ० ० ० – ० ०
ऽ ध र्म ज हा ज मा
\+ ७

नि॒ नि॒
गं रें सां सं धनि रेंसां सां रें नि सां ध ध ध प
० ० ० ० ० — ० ० ० ० ० ० ० ०
ऽ हिं च ढ़ि लीऽऽ जै सँ भ ल सँ भ ल ता ऽ
१ ३ + ७

ध	नि	सां	रें	सां सां नि	धपमगरे	नि रेगरे	सारेनिसा	धं	पं
मैं	ऽ	ऽ	ऽ	प ग ऽ	दी ऽ जे ऽ ऽ	सु मि र सु	मि ऽ र ऽ	न	र
१					३ +		७		

इस राग में सब स्वर शुद्ध लगते हैं।

जाती–षाड़व–सम्पूर्ण (वक्र रूप से)

वादी–षड़ज, सम्वादी–पंचम, समय प्रातः काल।

विशेष–देवगिरी राग की विलावल का एक प्रकार है। इसे देवगिरी–विलावल भी कहते हैं, देवगिरी राग कल्याण और विलावल को मिलाकर होता है। इस राग का का प्रस्तार मंद्र और मध्य सप्तक में अधिक होता है। धैवत और पंचम इन स्वरों पर कण स्वर से कोमल निषाद की आँस ली जाती है।

चिन्हों का संक्षिप्त परिचय—

– लघु एक मात्रा, ग, ० द्रुत, आधी मात्रा, सा, ‿ अणुद्रुत ¼ मात्रा याने पाव मात्रा, प ऽ उच्चारण– ऽ, विश्रान्ती ॰ विश्रान्ती ॐ

सां तार सप्तक, नि मन्द्र सप्तक, ऽ कोमल स्वर जैसेः—नि् (नी कोमल)

सम ताली और खाली।

१-यह अङ्क ताल की पहली मात्रा या सम के लिये है। सम के अतिरिक्त जिस मात्रा पर ताली आती है उसके नीचे उसी की संख्या का अङ्क दिया गया है। खाली के लिये + इस चिन्ह का प्रयोग किया गया है।

राग वैर्णी केद्दार
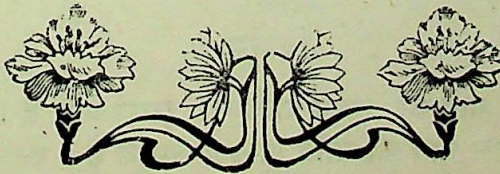
(रचयिता-श्री० ऐस० आर० गोलवनकर सङ्गीताचार्य)

गीत ताल तीन

स्थायी—अपने प्रभु को आज रिझाऊं। मङ्गल गाऊं दरशन पाऊं ॥
अन्तरा--बहुत दिनन की आश पुराऊं। तृषित हृदय की प्यास बुझाऊं ॥

स्थायी

(स)नि़	सा	रे	रे	ग	–	ग	ग	म	मप	प	ग	म	मरे	रे	सा
प्र	भु	को	ऽ	आ	ऽ	ज	रि	झा	ऽऽ	ऊं	ऽ	अ	पऽ	ने	ऽ
०				३				×				२			
म	ध	ध	ध	नि॒	प	प	म	ग	म	म	म	म	मरे	रे	सा
मं	–	ग	ल	गा	ऽ	ऊं	ऽ	द	र	श	न	पा	ऽऽ	ऊं	ऽ
०				३				×				२			

अन्तरा

म	म	म	ध	–	सां	सां	–	सां	रें	गं	गं	रें	–	सां	–
ब	हु	त	दि	न	न	की	ऽ	आ	ऽ	स	पु	रा	ऽ	ऊं	ऽ
०				३				×				२			
म	ध	म	ध	नि॒	प	प	म	ग	म	म	म	म	मरे	रे	सा
तृ	षि	त	हृ	द	य	की	ऽ	प्या	ऽ	स	बु	झा	ऽऽ	ऊं	ऽ
०				३				×				२			

विवरण

इस राग के गाने का समय रात्रि का दूसरा प्रहर है। वादी स्वर मध्यम सम्वादी षड्ज है। इस राग की जाति सम्पूण सम्पूर्ण है। उतरते समय नि॒ कोमल लिया जाता है, और चढ़ते समय तीव्र निषाद प्रयोग होता है।

राग बिलावल

ताल चौताल (ध्रुवपद)

शब्दकार–"सूर्यसेन" * स्वरकार–'श्री०मोहनलाल शर्मा'

(१) स्थायी

प्र थ	म प्रि	ऽ या	वे ऽ	ला ऽ	व लि
सां सां	सां ध	ध प	म ग	म रे	सा सा
हिं ऽ	दो ऽ	ल की	वी रा	ऽ ङ्ग	ना ऽ
ग म	ध सां	ध प	म ग	म रे	सा सा
भ र	ता ऽ	र को	ध्याऽ ऽ	न ध	ऽ रे
सा म	ग म	ध ध	नीसा सां	सां ध	ध प
व्या ऽ	प्र च	ऽ र्म	आ स	न धा	ऽ र
ध सां	ध प	प प	म ग	म रे	सा सा

(२) अन्तरा

सं ऽ	पू ऽ	र ण	रा ऽ	ग जा	ऽ ति
ग म	ध ध	ध ध	सां सां	सां सां	रें साँ
स ब	ही शु	ऽ द्ध	स्व ऽ	र जा	ऽ में
गं गं	रें गं	रें सां	नि ध	ध प	प प
वा ऽ	दी ऽ	स्व र	धै ऽ	व त	अ रु
गं गं	रें सां	सां सां	ध ध	ध ध	प प

सं	ऽ	वा	ऽ	दी	ऽ	गं	ऽ	ऽ	धा	ऽ	र
सां	रें	सां	ध	ध	प	म	ग	म	रे	रे	सा

संचारी-

स	म	य	जा	ऽ	को	दि	व	स	को	ऽ	ऽ
ध	ध	ध	ध	ऽ	प	म	ग	म	र	सा	सा
प्र	थ	म	प्र	ह	र	अ	ऽ	धं	दू	ऽ	जो
ध	ध	ध	प	सां	ध	प	म	ग	म	रे	सा
गा	ऽ	य	क	व	र	गा	ऽ	य	रा	ऽ	ग
म	म	म	ग	म	रे	म	रे	रे	सा	रे	सा
वि	ऽ	ष्णु	को	ऽ	ऽ	ध्या	ऽ	न	धा	ऽ	र
ध	सां	नी	ध	प	प	म	ग	म	रे	सा	सा

आभोग-

क	हे	ऽ	मीं	ऽ	यां	सू	र	ज	से	ऽ	न
ग	ग	म	म	ध	ध	साँ	साँ	साँ	साँ	रें	सां
सु	न	हो	ऽ	स	ब	गु	नी	ऽ	ज	ऽ	न
गँ	गँ	गं	गं	रें	गं	रें	रें	सां	ध	ध	प
अ	तु	ब	स	ऽ	न्त	प्र	थ	म	प्र	ह	र
सां	ध	सां	गं	गं	गं	रें	सां	ध	ध	प	प
ह	नु	म	त	म	त	को	ऽ	वि	चा	ऽ	र
सा	सांनि	ध	प	प	प	म	ग	म	रे	सा	सा

—(*)—

म प ध प ध नी स	-नी रेंसं नीध नी	नीसं - - प	म प ध प ध नी सं
तै नूं ऽ ऽ	ऽहो रमैं आऽ खां	कीऽ ऽ ऽ ऽ	तै नूं ऽ ऽ

-नी रेंसं नीध नी	नीसं - - प	इसके बाद स्थाई बजेगी, दूसरे अन्तरे के बाद दूसरा म्युज़िक।
ऽहो रमैं आऽ खां	कीऽ ऽ ऽ ऽ	

पध सं - -	पध सं -संरें नीध	पम गरे सरे नी	सरे गम -प धनी
प सप सप सप	पध सं - -	पध सं -संरें नीध	पम गरे सरे नी

सरे गम -ग रेग	स रे प -	फिर स्थाई बजेगी।

शेष अन्तरे इसी प्रकार बजेंगे, नोट, जहांपर * ऐसा फूल हो वहां चुप रहना जहांपर ⌒ ऐसी ऊपर लकीर हो वहां मींड़ लगाओ।

——:(*):——

सार सूचना !

—:(*):—

नं० १--गन्धर्व वीणा बजाने का चार्ट तैय्यार न हो सकने के कारण नहीं छाप सके हैं, भविष्य के लिये आशा रखिये।

नं० २--'सङ्गीत पारिजाति' ग्रन्थ का अनुवाद अप्रैल मास के अङ्क से प्रारम्भ होगा जो क्रमशः प्रकाशित होता रहेगा।

नं० ३--सारंगी शिक्षा का महत्व पूर्ण लेख तथा मिस्टर ढोलकराम की चिट्ठी अप्रैल के अङ्क में देखिये।

--सम्पादक

प्राप्ति-परिचय !

परलोक ।

(परलोक विद्या का एक मात्र हिन्दी मासिक पत्र)

वार्षिक मूल्य २॥)

इसमें परलोक विद्या की अनेक महत्व पूर्ण बातों का संग्रह है । पाठकों की जिज्ञासा का पोषक, उनके ज्ञान का विस्तार करने वाला, तथा अनुभव का विशेष सहायक है ।

पता--

मैनेजर-'परलोक' ब्रह्मचर्याश्रम भिवानी (हिसार)

बच्चों की दुनियां ।

(बाल साहित्य में युगान्तर उपस्थित करने वाला एक मात्र पाक्षिक-पत्र)

वार्षिक मूल्य ३॥)

किसी देश या जाति का भविष्य वहां के बच्चों की योग्यता और शक्ति पर ही अवलम्बित है । प्रस्तुत पत्र में बच्चों के स्वाभिमान, शिक्षा और मनोरञ्जन पर विशेष ध्यान दिया गया है । अतः यदि हमें अपने बच्चों के भावी जीवन को उच्च बनाना है, उनमें सहृदयता और सहयोग का संचार करना है तथा उनके व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन को उन्नत करना है तो हमें चाहिए कि हम आज ही अपने बच्चों को उपर्युक्त पत्र का ग्राहक बनादें ।

मैनेजर-"बच्चों की दुनियां" सागर (सी० पी०)

कोकिल ।

(स्त्री पुरुष और बालकों के ज्ञान और मनोरञ्जन की सुन्दर मासिक पत्रिका)

वार्षिक मूल्य २)

इसमें अनेक सुन्दर २ कहानियों और कविताओं का संग्रह है । कहानियां तथा कवितायें सभी मनुष्य जीवन को वास्तविकता की ओर अग्रसर बनाने वाली हैं । अतः आज ही २) मनीआर्डर भेजकर ग्राहक बन जाइए ।

मैनेजर-"कोकिल" सहारनपुर ।

हम और हमारी सन्तान !

प्रत्येक मनुष्य के किसी कार्य में आगे बढ़ने पर उसकी जिम्मेदारी होजाती है। जो अपनी जिम्मेदारी को नहीं समझता अथवा उसकी लापरवाही करता है लोग उसको मूर्ख कहते हैं और उसको अपनी लापरवाही का दण्ड भी भुगतना पड़ता है।

जैसे कोई मनुष्य तांगा, इक्का या बैलगाड़ी चलाता है तो उन पशुओं के विषय में उस मनुष्य की यह जिम्मेदारी है कि उनको ठीक समय पर खाने पीने को दे, बेरहमी से मारे पीटे नहीं, उनसे उनकी शक्ती से अधिक बोझा भी न खिचवाये तथा उनका स्वास्थ्य ठीक बना रहे इसका पूरा ध्यान रखे। यदि इनसे काम लेने वाला मनुष्य अपनी इस जिम्मेदारी की लापरवाही करे तो आगे चलकर वह पशु कुछ भी काम करने लायक न रहेंगे, यह तो निश्चय ही है अदालत से भी ऐसा काम करने वाला दण्ड का भागी हो सकता है।

अत्यन्त खेद की बात है कि हमारी एक बड़े महत्वपूर्ण जिम्मेदारी की ओर जिस पर न केवल हमारी वरन् हमारे देश और समाज की उन्नति निर्भर है, उस ओर बहुत ही कम मनुष्यों का ध्यान जाता है। जो लोग पढ़े लिखे नहीं हैं उनके लिये तो यह भी कहा जासकता है कि वह नासमझ हैं अपनी जिम्मेदारी नहीं समझते, परन्तु दुःख तो इस बात का है कि समझदारी का दम भरने वाले अधिकांश मनुष्य आलस्य और लापरवाही के कारण अपनी सन्तान के प्रति अपनी जिम्मेदारी का ठीक २ पालन नहीं करते। हमारी अज्ञानता का ही यह परिणाम है कि प्रति वर्ष हजारों बच्चे असमय में ही काल के ग्रास में चले जाते हैं। जब बीमारी का पूरा असर होजाता है तब हजारों रुपये खर्चने पर भी बच्चे के प्राण बचने कठिन होजाते हैं। ऐसी दशा में भी आपका ध्यान अपनी लापरवाही की ओर नहीं जाता, वरन् भाग्य और विधाता को दोष देकर ही अपने दुःखित हृदय को शान्त करने का प्रयत्न करते हैं। आप अपनी जिम्मेदारी को भूलकर अपने प्यारे बच्चे के प्राण तक गवां देते हैं।

आज हम आपके सामने कुछ ऐसी बातें रखना चाहते हैं जिनसे आप समझ सकें कि बच्चों का उत्तम रीति से पालन पोषण करने में हमें किन किन बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये, जिसे कि वे किसी रोग से पीड़ित न होकर बलवान तथा हृष्ट पुष्ट हों और अपनी पूरी उम्र को प्राप्त हों जिससे आपका जीवन भी सुख रूप बने। हमारा अनुमान तो यह है कि हमारे इस लेख को पढ़कर अथवा ध्यान से सुन समझ कर थोड़े समय में ही अनुभव हीन माताएँ भी अपने गोद के खिलौने प्यारे बच्चों का बहुत कुछ उपकार कर सकेंगी।

बालकों का स्वभाव।

अपने जीवन के बारह महीनों में बालक पर संसार के नवीन वातावरण का बड़ा प्रभाव पड़ता है। इन दिनों में बालक के मस्तिष्क और शरीर में बड़े परिवर्तन

उपस्थित होते हैं। सब से बड़े महत्व की बात यह है कि इसी समय बालक के आगामी आचरण बनने का श्रीगणेश प्रारम्भ होने लगता है। इसलिये बालक के उज्ज्वल भविष्य के लिये इसी समय से उसकी उत्तम देख रेख का प्रबन्ध रखना बड़ी आवश्यक बात है।

बालक का वज़न।

जन्म के समय सामान्यतः बालक का वज़न ७ पौंड यानी साढ़े तीन सेर के लगभग होता है, परन्तु कभी कोई कोई पूरे बच्चे ढाई, तीन सेर के और कोई कोई ५-६ सेर तक के होते देखे जाते हैं। जन्म के पीछे पहले १० दिन में बालक का वज़न कुछ घटता है परन्तु दस दिन पीछे ही वह कमी पूरी होने लगती है। पहले तीन महीने तक यह बजन २॥ छटांक प्रति सप्ताह के हिसाब से बढ़ता है। इस तरह तीन महीने के बालक में ६ सेर तक बजन हो तो बालक को निरोग और तन्दुरुस्त समझना चाहिये। इसके बाद छः महीने पूरे होने तक बालक की वृद्धि २॥ छटांक प्रति सप्ताह होनी चाहिये। यहांतक यदि बालक निरोग है तो छैः महीने में उसका वज़न जन्म के समय से दुगुना और साल भर में तिगुना होजाना चाहिये अर्थात् पहली वर्ष गांठ के समय बालक का वजन १०॥ सेर होना चाहिये। इसलिये बालक के स्वास्थ्य में वृद्धि हो रही है या नहीं इस बात को जानने के लिये यह बात बड़ी आवश्यक है कि शुरू में साल भर तक प्रति मास बालक का वजन लेते रहना चाहिये।

इसी तरह सामान्यतः बालक जन्म के समय १२ इंच लम्बा होता है। यह लम्बाई भी धीरे २ बढ़कर सालभर में ३० इंच होजाती है।

दांत निकलना।

इसी पहले बर्ष में ही बड़े महत्व-पूर्ण परिवर्तन (भारी उलटफेर) बालक के शरीर की बनावट और क्रियाओं में भी होते हैं। इसमें सबसे अधिक दुःखदाई और प्रत्यक्ष परिवर्तन है दांत निकलना, जो सातवें महीने में आरम्भ हो जाता है। पहिले नीचे की तरफ बीच के दो दांत निकलते दिखाई देते हैं, इनके निकलने के एक महीने के भीतर ही उन्हीं दांतों के ठीक मुकाबिले में ऊपर के दो दांत चमकते हैं। दांत निकलने का यही समय बहुधा देखा जाता है, पर किसी-किसी बालक के तीसरे महीने ही से दांत निकलने शुरू हो जाते हैं, और कभी कभी ऐसे बालक भी देखने में आते हैं जिनका एक-दो दाँत जन्म के समय ही निकला हुआ रहता है, परन्तु ऐसा बहुत कम होता है। किसी बालक के साल भर तक दांत नहीं निकलते, परन्तु दांतों का बहुत जल्दी निकल आना या बहुत दिन तक नि नकलना, यह दोनों ही सूरतें ऐसी हैं, जिसमें बालक को कोई न कोई रोग अवश्य ही हो जाता है, जिसमें (Rickets) सूखा की बीमारी और दातों में कीड़ा लगना मुख्य हैं।

दांतों के निकलने के समय में भी माता की थोड़ी सी ही असावधानी से बालक को तकलीफ़ बढ़ जाती है। दांत निकलना शरीर की स्वाभाविक क्रिया है, इसलिये इसमें यथा सम्भव किसी प्रकार हंस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। यह अवश्य है कि इन

दिनों में बालक को जोर बहुत पड़ता है, जिसकी थकान इतनी होती है कि यदि बालक पूर्ण बलवान नहीं है तो उसको कई तरह की बीमारियां इस हालत में पैदा होजाना कोई आश्चर्य की बात नहीं परन्तु यह भी भारी भूल की बात है कि दांत निकलने के दिनों में कोई भी रोग हो तो उसको दांतों का कारण मानकर उसकी चिकित्सा ही न कराई जाय।

साधारणतः बालकों को दांत निलकने के समय में या तो बदहजमी होकर दस्त आने लगते हैं या कब्ज रहने लगता है। कान में दर्द उठकर अन्दर से मवाद भी आने लगता है और यह तकलीफ कभी २ इतनी बढ़ जाती है कि बालक को बेचैन बनाये रखती है। कमजोर बच्चे जिनके (Rickets) सूखा की बीमारी हो कभी २ बेहोश होकर हाथ पैर ऐंठने लगते हैं। इन दिनों में बालकों के सिर और छाती को ठण्ड लग जाने से खास तौर पर बचाना चाहिये। नहीं तो निमोनिया होजाने का भय है और जो यह बीमारी हो ही जाय तो बड़ी सावधानी से इसकी चिकित्सा करानी चाहिये।

इस समय माता पिता यदि थोड़ी सावधानी रक्खें तो बालकों को बड़े कष्ट से मुक्त कर कसते हैं। कोई साफ कड़ी लकड़ी का टुकड़ा या रबर की नली बालक को पकड़ा देने से वह उसको मुँह में रखकर काटता है, इससे दांतों के निकलने में सुविधा मिलती है। हर समय बालक को खुली हवा में रखना चाहिये और यदि कब्ज हो तो हमारे यहाँ की बालघुटी या साफ किया हुआ अरण्डी का तैल, या अञ्जीर का शर्बत, या बड़ी, हर्ड, काला नमक, फुली हींग, फुला सुहागा घिसकर थोड़ा देना चाहिये।

यदि बालक को मां का दूध न देकर गाय का दूध दिया जाता हो तो दूना पानी मिलाकर देना चाहिये। यदि बालक मां का दूध पीता हो तो उसको दाँत निकलने के दिनों में कदापि नहीं छुड़ाना चाहिये। बकरी का दूध भी बालक के लिये हितकर है।

जन्मते ही बालक ज्यादा हिलना-जुलना पसन्द नहीं करता न वह तेज रोशनी देखना पसन्द करता है, इसलिये आँखें बन्द किये पड़ा रहता है। धीरे-धीरे यह बातें कम होने लगती हैं। सुनने की शक्ति भी बालक में जन्म के दो-एक घड़ी बाद से ही आ जाती है, क्योंकि यदि उसके पास कोई जोर का शब्द किया जाय तो वह चौंकता है। तीसरे महीने उसको अपने आसपास की वस्तुओं के देखने का व्यसन उत्पन्न होता है। पांचवें महीने बालक अपनी मां को पहचानने लगता है। कभी-कभी किलकारी मारता और हँसता है। सातवें महीने वह खिलौने को पकड़ने लगता है और मुँहसे पहला शब्द 'वा' उच्चारण करता है। इस 'वा' को वह कोई अर्थ समझकर नहीं कहता, वरन् वह अपनी सरलता के कारण स्वतः ही उसके मुँह से निकलने लगता है। नवे महीने में बालक बैठने लगता है और इसके कुछ सप्ताह पीछे वह किसी चीज के सहारे खड़े होने या दो-एक कदम चलने का साहस करने लगता है।

इस समय बालक जिस चीज को भी देख लेता है वह उसके लिये आश्चर्य-पूर्ण होती है। उसके पहिचानने और समझने की भावना उसके मस्तिष्क में उत्पन्न होने

लगती है और इसके लिये उसे अपने दिमाग पर जोर देना पड़ता है। बालक सबसे पहिले अपनी उङ्गलियां और अंगूठे आश्चर्य से देखता है। फिर अपनी चारपाई को और फिर अपने रहने के कमरे और उसकी वस्तुओं को। इसलिये जितनी चीजें एक बालक के आस-पास अधिक होंगी उतना ही उसको अपने दिमाग से ज्यादा काम लेना पड़ेगा। जिसका परिणाम यह होगा कि बालक के सिर में दर्द पैदा हो जायगा और नींद कम आने लगेगी। लोग बड़ी भूल करते हैं, जो तीन चार महीने के बालकों को मेले तमाशे में गोद में दबा कर चल देते हैं। वहां उनको कोई आनन्द नहीं आता, वरन् उनको तकलीफ होती है, इसी से वह बहुधा रोते हैं। जिससे ले जाने वाले के आमोद प्रमोद में भी बाधा पड़ती है।

जहां तक हो सके नौ महीने तक तो बालक को मां का ही दूध पिलाना चाहिए। क्योंकि माता का दूध एक तो हज़म जल्दी होता है और दूसरे उसमें किसी तरह के कीड़े या जर्म्स (Germs) नहीं होते और इस कारण से बालक को कोई रोग भी उत्पन्न नहीं होता। प्रसव के दो दिन पीछे तक तो कभी-कभी स्त्री के स्तन से दूध नहीं उतरता और बालक को इन दो दिनों में भूख भी ज्यादा नहीं सताती, इसलिये दिनमें दो-तीन दफै उबाला हुआ पानी थोड़ा ठण्डा करके दो चार बूंद बालक को देना काफी होता है। तीसरे दिन बालक की माता के स्तनों में दूध ठीक से उतर आता है उस हालत में भी बालक को नियमित समय में तीन-तीन घण्टे पर स्तन पान कराना चाहिये और रात के छैः घन्टे स्तन नहीं पिलाना चाहिये। बालक के स्तन पान का समय प्रातःकाल ४ बजे, फिर सुबह ७ बजे, १० बजे, दोपहर १ बजे, तीसरे पहर ४ बजे शाम को ७ बजे और रात को १० बजे नियत हो जाना चाहिये। हर समय अनियमित रीति से दूध पिलाना भी हानिकारक होता है। ४ महीने होने पर दूध देने के समय का अन्तर ३ घन्टे की बजाय ४ घन्टे का कर देना चाहिये।

माता को अपना एक स्तन एक दफै में बालक को पिलाना चाहिये, यदि एक स्तन को पीकर बालक सन्तुष्ट न हो तो दूसरा देना चाहिये, परन्तु पहले दिए हुए स्तन के बिलकुल खाली होजाने पर दूसरा स्तन बालक को देना चाहिये। स्तन को बालक को देने के पहले खूब गरम पानी से धोकर साफ कपड़े से पोंछकर बोंडी पर (Glyceriu of bone) ग्लिसिरन आफ बोरेक्स या छुहारे को घिसकर घी या मक्खन में मिलाकर चुपड़ कर देना चाहिये। बालक के पेट की शक्ति किस अवस्था में कितना वजन धारण करने की होती है यह नीचे के नकशे से समझमें आजायगा।

(१) तीन घन्टे के बालक के पेट में एक दफै में आधी छटांक।
(२) ४ सप्ताह के " " सवा छटांक।
(३) ८ " " " डेढ़ छटाँक।
(४) १२ " " " आध पाव।
(५) १६ " " " सवा दो छटांक।
(६) २० सप्ताह के बालक के पेट में एक दफै में ढाई छटांक दूध समा सकता है।

जहां माता का दूध बालक को पूरी मात्रा में नहीं मिलता वहां बालक भूखा रहता है। ऐसी सूरत में वह नियमित समय से पहले ही भूख से रोने लगता है और पन्द्रह बीस मिनट तक स्तनों से लगा रखने पर भी सन्तुष्ट नहीं होता, वह दूध पीते २ बीच में कुछ चुप सा होजाता है मानो सोगया हो, परन्तु चौंक कर थोड़ी देर में वह फिर पीने लग जाता है, इन बातों से ही यह अनुमान होजाता है कि बालक भूखा है और उसको उदर पूर्ति के दूसरे साधन की आवश्यकता है।

ऊपरी दूध यदि देने की आवश्यकता हो तो सब से उत्तम गाय का ताज़ा दूध देना चाहिये और अपनी माता का एक स्थन पूरा पी लेने के बाद भी बालक की क्षुधा बाकी रहे वह इससे पूरी करनी चाहिये। दूध चम्मच से पिलाना चाहिये क्योंकि बाजे २ बच्चे ऐसे होते हैं जो दो एक दफै बोतल से पीने के बाद मां के स्तनों से मुँह नहीं लगाते हैं। बालकों को माता के स्तन के अतिरिक्त जो पदार्थ हितकर हो सकते हैं, यह हैं:-

(१) गाय का स्वच्छ दूध (२) बोतलों में आने वाले चूर्ण रूप में दूध और अन्य बालोपयोगी पेटेन्ट फूड, परन्तु इन सब में सर्वोत्तम वस्तु गाय का दूध ही है, क्योंकि इसके गुण माता के दूध से बहुत कुछ मिलते जुलते होते हैं।

गाय के दूध में माता के दूध की अपेक्षा प्रोटीन ज्यादा और शुगर (मिठास) कम होती है, परन्तु चिकनाई का अंश दोनों में बराबर होता है। इसलिये बच्चों के देने के लिये गाय के दूध में बालक की अवस्था के अनुसार थोड़ा उबाला हुआ पानी मिलाकर उसको पतला कर लेना चाहिये। इससे उसकी चिकनाई का अंश जो हजम कठिनता से होता है कम हो जायगा। बालक को हमारे यहां की 'बालसुधा' देते रहने से पाचनक्रिया ठीक बनी रहती है दस्त साफ होता है और बालक मोटा ताजा होता जाता है।

हाल के बच्चे के दूध में दुगना पानी मिलाना चाहिये। दो महीने के बच्चे को बराबर का पानी और इसी तरह पानी को बराबर घटाते जाना चाहिये, जिससे कि दस महीने के बच्चे को ख़ालिस दूध हजम करने की शक्ति उत्पन्न होजाय।

गाय के दूध में बहुत से अवगुण भी हैं, पेट में जाकर अन्दर की खटाई से जो इसका दही बनता है, वह मां के दूध से बने दही की अपेक्षा गरिष्ठ होता है, इसलिये बालक के पीने को बनाये हुए आधी छटांक दूध में एक ग्रेन साइट्रेट आफ सोडा (Citrete of Soda tablets) की टिकियां जो अङ्गरेजी दवा बेचने वालों के यहां मिलती हैं, मिलादी जायं तो वह दोष दूध का जाता रहता है, परन्तु गाय का कच्चा दूध कभी नहीं देना चाहिये, उसको १ उबाल जरूर दे देना चाहिये और तब किसी बरतन में उसको उतार कर ऊपर से साफ मखमल का टुकड़ा ढक देना चाहिये, जिसमें मक्खी या धूल तो उसमें न पड़े परन्तु हवा अवश्य लगती रहे।

दूध चूर्ण (Driedmilk) का उपयोग गर्मी के दिनों में करना चाहिये या उस समय जब कि गाय का ताजा दूध न मिले, यह एक चमचा का पौडर दुगने पानी में

मिलाना चाहिये। परन्तु (Condensed milk) गाढ़े दूध को बड़ी सावधानी से काम में लाना चाहिये, क्यों कि इसमें चिकनाई का अंश किसी २ में बहुत ही कम होता है। साथ ही इनके डिब्बों को खोलते ही एक दम खाली करके सारा दूध किसी चीनी के बरतन में मलमल के साफ टुकड़े से ढककर रखना चाहिये। उसी टीन में दूध का ढक्कन बन्द करके रखने से उसमें दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

बरसात के दिनों में पाचन शक्ति बड़ों की ही स्वभावतः मन्द पड़ जाती है, तब बालकों का तो कहना ही क्या है। इन दिनों में बालकों को जिनकी अवस्था साल दो साल तक की होती है दस्तों की बीमारी विशेष रूप से होती है। इसे अङ्गरेजी में इन्फैन्टाइल कालैरा (Infantile Cholera) बालकों की विशूचिका कहते हैं, और यह रोग प्रति वर्ष सैकड़ों ही बालकों के प्राण अपहरण कर लेता है, इस रोग का आरम्भ तत्कालिक होजाता है और पहले बालकों को उल्टियां आती हैं और उसके बाद हरे रङ्ग के दस्त शुरू होजाते हैं, त्वचा पीली पड़कर सिकुड़ जाती है और हड्डियों पर से झूल जाती है। दो या तीन दिन या इससे भी कम समय में बालक के शरीर में रस पदार्थ नष्ट होजाने से मृत्यु होजाती है!

इस बात को तो हम और आप सभी भली प्रकार जानते हैं कि भारतवर्ष में आज दिन गरीबी और बेरोजगारी के कारण एक गृहस्थ को अपने और अपने परिवार के जीवन निर्वाह करने में कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है जहां दोनों वक्त पेट भर कर अन्न भी प्राप्त न हो, वहां लम्बी २ डाक्टरों की फीस और दवाइयों के बिल चुकाने को दाम कहां से जुटाये जा सकें? रोगों की रोक थाम पहिले से तो कुछ होती नहीं और हो भी कैसे सकती हैं, पढ़े लिखे लोगों में अधिकांश लोग ऐसे हैं, जो नौकरी पेशा हैं। नौकरियों में स्थान परिवर्तन अर्थात् जगह बदली का सङ्कट आये दिन लगा ही रहता है, इस कारण घर के सब स्त्री पुरुष एक जगह रह नहीं पाते, इससे स्त्रियों को काम काज में हाथ बटाने वाला कोई भी पास नहीं होता, बेचारी अपने छोटे २ बालकों के साथ अपने पतियों की सहगामिनी बनती हैं। और कोई २ तो ऐसे बीहड़ स्थानों में पहुँच जाती हैं जहां चिकित्सा की सुविधायें और उत्तम औषधियां मिलना तो क्या सामान्य वस्तुऐं खाने पीने तक की नहीं मिलती। बहुत से लोगों का निवास स्थान ही ऐसे स्थानों में है जहा अच्छी दवाऐं नहीं मिलती, इन्हीं सब बातों को सोचकर हमने अपने सामान्य श्रेणी के गृहस्थ भाइयों के हित के लिये बड़े २ अनुभवी और विचारशील वैद्यों और डाक्टरों की सलाह से उत्तमोत्तम अत्यन्त गुणकारी और विशेषतः बालकोपयोगी औषधियों के मिश्रण से "बालसुधा" नामक मीठी दवा तयार की है, इसके गण और स्वाद दोनों ही बालकों के लिये अत्यन्त हितकर और रुचिकर हैं। इसके सेवन से बालक हृष्ट पुष्ट और बलवान बनजाते हैं।

बालसुधा के सेवन से हड्डियां बलिष्ट होकर शरीर सुडौल और सुन्दर बनता है।

बालकों के पहिले ही साल में जब कि उनके शरीर के प्रायः सब ही अवयवों की वृद्धि बड़ी तीव्र गति से होती है, किन्तु बालकों के माता पिता के दोष से उत्पन्न हुई शारी-

रिक दुर्बलता के कारण क्षीणता सी बनी रहती है, बालसुधा के सेवन से उसमें एक विलक्षण चमत्कार दिखाई देने लगता है।

बालसुधा के समान–दूसरी औषधि शरीर की नस–नस में स्फूर्ति और उत्साह पैदा करने वाली नहीं, क्योंकि यह ताजा रुधिर पैदा करने वाली अव्वल दर्जे की चीज है, इसके सेवनसे बालकोंमें शारीरिक बल तो बढ़ता ही है आत्मबल की भी वृद्धि होती है। बालसुधा सेवन करने वाले बालक डरपोक नहीं रहते, वे खेलकूद में अपनी उमर के बालकों से सदैव आगे बढ़े रहते हैं। 'बालसुधा' में कोई धातु का मिश्रण नहीं है, यह उन पदार्थों से बनाया गया है जो चिकित्सा शास्त्र में बड़े २ ज्ञाता और अनुभवी चिकित्सकों द्वारा विशेष रूप से बालोपयोगी माने जा चुके हैं।

आप अपने बालक को 'बालसुधा' विधिपूर्वक शुरू तो कीजिये फिर देखिये कि बालक में कैसा चमत्कार बढ़ता है। 'बालसुधा' सेवन करने वाले ए बालक को देखिये और अपने बालक को भी तन्दुरुस्त बनाइये।

दांतों के निकलने में जो बालक की दुर्दशा हो जाती है वह इसके सेवन से सर्वथा नहीं होती क्यों कि दांतों के निकलने के समय बालकों की पाचन शक्तिही बिगड़ जातीहै, जो अनेक बीमारियों का कारण बन जाती है और इसके सेवन से पाचनशक्ति अपना कार्य ठीक से करती रहती है, जिससे रोग की उत्पत्तिही नहीं होती, वास्तव में यह किसी रोग विशेष की औषधि नहीं वरन् बालकों के शरीर को रोगों के आक्रमण से बचाने का एक सुदृढ़ कवच है।

विशेष ध्यान देने योग्य बात—

बहुत से आदमी जाड़ों में 'बालसुधा' इसलिये नहीं पिलाते कि यह सर्दी करेगा, यह उनकी भारी भूल है। जाड़ों में पिलाने से सर्दी, जुकाम, कुकर खांसी आदि सर्दी से उत्पन्न होने वाले रोग नहीं होने पाते।

व्यवस्थापक—सुख संचारक कम्पनी लि० मथुरा।

महात्मा जी का चमत्कार

अपने जीवन की प्रेमबटी।

मेरे गांव से एक मील दूर ईंट के खेड़े पर काठियावाड़ के एक महात्मा पधारे थे। उनके मुख पर एक ऐसा तेज था ऐसी शान्ति विराज रही थी कि मेरा हृदय आनन्द से भर आया सर नीचा किये दोनों हाथ जोड़ मैं अपराधी की भांति कोने में खड़ा होगया। मेरा मुंह पीला पड़ गया था, कुसंग के कारण उत्पन्न हुये, प्रमेह और जरियान के रोग ने शरीर घुन की तरह घोट लिया था सर उठाने का साहस न होता था। प्रारम्भ में सैकड़ों बड़े २ डाक्टरों और हकीमों की दवायें की गई थी रुपया पानी की तरह बहाया था किन्तु फायदे के नाम पर मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा होती गई वाली कहावत चरितार्थ होती थी। मैं अपने किये पर रोता था हाथ मलता था अपनी नादानी के कारण मुझे अपने ऊपर ही घृणा होती थी। बेटा तुम्हारे दुखी और चिन्तित होने का कारण? बाबाजी के शान्ति एवं गम्भीर स्वरों ने मेरे घावों को ठेस दी। आंखों से आंसुओं की अटूट धारा फूट निकली मानो वर्षों का दुःख एकत्र होकर हृदय के किसी कोने में बैठा रहा हो और आज रास्ता पाकर वह निकला हो। मेरी यह दशा देख कर महात्माजी अपने अमृत तुल्य वचनों से मुझे आश्वासन देने लगे और बोले बेटा मनुष्य संसार में दूसरों की भलाई करने के लिये ही पैदा हुआ है। मुझे बताओ मैं भरसक कुछ उठा न रक्खूंगा। मैंने आवेश में उनके चरण पकड़ लिये और टूटे फूटे शब्दों में कहा—स्वामिन् क्या आप से भी कुछ छिपा हुआ है। इस पर वे मुस्कराये और मुझे एक प्रयोग बतलाने की कृपा की जिसके सेवन से मैं बीस दिन में ही प्रमेह जरियान जैसे भयानक रोग से बिलकुल मुक्त हो गया। उस समय से आज तक मैं बिलकुल निरोग्य हूं और परमात्मा की असीम अनुकम्पा से मेरे तीन बच्चे खेलते खाते एवं अत्यन्त हृष्ट पुष्ट हैं। प्यारे पाठको! महात्मा जी के आदेश से अपने बच्चों के हित के लिये अपना कर्तव्य समझ कर जन सर्वहित के नाते से वह प्रयोग ज्यों का त्यों नीचे देता हूं:—

त्रिफलाका चूर्ण ५ तोला, त्रिकुटा चूर्ण ५ तोला सूर्यतापी शिलाजीत ५ तोला, बंग भस्म ६ माशा, असली केशर ३ माशा, अकरकरा ६ माशा, नैपाली कस्तूरी ६ माशा, इन सब औषधियों को कूट छानकर खरल में डाल कर ऊपर से शीतलचीनी का तेल २० बूंद और चन्दन का तेल २० बूंद बिहरोजा का तेल २० बूंद मिलावे। इसके बाद ताजी ब्राह्मी बूटी के अर्क में बारह घंटा घोट कर झरबेरी के बेर के बराबर गोलियां बनाकर छाया में सुखालें। बस औषधि तैयार हो गई।

सेवन विधि—एक गोली प्रातः एक गोली सायंकाल गाय के पावभर गुनगुने दूध में एक तोला शक्कर मिलाकर सेवन करें। और गर्म और गंदी चीजों का परहेज रक्खे।

हमने अपने उन बन्धुओं को जिन्हें असली चीजें नहीं मिलती अथवा इसे स्वयं बनाने में किसी भी प्रकार असमर्थ हैं अपने आप तैयार करके दामके दाममें बेचनेकी व्यवस्थाभी की है। यह औषधि वीर्य का पतलापन बीसों प्रकार के प्रमेह पेशाब के साथ चूने की तरह वीर्य का जाना पाखाने के समय धातु का जाना स्वप्नदोष सुजाक सुस्ती कमजोरी नामर्दी जवानो में बुढ़ापे की सी हालत हो जाना असली ताकत की कमी स्मरणशक्ति में कमजोरी पड़ जाना वगैरह दूर करके अत्यन्त ताकत देती है। ४० गोली के पैकिट का २।।) ८० गोली पूरी खुराक का ४।।) ३ पैकिट का ६) छः रुपया डाकखर्च ३ पैकट तक ।।)।

दवा मंगाने का पता—बाबू श्यामलाल जी रईस प्रेमबटी आफिस नं० १२६ कानपुर।

सङ्गीत सम्बन्धी सर्वोत्तम पुस्तकें ?

सङ्गीत प्रेमियो !

आपकी सेवा के लिए

कार्यालय ने दिल से ठान ली है

'बांसुरी मास्टर'

बिना उस्ताद के बांसुरी बजाना सिखाने वाली

"अनौखी पुस्तक"

जिससे आप खूब अच्छी तरह बांसुरी बजाना सीख कर, अपने मित्रों का व अपना हृदय प्रसन्न कर सकते हैं। इस पुस्तक ने सैकड़ों विद्यार्थियों को बांसुरी मास्टर बना दिया ? थोड़े से गीत भी संग्रह कर के रखदिये हैं । ऐसी सजिल्द, सुन्दर व पुस्तक का मूल्य केवल ।=) डा० म० ।)

'म्यूज़िक टीचर'

'एक प्रमाणिक पुस्तक'

जिसकी सहायता से आप घर बैठे हारमोनियम, तबला, बांसुरी व वायोलिन बजाना सीख सकते हैं। इस पुस्तक ने मास्टरों की आवश्यकता दूर करदी है। आप बड़ी सुगमता से हर प्रकार के गीत, गज़ल व थियेट्रीकल चीजों से लेकर राग आदि इससे बजाना सीख सकते हैं।

बड़ी अनौखी पुस्तक है। मूल्य सजिल्द का १) मात्र डा० म० ।=)

इस पुस्तक में संगीतज्ञों के लिये विशेष मसाला नहीं है, किन्तु यह पुस्तक नये सीखने वालों के लिये तो बड़ी अनौखी चीज है ।

पता–संगीत कला भवन, लश्कर ग्वालियर

रामलीला और स्वांग नाटकों के लिये

❀ शृङ्गार और बाल सामान ❀
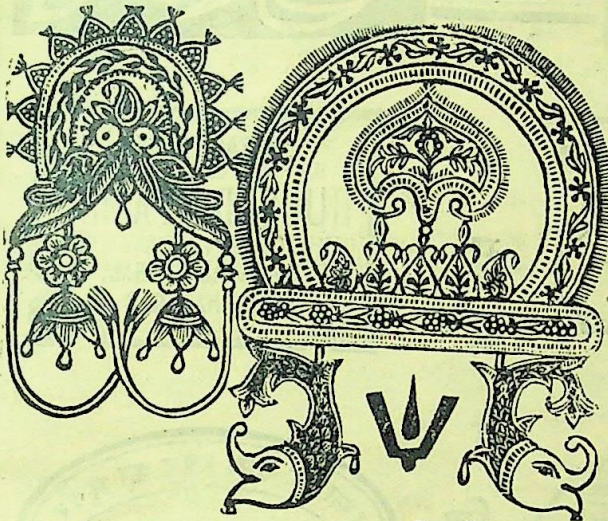
रामलीला का शृंगार

एक सैट में यह सामान रहता है।

२ किरीट, २ मुकुट, २ जोड़ी कुण्डल, २ तिलक, २ तेजकिरण १ नथ यानी बेसर, १ चन्द्रिका १ जोड़ी झूमका, ३ बुलाक, ३ फूल माला।

कीमतें इस प्रकार हैं।

नं० १--१२), यही सच्चे काम का ४०) नं० २--१५), यही सच्चे काम का ५०) नं० ३-२०), यही सच्चे काम का ६०) रु०, नं० ४-२०), यही सच्चे काम का ३५) रु० नं० ५ सस्ता सैट जो मामूली मखमल या साटिन के ऊपर बना हुआ होता है और जिसमें तेज किरण फूलमाला बुलाक और तिलक के सिवा बाकी सब चीजें रहती हैं। कीमत ७) रु०

मूंछ नं० ८
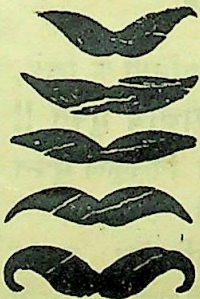
काली, लाल, सफेद, चाहे जिस रङ्गकी और चाहे जिस फैशनकी लीजिये, दाम फी मूंछ =) सस्ती चमरके बाल की -) आना यही बढ़िया कपड़े पर सिली हुई ।=)

गलगुच्छा नम्बर ८
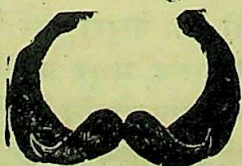
यह गलगुच्छे चित्र के समान बने हुए हैं

दाम काले ।-)

दाम सफेद ।-)

दाम लाल ।-)

जटा नं० २०

यह जटा मामूली बालों की बनी हुई हैं। शिवजी, मुनी, महात्मा आदि के पार्ट में काम आती हैं।

दाम काली १) रु०

दाम लाल १) रु०

पूरा हाल जानने के लिये शृङ्गार का सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये।

मिलने का पता—सुख सँचारक कम्पनी लिमिटेड मथुरा।

नमूने देखिये

PLEASE HAVE
BETTER & CHEAPER
RUBBER STAMPS
OF MOST DECENT DESIGNS FROM
VIDYASAGAR SHARMA
NAJHAI-HATHRAS
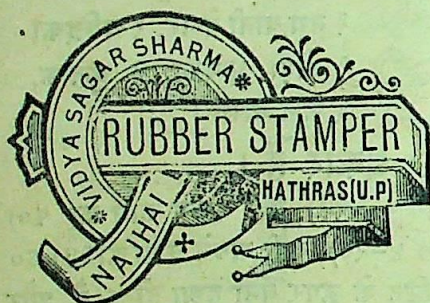
आवश्यकता है

मुझे एक ऐसे मास्टर की आवश्यकता है जो कि एम०ए० या बी०ए० और कुछ सङ्गीत से भी परिचित हो, वह अपने वेतन वगैरह के लिये निम्न लिखित पते से पत्र व्यवहार करें कि कि हम कम से कम इतने रुपया माहवार पर रह सकते हैं।

पत्रव्यवहार का पता—
मास्टर प्रीतमसिंह,
स्टेट-बिजना,
बालामऊ रानीपुर (झांसी)

मुफ्त

सिर्फ सङ्गीत कला के प्रेमियों के लिये,
धोखे से बचो ! परीक्षार्थ मुफ्त !!
(सिर्फ १०,००० शीशी बिलकुल मुफ्त तत्पश्चात की० १)
फिल्म संसार में अद्वितीय गायक 'सहगल' की लोकप्रियता का क्या रहस्य है ? उसकी मधुर स्वर लहरी जो गांधारी के फल स्वरूप आपको भी सुलभ हो सकती है। बेसुरी और बैठी हुई आवज़ को बुलन्द, मधुर एवं सुरीली बनाने की एकमात्र औषधि है। सिर्फ पैकिंग व पोस्टेज के लिये ।।) का मनीआर्डर या स्टाम्प भेजिये।

डाक्टर-बी०पी०वासिष्ठ, लखपती स्ट्रीट
हाथरस-यू०पी०।